VISION IAS
INSPIRING INNOVATION

राजव्यवस्था

Classroom Study Material 2019

(September 2018 to June 2019)

www.visionias.in
+91 8468022022

DELHI | JAIPUR | PUNE | HYDERABAD | AHMEDABAD | LUCKNOW

विषय सूची

1. केंद्र-राज्य संबंध (Centre-State Relations)....4

1.1. नीति आयोग....4

1.2. जम्मू और कश्मीर का विशेष दर्जा....7

1.2.1. अनुच्छेद 35A....9

1.3. छठी अनुसूची....10

1.4. छोटे राज्यों की मांग....12

1.5. राज्य विधानसभाओं के विघटन में राज्यपाल की भूमिका....15

1.6. समवर्ती सूची को समाप्त करने की मांग....16

1.7. केंद्र प्रायोजित योजनाओं का युक्तियुक्तकरण....18

2. संवैधानिक उपबंधो से संबंधित मुद्दे (Issues Related to Constitutional Provisions)....21

2.1. आधार की संवैधानिक वैधता....21

2.2. आरक्षण....23

2.2.1. पदोन्नति में आरक्षण....24

2.2.2. आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों हेतु आरक्षण....26

2.3. नागरिकता संशोधन विधेयक - 2016....28

2.4. राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम....30

2.5. राजद्रोह....31

3. संसद/राज्य विधायिका एवं कार्यपालिका की कार्यप्रणाली (Functioning of Parliament/State Legislature and Executive)....34

3.1. विशेषाधिकारों का उल्लंघन....34

3.2. राज्य सभा की उत्पादकता में ह्रास....36

3.3. मंत्रिमंडलीय समितियाँ....38

4. संवैधानिक विनियामक एवं अन्य निकाय (Constitutional Regulatory and other Bodies)....40

4.1. भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक....40

4.1.1. रिडैक्टिव प्राइसिंग ऑडिट....42

4.2. लोकपाल....43

4.3. केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो....45

4.4. RBI की स्वतंत्रता बनाम जवाबदेहिता....47

VISION IAS

5. भारत में चुनाव (Elections in India)....49

5.1. चुनाव सुधार....49

5.1.1. निर्वाचन आयोग की भूमिका....49

5.1.2. उपर्युक्त में से कोई भी नहीं (NOTA)....51

5.2. स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव संबंधी मुद्दे....53

5.2.1. आदर्श आचार संहिता....53

5.2.2. इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन....55

5.3. जन प्रतिनिधित्व अधिनियम से संबंधित मुद्दे....57

5.3.1. चुनावों के दौरान पेड न्यूज़....57

5.3.2. राजनीति का अपराधीकरण....59

5.4. चुनावी वित्तपोषण संबंधी सुधार....61

5.4.1. चुनावी बॉण्ड....63

5.5. चुनावों में सोशल मीडिया का स्व-विनियमन....65

5.6. भारत में चुनावों की बदलती प्रकृति....66

5.7. परिसीमन से संबंधित मुद्दे....67

5.8. वोट-बैंक की राजनीति....69

5.9. भारतीय राजनीति का नारीकरण (महिलाओं की बढ़ती भागीदारी)....70

6. न्यायपालिका (Judiciary)....73

6.1. न्यायिक जवाबदेहिता....73

6.1.1. न्यायाधीश एवं सेवानिवृत्ति-पश्चात का पद....76

6.2. न्यायपालिका से संबंधित मुद्दे....77

6.2.1. न्यायिक मामलों की लंबितता....77

6.2.2. अधीनस्थ न्यायालयों में रिक्तियां....80

6.3. अधिकरण....82

6.4. फास्ट ट्रैक कोर्ट....84

7. पारदर्शिता एवं जवाबदेही (Transparency and Accountability)....86

7.1. सूचना के अधिकार से संबंधित मुद्दे....86

7.1.1. सूचना के अधिकार के दायरे के अंतर्गत राजनीतिक दल....86

7.1.2. सूचना का अधिकार (RTI) अधिनियम की धारा 4....88

7.2. शासकीय गुप्त बात अधिनियम....89

8. अभिशासन (Governance)....92

8.1. पार्श्व प्रवेश....92

VISION IAS

8.2. गवाह संरक्षण योजना 93
8.3. "बियॉन्ड फेक न्यूज़" परियोजना 96
8.4. IT नियमों का मसौदा 97
8.5. भारत में ट्रेड यूनियन......98
8.6. भारत में सहकारी समितियां......100

9. स्थानीय शासन (Local Governance) 103

9.1. ग्राम पंचायत विकास योजना 103
9.2. स्थानीय निकायों के चुनावों हेतु शैक्षणिक मानदंड......104

VISION IAS

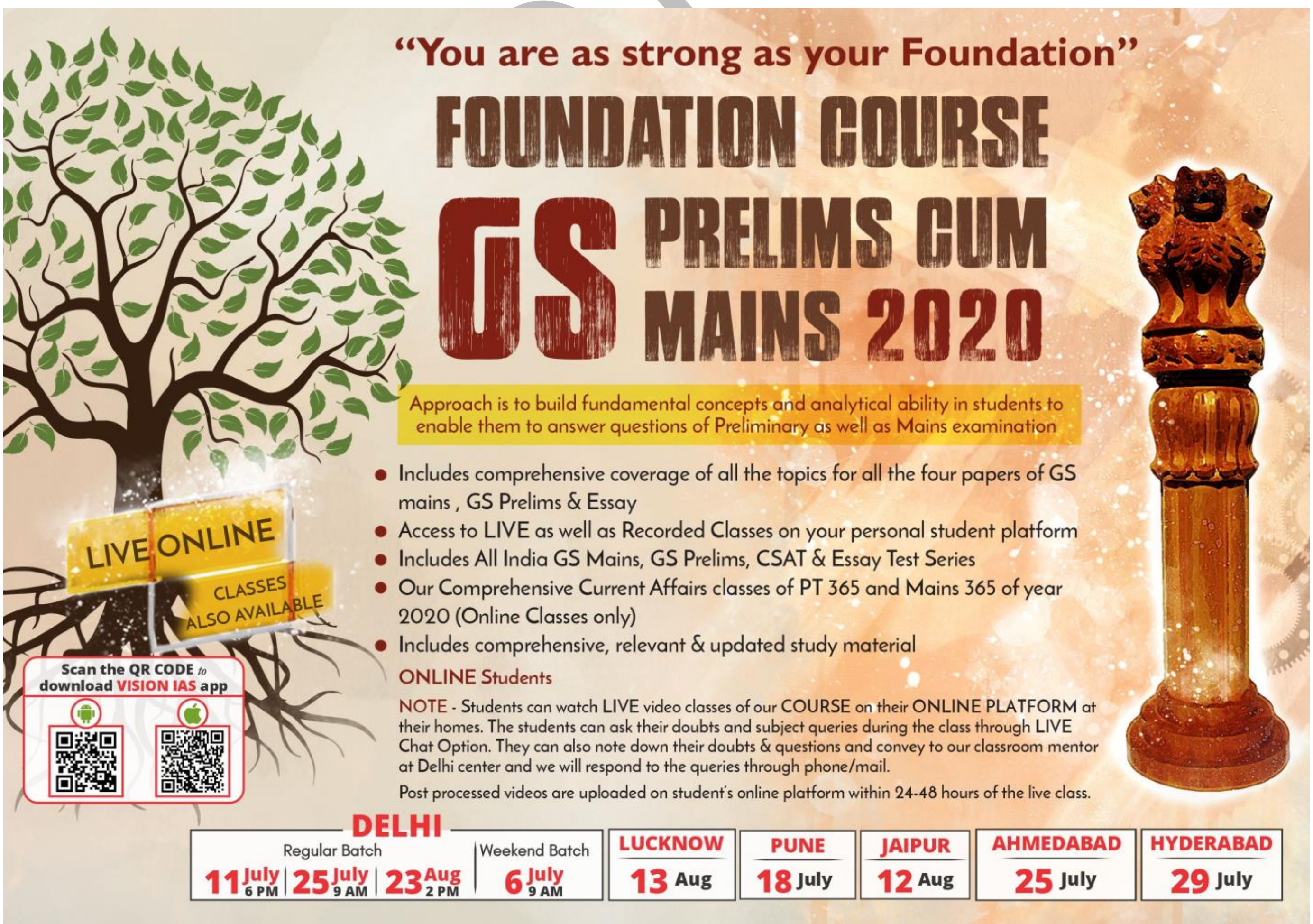

1. केंद्र-राज्य संबंध (Centre-State Relations)

1.1. नीति आयोग

(NITI Aayog)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, केंद्र सरकार द्वारा **नीति आयोग (NITI Aayog) का पुनर्गठन** किया गया। राजीव कुमार को इसके उपाध्यक्ष के रूप में पुनर्नामित कर, गृह मंत्री अमित शाह को इसका पदेन सदस्य (ex-officio member) नियुक्त किया गया है।

पृष्ठभूमि

- वर्ष 1950 में **योजना आयोग (Planning Commission)** की स्थापना आरम्भ में **देश में निवेश गतिविधियों के निर्देशन हेतु एक अभिकरण के रूप में** की गई थी।
- पूर्ववर्ती योजना आयोग द्वारा **मुख्यतया निम्नलिखित दो कर्तव्यों का निष्पादन किया जाता था:**
    - **पंचवर्षीय योजनाओं का कार्यान्वयन; तथा**
    - **राज्यों को वित्त प्रदान करना।**
- **योजना आयोग को समाप्त करने के दो प्रमुख कारण थे:**
    - प्रथम, यह धारणा कि राष्ट्रीय स्तर पर समष्टि अर्थशास्त्र (macro-economic) के प्रबंधन की नवीन वास्तविकताओं का अनुकरण करने में यह सक्षम नहीं था।
    - द्वितीय, यह संघ और राज्यों के मध्य राजकोषीय संबंधों को सुदृढ़ करने में सहायक नहीं था।
- योजना आयोग **देश में आर्थिक विकास के एक समावेशी और न्यायोचित मार्ग की आवश्यकता के अनुरुप नहीं था।**
- इस संदर्भ में, वर्ष 2015 में **राष्ट्रीय भारत परिवर्तन संस्था (National Institution for Transforming India: NITI Aayog)** का गठन **सरकार के एक थिंक टैंक (विचार मंच) और परामर्शी निकाय** के रुप में किया गया।

नीति आयोग की प्रासंगिकता

- **प्रतिस्पर्धात्मक संघवाद:** नीति आयोग की विभिन्न रिपोर्ट्स (जैसे- स्वस्थ राज्य, प्रगतिशील भारत) प्रतिस्पर्धात्मक संघवाद की भावना को प्रोत्साहित करने हेतु विविध कार्यक्षेत्रों में राज्यों को प्रदर्शन आधारित रैंकिंग प्रदान करती हैं। इससे भिन्न-भिन्न क्षेत्रों में विभिन्न राज्यों में सर्वोत्तम पद्धतियों की पहचान करने में सहायता प्राप्त होती है तथा इन पद्धतियों को अन्य राज्यों में भी क्रियान्वित करने का प्रयास किया जाता है।
- **सहकारी संघवाद:** नीति आयोग की संरचना के कारण, इस निकाय में राज्यों को बेहतर प्रतिनिधित्व प्रदान किया गया है। यह संबंधित मंत्रालयों के साथ प्रत्यक्ष संवाद स्थापित करने में सहायता प्रदान करता है। इसके कारण अपेक्षाकृत लघु अवधि में मुद्दों के समाधान में भी सहायता प्राप्त होती है।
- **अधिक जवाबदेही:** नीति आयोग द्वारा **विकास अनुवीक्षण और मूल्यांकन कार्यालय (Development Monitoring and Evaluation Office: DMEO)** की स्थापना की गई है, जो रियल टाइम के आधार पर विभिन्न मंत्रालयों के प्रदर्शनों से संबंधित आंकड़ों को संग्रहित करता है। इन संग्रहित आंकड़ों का उपयोग तत्पश्चात जवाबदेही को सुनिश्चित करने तथा प्रदर्शन में सुधार करने हेतु नीति-निर्माण के उच्चतम स्तरों पर किया जाता है।
    - उल्लेखनीय है कि योजना आयोग द्वारा भारत में **12 पंचवर्षीय योजनाएं कार्यान्वित की गई।** सामान्यतया **इन योजनाओं का मूल्यांकन इनकी समयावधि की समाप्ति के पश्चात् किया जाता था।** इस प्रकार यहाँ वास्तविक जवाबदेही के निर्धारण का अभाव था।
- **नवाचारी विचारों का थिंक टैंक:** नीति आयोग की कल्पना एक महत्वपूर्ण संस्था के रुप में की गई जिसके माध्यम से सभी संभावित स्रोतों, यथा- उद्योगों, शैक्षणिक समुदाय, नागरिक समाज या विदेशी विशेषज्ञों से नवीन एवं नवाचारी विचारों को प्राप्त किया जाता है तथा सरकारी तंत्र के माध्यम से इन विचारों का कार्यान्वयन किया जाता है।
    - आयोग नवीन विचारों के संग्रहण तथा **केंद्र एवं राज्य सरकारों के साथ इनके साझाकरण के द्वारा** राज्यों को इन नवीन विचारों को अपनाने हेतु प्रोत्साहित करता है।
    - इस प्रकार यह लोक सेवाओं की बेहतर आपूर्ति हेतु **शासन में सुधार करने तथा नवाचारी विचारों के कार्यान्वयन** में सहायता करता है।

VISION IAS

- **समस्या समाधान हेतु एक साझा मंच:** विभिन्न क्षेत्रकों, राज्यों इत्यादि द्वारा सामना किए जाने वाले समान मुद्दों हेतु एक साझा मंच होने के कारण यह इन मुद्दों पर चर्चा करने के लिए एक अभिसरण केंद्र और उपयुक्त केंद्रबिंदु के रुप में कार्य करता है।

नीति आयोग से संबंधित चिंताएं

- **सरकार और निजी क्षेत्र के प्रति पक्षपात:** नवीन विचारों के सृजन के साथ ही, नीति आयोग को सत्तारुढ़ सरकार से यथोचित बौद्धिक दूरी बनाए रखनी चाहिए। हालांकि, सरकारी परियोजनाओं के संदर्भ में नीति आयोग की गैर-आलोचनात्मक स्थिति के कारण चिंताएं उत्पन्न होती हैं।
  - भारतीय अर्थव्यवस्था के रक्षक के रुप में लगभग प्रत्येक स्तर पर निजी क्षेत्र की सहभागिता का समर्थन करने तथा सार्वजनिक क्षेत्र के प्रति नीति आयोग के उदासीन व्यवहार के संदर्भ में भी चिंताएं व्यक्त की गई हैं।
- **वित्तीय बाधाएं:** नीति आयोग के पास अपने विवेकानुसार राज्यों को निधि प्रदान करने की शक्ति प्राप्त नहीं है। यह स्थिति आयोग को "परिवर्तनकारी" हस्तक्षेप करने की क्षमता से वंचित करती है।
  - इसके विपरीत पूर्ववर्ती योजना आयोग को विवेकानुसार कार्य करने की सुविधा प्राप्त थी, क्योंकि इसे वित्त के साथ-साथ एजेंडे पर भी नियंत्रण प्राप्त था।
- **केवल अनुशंसात्मक निकाय:** यह एक परामर्शी निकाय के रुप में कार्य करता है जो अपने विचारों की प्रवर्तनीयता को सुनिश्चित किए बिना विभिन्न मुद्दों पर सरकार को केवल परामर्श प्रदान करता है।
- **शक्ति के विकेंद्रीकरण का अभाव:** ग्राम स्तर पर विश्वसनीय योजनाओं के निर्माण तथा इनका सरकार के उच्चतर स्तरों तक उत्तरोत्तर समेकन करने हेतु तंत्रों का विकास करना नीति आयोग के परिकल्पित लक्ष्यों में से एक है। इस परिकल्पित लक्ष्य की न के बराबर प्राप्ति की जा सकी है।
- **रुपांतरणकारी परिवर्तनों हेतु प्राप्त अवसरों से लाभान्वित होने में विफलता:** यह निकाय गुणात्मक परिवर्तनों को प्राप्त करने हेतु निम्नलिखित अवसरों से लाभान्वित होने में विफल रहा है:
  - उदाहरणार्थ, 14वें वित्त आयोग की अनुशंसाओं के आलोक में केंद्र प्रायोजित योजनाओं (CSSs) को पुनर्संरचित किया गया। योजना आयोग की समाप्ति के समय विभिन्न योजनाओं के डिजाइन और कार्यान्वयन में सुधार करने का संकल्प किया गया, लेकिन इस निकाय द्वारा केवल वित्तपोषण के संदर्भ में राज्यों पर अधिक उत्तरदायित्व का अधिरोपण करने जैसे परिवर्तन किए गए।
  - इस संदर्भ में एक अन्य अवसर तब उत्पन्न हुआ जब योजनागत तथा गैर-योजनागत व्ययों के मध्य विभेद को समाप्त कर दिया गया था। उस समय, आयोग के पास पूँजीगत और राजस्व व्यय संबंधी व्यापक दृष्टिकोण (क्षेत्रवार) अपनाने हेतु अवसर विद्यमान था। किंतु आयोग द्वारा इस अवसर का लाभ नहीं उठाया गया।
- **राज्यों को अपर्याप्त समर्थन:** योजना आयोग (वर्तमान नीति आयोग) की कार्य-प्रणाली के संदर्भ में राज्यों की प्रमुख शिकायतों का अभी तक समाधान नहीं किया गया है। शिकायतें मुख्यतया इस अवधारणा पर आधारित हैं कि केंद्र द्वारा राज्यों के उत्तरदायित्वों का अतिक्रमण किया जा रहा है तथा वह प्रशासन में ***वन साइज़ फिट फॉर ऑल*** दृष्टिकोण का निरंतर समर्थन कर रहा है।

नीति आयोग को अधिक सुदृढ़ बनाने के उपाय

- **वित्त आयोग के साथ संतुलन:** नीति आयोग को वित्त-पोषणकर्ता की भूमिका प्रदान की जानी चाहिए ताकि यह राज्यों के मध्य विकास संबंधी चिंताओं का समाधान करने में सहायक हो सके।
  - इसके अतिरिक्त, **वित्त आयोग को एक स्थायी निकाय में परिवर्तित किया जा सकता** है। इससे यह प्रत्येक पांच वर्षों में केवल एक कर साझाकरण सूत्र प्रदान करने के बजाय राजकोषीय अंतरण प्रणालियों का पर्यवेक्षण करने में सक्षम होगा।
- **जवाबदेही में वृद्धि:** नौकरशाही को सामान्यज्ञ से विशेषज्ञ में परिवर्तित करने की आवश्यकता है। पुनः इसकी जवाबदेही आगतों और व्यय की गई निधियों के बजाय प्राप्त परिणामों पर आधारित होनी चाहिए। नीति आयोग को इस संबंध में विवरण प्रदान करने की आवश्यकता है कि इन सुधारों को किस प्रकार कार्यान्वित किया जाएगा।
- **अधिक निधि की व्यवस्था:** सहकारी संघवाद के प्रवर्तन के संदर्भ में, नीति आयोग 2.0 को पिछड़े राज्यों में तीव्र संवृद्धि को प्रोत्साहित करने तथा ऐतिहासिक रुप से अवसंरचना संबंधी अभाव की पूर्ति करने हेतु महत्वपूर्ण संसाधनों (GDP के लगभग 1% से 2% तक) को प्राप्त करना चाहिए। इस प्रकार विकासात्मक असंतुलन को कम करने के प्रयास करने चाहिए।
- **अधिक हितधारकों को शामिल करना:** इसे अपने विशेषज्ञ सदस्यों के माध्यम से निर्धारित क्षेत्रों पर अनुसंधान आगतों को प्राप्त करना चाहिए तथा अनुसंधान के अनुभवजन्य महत्व पर आधारित अनुशंसाओं का संकलन करना चाहिए। इससे समय, लागत और प्रयासों में कमी आएगी तथा सरकार हेतु समयबद्ध नीतिगत इनपुट्स में वृद्धि होगी।

VISION IAS

नीति आयोग का प्रदर्शन

- **विभिन्न पहलों और कार्यक्रमों का शुभारंभ**
  - महत्वपूर्ण क्षेत्रों में परिणामों से संबंधित प्रदर्शन का मापन करना तथा राज्यों को रैंकिंग प्रदान करना।
  - सस्टेनेबल एक्शन फॉर ट्रांसफार्मिंग ह्यूमन कैपिटल (SATH/साथ)।
  - एक भारत श्रेष्ठ भारत।
  - अवसंरचना के विकास हेतु राज्यों के लिए विकास समर्थित सेवाएं (Development Support Services to States: DSSS)।
  - स्वास्थ्य क्षेत्र में सार्वजनिक-निजी भागीदारी।
  - केन्द्रीय मंत्रालयों के साथ राज्यों के लंबित विवादों का समाधान।
  - 'आकांक्षी जिला कार्यक्रम (ADP)': 'सबका साथ, सबका विकास' विज़न को क्रियान्वित करना तथा यह सुनिश्चित करना कि भारत की विकास प्रक्रिया समावेशी बनी रहे।
- **दीर्घकालिक दृष्टिकोण के साथ प्रमाण आधारित नीति-निर्माण को सक्षम बनाना तथा उत्पादक क्षमता में वृद्धि करना**
  - तीन वर्षीय राष्ट्रीय कार्य एजेंडा तथा 'अभिनव भारत @75 के लिए कार्यनीति' (Strategy for New India @75) जो भारत की परिवर्तित वास्तविकताओं के साथ विकासात्मक रणनीति के बेहतर संरेखण को प्रोत्साहित करेंगे।
  - केन्द्रीय सार्वजनिक क्षेत्रक उद्यमों (CPSEs) में सुधार।
  - संतुलित क्षेत्रीय विकास।
    - पूर्वोत्तर को विकास सहायता।
    - पूर्वोत्तर के लिए नीति फोरम।
  - स्वास्थ्य एवं पोषण संबंधी क्षेत्रों में सुधार।
    - पोषण (POSHAN) अभियान का शुभारंभ।
    - राष्ट्रीय पोषण रणनीति का विकास।
    - औषध (फार्मास्यूटिकल्स) क्षेत्र में सुधार।
  - ऊर्जा क्षेत्र में सुधार।
    - नीति आयोग द्वारा 'इंडियाज रिन्यूएबल इलेक्ट्रिसिटी रोडमैप 2030' संबंधी एक रिपोर्ट को तैयार और प्रकाशित किया गया है।
    - राष्ट्रीय खनिज नीति, 2018 में संशोधन हेतु रोडमैप।
- **राष्ट्रीय और अंतर्राष्ट्रीय संगठनों के साथ साझेदारी तथा निर्णय-निर्माण में हितधारकों के परामर्शों को प्रोत्साहित करना।**
- **उद्यमशीलता और नवाचारी पारितंत्र को बढ़ावा देना।**
  - **अटल इनोवेशन मिशन** ने भारत में नवाचारी पारितंत्र में सुधार करने हेतु पहले से ही सराहनीय कार्य किया है। उल्लेखनीय है कि अटल इनोवेशन मिशन के अंतर्गत भारत में अटल टिंकरिंग प्रयोगशालाओं का निर्माण किया गया है।
  - वैश्विक उद्यमिता शिखर सम्मेलन, 2017: वुमेन फर्स्ट, प्रॉस्पेरिटी फॉर ऑल'
  - महिला उद्यमिता मंच (WEP)
- **कृत्रिम बुद्धिमत्ता, ब्लॉकचेन, मेथनॉल इकॉनमी जैसी अग्रणी प्रौद्योगिकियों के अंगीकरण को प्रोत्साहित करना।**

नीति आयोग में निम्नलिखित शामिल हैं (आयोग की संरचना)

- अध्यक्ष (प्रधानमंत्री);
- उपाध्यक्ष और मुख्य कार्यकारी अधिकारी (CEO);
- पूर्णकालिक सदस्य (संख्या अनिर्दिष्ट);
- अग्रणी विश्वविद्यालयों और अनुसंधान संगठनों से अधिकतम दो पूर्णकालिक सदस्य;
- पदेन सदस्य के रुप में चार केंद्रीय मंत्री;
- शासी परिषद (गवर्निंग काउंसिल), जिसमें सभी राज्यों और विधानमंडलों वाले केंद्र शासित प्रदेशों के मुख्यमंत्री तथा अन्य संघ

VISION IAS

शासित प्रदेशों के उप-राज्यपाल शामिल होंगें;

- क्षेत्रीय परिषदें, जिनका गठन एक से अधिक राज्यों या क्षेत्रों को प्रभावित करने वाले विशिष्ट मुद्दों तथा आकस्मिकताओं के समाधान हेतु किया जाएगा; तथा
- विशेष आमंत्रित सदस्य के रुप में संबंधित क्षेत्र की प्रासंगिक जानकारी रखने वाले एक्सपर्ट, स्पेशलिस्ट और प्रैक्टिशनर।

उद्देश्य

- राष्ट्रीय उद्देश्यों को दृष्टिगत रखते हुए राज्यों की सक्रिय भागीदारी के साथ राष्ट्रीय विकास प्राथमिकताओं, क्षेत्रों और रणनीतियों से संबंधित एक साझा दृष्टिकोण विकसित करना।

आयोग के कार्य

- शासन प्रकिया में एक महत्वपूर्ण निर्देशात्मक और रणनीतिक इनपुट प्रदान करना;
- ग्राम स्तर पर विश्वसनीय योजनाओं के निर्माण तथा इनका सरकार के उच्चतर स्तरों तक उत्तरोत्तर समेकन करने हेतु तंत्रों का विकास करना;
- आयोग यह सुनिश्चित करेगा कि उसे सौंपे गए विशिष्ट क्षेत्रों संबंधी आर्थिक रणनीति और नीति में राष्ट्रीय सुरक्षा के हितों को समाहित किया गया है।
- समाज के उन वर्गों पर विशेष ध्यान केन्द्रित करना जिन्हें आर्थिक प्रगति के पर्याप्त लाभ प्राप्त नहीं हुए हैं।

सहकारी संघवाद के प्रति प्रतिबद्धता के माध्यम से

- नागरिक सहभागिता को प्रोत्साहन;
- अवसरों तक समतावादी पहुंच;
- सहभागितापूर्ण एवं स्वीकार्य शासन; तथा
- प्रौद्योगिकी के प्रयोग को बढ़ावा देना।

1.2. जम्मू और कश्मीर का विशेष दर्जा

(Special Status of Jammu and Kashmir)

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

- 15 अगस्त 1947 को जम्मू और कश्मीर (J&K) रियासत के स्वतंत्र होने पर, उसके शासक महाराजा हरि सिंह ने भारत या पाकिस्तान में सम्मिलित न होकर स्वतंत्र रहने का निर्णय लिया।
- हालांकि, 20 अक्टूबर 1947 को रियासत की सीमाओं पर पाकिस्तानी सेना द्वारा समर्थित घुसपैठियों द्वारा हमला कर दिए जाने पर महाराजा हरि सिंह ने कश्मीर का भारत राज्य में विलय करने का निर्णय लिया और '**भारत में जम्मू और कश्मीर के इंस्ट्रूमेंट ऑफ़ एक्सेशन (विलय-पत्र)**' पर हस्ताक्षर कर दिए।
- इसके अंतर्गत जम्मू और कश्मीर रियासत ने केवल तीन विषय (रक्षा, विदेश मामले और संचार) भारत के प्रभुत्वाधीन समर्पित किए। उस समय भारत सरकार ने जम्मू और कश्मीर रियासत का आंतरिक संविधान निर्धारित करने के लिए उनकी स्वयं की संविधान सभा हेतु प्रतिबद्धता जताई थी।
- इस प्रतिबद्धता के अनुरूप, भारत के संविधान में अनुच्छेद 370 को समाविष्ट किया गया था।

अनुच्छेद 370 क्या है?

- **भारतीय संविधान के भाग XXI** के अंतर्गत जम्मू और कश्मीर राज्य को अनुच्छेद 370 के तहत विशेष दर्जा दिया गया। संविधान का यह भाग **"अस्थायी, संक्रमणकालीन और विशेष प्रावधानों"** से संबंधित है।
- अनुच्छेद 370 के अनुसार रक्षा, विदेश मामलों, वित्त और संचार को छोड़कर, संसद को अन्य सभी कानूनों को लागू करने के लिए राज्य सरकार की सहमति की आवश्यकता होती है।

इसे कैसे हटाया जा सकता है?

- अनुच्छेद 370 की धारा 3 के अनुसार, **"राष्ट्रपति, सार्वजनिक अधिसूचना द्वारा, यह घोषणा कर सकता है कि यह अनुच्छेद क्रियाशील नहीं रहेगा, बशर्ते कि राष्ट्रपति को राज्य (कश्मीर) की संविधान सभा की अनुशंसा प्राप्त हो।"**
- चूंकि जनवरी 1957 में पिछली संविधान सभा को इसके द्वारा राज्य का संविधान तैयार करने का काम पूरा कर लिए जाने के बाद भंग कर दिया गया था, इसलिए यदि संसद अनुच्छेद 370 को हटाने के लिए सहमत हो जाती है, तो नई संविधान सभा का गठन करना होगा।

अनुच्छेद 370 को क्यों हटाया जाना चाहिए, इसके पक्ष में तर्क

- **एकीकरण में बाधा:** अनुच्छेद 370 अनिवासियों को राज्य में अचल के साथ-साथ चल संपत्ति खरीदने, कोई भी उद्योग या विनिर्माण इकाई स्थापित करने से रोकता है।
- **निवेश के प्रवाह को बाधित करता है:** चूंकि अनुच्छेद 370 बड़े व्यापारिक घरानों से निवेश के प्रवाह को आकर्षित करने में बाधा के रूप में कार्य करता है, इस प्रकार यह कश्मीर के युवाओं के लिए रोजगार के अवसर सीमित करता है।
- जम्मू-कश्मीर में **बेरोजगारी और गरीबी** ने उग्रवाद को बढ़ावा दिया है।
- संविधान के अनुसार यह एक **अस्थायी** प्रावधान है और स्वतंत्रता के बाद से सात दशक बीत चुके हैं।
- हालांकि **संविधान सभा** का अब अस्तित्व नहीं है, लेकिन इसका उत्तराधिकारी निकाय अर्थात् J&K की सरकार या विधानसभा सहमति दे सकती है।

अनुच्छेद 370 को क्यों नहीं हटाया जाना चाहिए, इसके विपक्ष में तर्क

- **SC का निर्णय:**
    - 2018 में सर्वोच्च न्यायालय (SC) में एक याचिका दायर की गई थी जिसमें इस बात की घोषणा की मांग की गई थी कि अनुच्छेद 370 एक अस्थायी प्रावधान है जो जम्मू-कश्मीर संविधान सभा के विघटन के साथ ही कालातीत हो गया है।
    - इसमें SC ने यह माना था कि जम्मू और कश्मीर को विशेष दर्जा देने वाले संविधान का अनुच्छेद 370 **अस्थायी प्रावधान नहीं** है तथा वर्षों से इसके अस्तित्व के माध्यम से इसने स्थायी दर्जा प्राप्त कर लिया है, जिससे इसका निरसन असंभव हो जाता है।
- **अनुच्छेद 370 का प्रभावी क्षरण:** वर्षों से राष्ट्रपति के आदेशों के माध्यम से भारतीय संविधान के प्रावधानों का जम्मू-कश्मीर तक विस्तार किया गया है। उदाहरण के लिए, संघ सूची में 97 प्रविष्टियों में से 94, 395 अनुच्छेदों में से 260 का राज्य में विस्तार किया जा चुका है। इस प्रकार प्रभावी रूप से धारा 370 का क्षरण हो चुका है।
- **अलगाव की आशंका:** अनुच्छेद 370 इसलिए लाया गया था क्योंकि लोग अपनी पहचान को लेकर अत्यधिक सुभेद्य और भविष्य को लेकर असुरक्षित थे। जम्मू और कश्मीर के वर्तमान संदर्भ में इसके निरसन से जम्मू और कश्मीर के लोगों में अलगाव की भावना का प्रसार होगा।
- **संघ और राज्य के बीच की कड़ी:** अनुच्छेद 370 भारतीय संघ और जम्मू-कश्मीर के बीच प्रभावी कड़ी के रूप में कार्य करने वाला स्तंभ रहा है। इसका निरसन किए जाने पर संबंध अनिश्चित हो सकते हैं, परिणामस्वरूप वर्षों से राष्ट्रपति के आदेशों के माध्यम से हासिल की गई प्रगति नकारात्मक रूप से प्रभावित हो सकती है।

अनुच्छेद 370 के अंतर्गत अन्य महत्वपूर्ण प्रावधान

- **स्वयं का संविधान:** जम्मू और कश्मीर राज्य का अपना स्वयं का संविधान है। इसलिए, भारतीय संविधान का भाग VI (राज्य सरकारों से संबंधित) इस राज्य पर लागू नहीं होता है। इसकी विधायिका की सहमति के बिना संघ द्वारा **इसके नाम, क्षेत्र या सीमा में परिवर्तन नहीं किया जा सकता है।**
- **विधायी शक्तियाँ:**
    - आतंकवाद की कार्रवाई से जुड़ी गतिविधियों के निवारण, भारत की संप्रभुता और क्षेत्रीय अखंडता पर सवाल उठाने या उसे भंग करने तथा राष्ट्रीय ध्वज, राष्ट्र गान और भारत के संविधान का अपमान करने जैसे कुछ मामलों को छोड़कर अवशिष्ट शक्तियां राज्य विधायिका में निहित हैं।
    - इसके अतिरिक्त, राज्य में निवारक निरोध का कानून बनाने की शक्ति राज्य विधायिका में निहित है।
    - भारत के संविधान में किया गया संशोधन तब तक राज्य पर लागू नहीं होता जब तक कि उसे राष्ट्रपति के आदेश द्वारा विस्तारित नहीं किया जाता।
- मूल अधिकार राज्य पर लागू होते हैं। संपत्ति का मूल अधिकार अभी भी राज्य में प्रत्याभूत है। जबकि भाग IV (राज्य की नीति के निदेशक सिद्धांतों से संबंधित) और भाग IVA (मूल कर्तव्यों से संबंधित) जम्मू और कश्मीर पर लागू नहीं होते हैं।
- **आपातकालीन प्रावधान:**
    - आंतरिक अशांति के आधार पर घोषित **राष्ट्रीय आपातकाल** राज्य सरकार की सहमति के बिना राज्य पर प्रभावी नहीं होगा।
    - राष्ट्रपति को राज्य के संबंध में **वित्तीय आपातकाल** की घोषणा करने की कोई शक्ति प्राप्त नहीं है।
    - **राज्य के संविधान के तहत (न कि भारतीय संविधान के प्रावधानों** के तहत) संवैधानिक मशीनरी की विफलता के आधार पर राज्य में **राष्ट्रपति शासन** लागू किया जा सकता है।
    - साथ ही, यह राज्य के संविधान के अंतर्गत **राज्यपाल के शासन** का प्रावधान भी करता है।

VISION IAS

- **संवैधानिक निकाय:** सर्वोच्च न्यायालय का **विशेष अनुमति क्षेत्राधिकार** तथा **चुनाव आयोग और नियंत्रक एवं महालेखा परीक्षक** का क्षेत्राधिकार राज्य पर लागू होता है।
- **उच्च न्यायालय की शक्ति:** जम्मू-कश्मीर का उच्च न्यायालय केवल मूल अधिकारों के प्रवर्तन के लिए ही रिट जारी कर सकता है, न कि किसी अन्य उद्देश्य के लिए।

आगे की राह

जब लोग सत्ता की संरचना और नीति निर्माण की प्रक्रिया से अलग-थलग महसूस करते हैं तो अलगाववाद बढ़ता है। शक्तियों का हस्तांतरण राजव्यवस्था के संचालन में लोकप्रिय भागीदारी सुनिश्चित करता है। इस प्रकार, अनुच्छेद 370 पर कोई भी निर्णय व्यापक जनसंवाद के बाद ही लिया जाना चाहिए। साथ ही, अशांति तथा अलगाव को दूर करने के लिए जम्मू और कश्मीर के लोगों की वास्तविक शिकायतों और चिंताओं को दूर करना महत्वपूर्ण है।

{नोट: कक्षा में "संविधान (जम्मू और कश्मीर में लागू) आदेश, 2019** और **जम्मू-कश्मीर पुनर्गठन अधिनियम, 2019 के बारे में विस्तार से बताया जाएगा।}

1.2.1. अनुच्छेद 35A

(Article 35A)

सुर्खियों में क्यों?

सर्वोच्च न्यायालय वर्तमान में अनुच्छेद 35A की संवैधानिक वैधता को चुनौती देने वाली याचिकाओं पर सुनवाई कर रहा है। अनुच्छेद 35A जम्मू-कश्मीर के मूल निवासियों को विशेष स्थिति और विशेषाधिकार प्रदान करता है।

अनुच्छेद 35A क्या है?

- भारतीय संविधान का अनुच्छेद 35A जम्मू और कश्मीर विधानमंडल को राज्य के **'स्थायी निवासियों'** को परिभाषित करने और उन्हें निम्नलिखित अधिकार उपलब्ध कराने की शक्ति प्रदान करता है:
  - सार्वजनिक क्षेत्र की नौकरियों में विशिष्ट अधिकार और विशेषाधिकार,
  - राज्य में संपत्ति के अधिग्रहण का अधिकार,
  - छात्रवृत्ति और अन्य सार्वजनिक सहायता एवं कल्याण।
- यह प्रावधान कहता है कि इसके अंतर्गत आने वाली विधायिका के किसी भी अधिनियम को संविधान या देश के किसी अन्य कानून का उल्लंघन करने पर चुनौती नहीं दी जा सकती है।
- यह प्रावधान संविधान के अनुच्छेद 370 (1) (d) के अंतर्गत जारी किए गए राष्ट्रपति के आदेश द्वारा 1954 में संविधान में समाविष्ट किया गया था।

अनुच्छेद 35A का महत्व

- यह कश्मीर राज्य में केवल कश्मीरियों तक विशेषाधिकारों को सीमित करता है, इस प्रकार यह सुनिश्चित करता है कि कश्मीरी जनसांख्यिकी और कश्मीरियों की संस्कृति अक्षुण्ण रहे।
- यह सुनिश्चित करता है कि संपत्ति, नौकरियों और राज्य की अन्य कल्याणकारी योजनाओं का बाहरी लोगों द्वारा दुरुपयोग न किया जाए और इस प्रकार यह कश्मीरियों के लिए विकास के अवसरों की सुविधा प्रदान करता है।
- यह जम्मू और कश्मीर राज्य को स्वायत्तता का प्रयोग करने में सहायता करता है, जिसके लिए भारत ने इंस्ट्रूमेंट ऑफ एक्सेशन (विलय-पत्र) के माध्यम से सहमति व्यक्त की थी। इस प्रकार यह अलगाववादी प्रवृत्तियों को सीमित करता है और भारत राज्य के साथ जम्मू और कश्मीर के एकीकरण और सहयोग को प्रोत्साहन प्रदान करता है।

अनुच्छेद 35A को हटाने के पक्ष में तर्क

- **संसद को दरकिनार करता है:** संविधान का अनुच्छेद 368 (i) संविधान में संशोधन करने के लिए केवल संसद को सशक्त बनाता है। राष्ट्रपति द्वारा संविधान में अनुच्छेद 35A को समाविष्ट करने पर कानून बनाने का संसदीय मार्ग दरकिनार कर दिया गया।
- **महिलाओं के अधिकारों को नकारता है:** यह राज्य से बाहर विवाह करने वाली मूलनिवासी महिलाओं को संपत्ति के अधिकारों से वंचित करने वाले जम्मू-कश्मीर के संविधान के कुछ प्रावधानों की रक्षा करता है। ये प्रावधान उनके बच्चों तक भी विस्तारित होते हैं।
- **मूल अधिकारों का उल्लंघन करता है:** जहां तक सरकारी नौकरियों और अचल संपत्ति की खरीद का संबंध है, अनुच्छेद 14, 19 और 21 के अंतर्गत यह अनिवासियों के विरुद्ध भेदभावपूर्ण है।

- **अनुच्छेद 370 केवल अस्थायी प्रावधान**' था और संविधान निर्माताओं का आशय यह नहीं था कि अनुच्छेद **370** संविधान में 'अनुच्छेद 35 A' की भांति स्थायी संशोधन लाने का साधन बन जाए। इस प्रकार अनुच्छेद 35 A "भारत की एकता की भावना" के विरुद्ध है क्योंकि यह "भारतीय नागरिकों के वर्ग के भीतर वर्ग" का निर्माण करता है।

विपक्ष में तर्क

- यदि अनुच्छेद 35A को बनाए नहीं रखा जाएगा तो अनुच्छेद 370 के अंतर्गत जारी किए गए **राष्ट्रपति के कई आदेशों की वैधता** संदिग्ध हो सकती है।
- हालांकि, यह अनुच्छेद 368 में दी गई संशोधन प्रक्रिया के अनुसार पारित नहीं किया गया था, तथापि इसे **जम्मू-कश्मीर की संविधान सभा की अनुशंसा पर** राष्ट्रपति आदेश के माध्यम से समाविष्ट किया गया था।
- चूंकि अनुच्छेद 35A, 1973 की **मूल संरचना के सिद्धांत का पूर्ववर्ती** है, इसलिए इसे मूल संरचना की कसौटी पर नहीं परखा जा सकता है।
- साथ ही, पूर्वोत्तर के कुछ राज्यों और हिमाचल प्रदेश सहित **कई अन्य राज्यों में भी इसी प्रकार के प्रावधान** हैं। अविभाजित आंध्र प्रदेश के लिए अनुच्छेद 371D सहित कई राज्यों में शिक्षा संस्थानों में प्रवेश हेतु और यहां तक कि नौकरियों में भी अधिवास-आधारित आरक्षण का पालन किया जाता है।
- **पूरनलाल लखनपाल बनाम भारत का राष्ट्रपति वाद, 1961** में सर्वोच्च न्यायालय ने निर्णय दिया था कि राष्ट्रपति **'अनुच्छेद 370 के अंतर्गत संविधान के वर्तमान प्रावधानों को संशोधित कर सकता है।'** हालांकि, यह निर्णय इस संबंध में मौन है कि राष्ट्रपति संसद की जानकारी के बिना एक नया अनुच्छेद समाविष्ट कर सकता है या नहीं।

1.3. छठी अनुसूची

(6th Schedule)

सुर्खियों में क्यों?

हाल ही में, छठी अनुसूची में सम्मिलित अधिसूचित क्षेत्रों की 10 स्वशासी परिषदों की वित्तीय एवं कार्यकारी शक्तियों में वृद्धि करने हेतु राज्य सभा में संविधान (125वां संशोधन) विधेयक, 2019 प्रस्तुत किया गया।

पृष्ठभूमि

छठी अनुसूची क्या है?

संविधान के अनुच्छेद-244 के तहत **'अनुसूचित क्षेत्रों' और 'जनजातीय क्षेत्रों'** के रूप में नामित क्षेत्रों के प्रशासन के संबंध में विशेष प्रावधान उपबंधित किए गए हैं। छठी अनुसूची में उत्तर-पूर्व के चार राज्यों- **असम, मेघालय, त्रिपुरा** और **मिजोरम** के जनजातीय क्षेत्रों के प्रशासन के संबंध में विशेष उपबंध शामिल हैं।

छठी अनुसूची में सम्मिलित किए जाने के संबंध में तर्क

- असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम की जनजातियां इन राज्यों के अन्य क्षेत्रों के लोगों की जीवन शैली और संस्कृति को आत्मसात नहीं कर पाई हैं।
- जबकि भारत के अन्य हिस्सों में रहने वाली जनजातियों ने कमोबेश उन बहुसंख्यकों की संस्कृति को अपना लिया है जिनके साथ वे रह रहे हैं। वहीं दूसरी ओर असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम की **जनजातियां वर्तमान में भी मूल रूप से अपनी संस्कृति, रीति-रिवाजों और सभ्यता से ही जुड़ी हुई हैं।**
- यही कारण है कि इन क्षेत्रों के लिए संविधान में पृथक एवं विशेष प्रावधान किए गए हैं और इन लोगों को स्व-शासन हेतु पर्याप्त स्वायत्तता प्रदान की गई है।

संविधान (125वां संशोधन) विधेयक के तहत प्रस्तावित संशोधन

इस विधेयक में निम्नलिखित मुद्दों पर विचार किया गया है:

- **ग्राम स्तरीय निकायों की आवश्यकता:** ग्राम परिषदों के लिए किया गया प्रावधान यह दर्शाता है कि स्वायत्त जिला परिषदों (ADC) द्वारा स्थापित इन परिषदों की परिकल्पना न्याय वितरण संस्थानों के रूप में की गई है। हालांकि, पारंपरिक ग्राम निकाय के साथ सामंजस्य स्थापित करने के लिए 'ग्राम समुदायिक निकाय' (village community body) की आवश्यकता है।
    - यह विधेयक निर्वाचित ग्राम नगरपालिका परिषदों (village municipal councils) का प्रावधान करता है जिन्हें आर्थिक विकास और सामाजिक न्याय के लिए योजनाएं तैयार करने की शक्तियाँ प्रदान की जाएंगी।

VISION IAS

- **वित्तीय आत्मनिर्भरता का अभाव:** ये परिषदें वित्त के लिए संबंधित राज्य सरकारों पर निर्भर हैं। यह निर्भरता स्थानीय विकास के लिए एक सशक्त निकाय के रूप में उभरने हेतु आवश्यक लोचशीलता से इन्हें वंचित करती है।
    - इस विधेयक द्वारा प्रस्तावित किया गया है कि परिषद के लिए वित्तीय हस्तांतरण की अनुशंसा अब वित्त आयोग द्वारा की जाएगी।
- **कुछ जनजातियों को प्रतिनिधित्व प्राप्त नहीं होना:** कुछ परिषदें अपने लिए निर्धारित की गयी सदस्य संख्या-30 में कई प्रमुख और गौण जनजातियों को प्रतिनिधित्व प्रदान करने में सक्षम नहीं हो पायी हैं।
    - इस मांग को ध्यान में रखते हुए यह विधेयक कुछ परिषदों की सदस्य संख्या में वृद्धि करने का प्रावधान करता है।
- **महिलाओं का अपर्याप्त प्रतिनिधित्व:** जनजातीय प्रशासन में महिलाओं की भागीदारी अत्यधिक कम है।
- इस विधेयक के तहत ग्राम और नगरपालिका परिषदों में महिलाओं हेतु कम से कम एक तिहाई सीटों के आरक्षण का प्रावधान किया गया है।

छठी अनुसूची के प्रावधान

छठी अनुसूची के अंतर्गत जनजातीय क्षेत्रों को निम्नलिखित प्रावधानों के माध्यम से विभिन्न शक्तियां दी गई हैं:

- **स्वायत्त जिले:** इन राज्यों में जनजातीय क्षेत्रों को **स्वायत्त जिलों** के रूप में गठित किया गया है। प्रत्येक जिले में एक-एक **स्वायत्त जिला परिषद** और प्रत्येक स्वायत्त क्षेत्र में 30 सदस्यों वाली एक पृथक क्षेत्रीय परिषद की स्थापना का प्रावधान किया गया है। वर्तमान समय में ऐसी **10 परिषदें हैं**।
- **विधायी शक्ति:** भूमि, वन, नहर का जल, झूम कृषि, ग्राम प्रशासन, संपत्ति का उत्तराधिकार, विवाह और विवाह विच्छेद तथा सामाजिक रीति-रिवाजों जैसे कुछ निर्दिष्ट विषयों पर विधि निर्माण हेतु इन्हें विधायी अधिकार दिए गए हैं। इसके लिए इन्हें राज्यपाल की स्वीकृति लेने की आवश्यकता होती है।
- **न्यायिक शक्ति:** जिला परिषद जनजातीय लोगों के मुकदमों और वादों की सुनवाई हेतु ग्राम परिषदों या न्यायालयों का गठन कर सकती है। ऐसे मुकदमों और वादों के लिए उच्च न्यायालय का अधिकार क्षेत्र राज्यपाल द्वारा निर्दिष्ट किया जाता है।
- **विनियामक शक्ति:** जिला परिषद जिले में प्राथमिक विद्यालयों, औषधालयों, बाजारों, नौकाघाटों, मत्स्य पालन क्षेत्रों, सड़कों इत्यादि की स्थापना, निर्माण और उनका प्रबंधन कर सकती है। यह गैर-जनजातीय लोगों द्वारा धन उधार दिए जाने और उनके द्वारा किए जाने वाले व्यापार को नियंत्रित करने हेतु विनियम बना सकती है। हालाँकि इसके लिए उसे राज्यपाल की स्वीकृति लेने की आवश्यकता होती है।
- **कर राजस्व संग्रह:** जिला और क्षेत्रीय परिषदों को भूमि राजस्व के आकलन एवं संग्रहण तथा कुछ विशिष्ट करों के अधिरोपण संबंधी शक्तियां प्राप्त हैं।

छठी अनुसूची के क्षेत्र पांचवीं अनुसूची के क्षेत्रों से किस प्रकार भिन्न हैं?

संविधान की **पांचवीं अनुसूची** का संबंध **असम, मेघालय, त्रिपुरा और मिजोरम को छोड़कर किसी भी राज्य में अनुसूचित क्षेत्रों और अनुसूचित जनजातियों** के प्रशासन और नियंत्रण से है। छठी अनुसूची के प्रावधान पांचवी अनुसूची से बेहतर माने जाते हैं क्योंकि:

- यह अधिक स्वायत्तता प्रदान करती है।
- पांचवीं अनुसूची के तहत परिषदों का सृजन राज्य विधायिका द्वारा किया गया है जबकि छठी अनुसूची के तहत ये संविधान द्वारा उपबंधित हैं।
- इसमें परिषदों को स्वयं के लिए बजट तैयार करने की वित्तीय शक्ति दी गई है, लेकिन पांचवी अनुसूची में उपबंधित परिषद के संबंध में ऐसा प्रावधान उपलब्ध नहीं है।
- छठी अनुसूची के तहत अधिक शक्तियां हस्तांतरित की गई हैं तथा अनेक विषयों पर विधायन की शक्ति प्रदान की गई है। पांचवीं अनुसूची के अंतर्गत जनजातीय सलाहकार परिषद को केवल राज्य सरकार को परामर्श देने की शक्तियां प्राप्त हैं, और वह भी तब जब राज्यपाल द्वारा परिषद को ऐसा कोई मामला संदर्भित किया जाए। भूमि हस्तांतरण से संबंधित प्रकरणों में वह अपने विवेक के आधार पर शक्ति का प्रयोग कर सकता है।
- ये क्षेत्र विकास, स्वास्थ्य, शिक्षा और सड़क संबंधी योजनाओं के वित्त पोषण हेतु भारत की संचित निधि से भी धन प्राप्त करते हैं।

छठी अनुसूची के क्षेत्रों में स्वायत्त परिषदों के साथ समस्याएं

- **राज्यों और जिला परिषदों के मध्य कार्यात्मक उत्तरदायित्वों का अतिव्यापन:** छठी अनुसूची के तहत प्रावधान किया गया है कि कुछ विशिष्ट मामलों को जिला और क्षेत्रीय परिषदों को पूर्णतः हस्तांतरित किया जाएगा। हालांकि इस प्रावधान के बावजूद कुछ मामले ऐसे हैं जिनका परिषदों को पूर्ण हस्तांतरण नहीं किया गया है।

VISIONIAS

- **कुशल पेशेवरों का अभाव**: लगभग सभी परिषदों में योजना निर्माण से संबंधित पेशेवरों का अभाव है, जिसके परिणामस्वरूप विकासात्मक परियोजनाओं पर उचित तकनीकी और वित्तीय विवेचन के बिना केवल तदर्थ रूप से विचार किया जाता है।
- **राज्यपाल की भूमिका में स्पष्टता का अभाव**: छठी अनुसूची में कुछ विशेष प्रावधानों का समावेश किया गया है जो उन मामलों को स्पष्ट करते हैं जिनमें राज्यपाल की विवेकाधीन शक्तियां प्रवर्तनीय होती हैं। हालांकि, इस संबंध में परस्पर विरोधी मत प्रचलित है कि राज्यपाल को अपनी भूमिका का निर्वहन व्यक्तिगत विवेक के आधार पर करना चाहिए या संबंधित राज्य की मंत्रिपरिषद के परामर्शनुसार।
- **परम्परागत विधियों के संहिताकरण का अभाव**: जनजातीय सांस्कृतिक पहचान के संरक्षण को सुनिश्चित करने हेतु प्रथागत कानूनों का संहिताकरण करने तथा उन्हें व्यावहारिक रूप से प्रयोग में लाने की नितांत आवश्यकता है।
- **निधियों का दुरुपयोग:** कुछ स्वशासी जिला परिषदें सरकारी निधियों का दुरुपयोग करती हैं क्योंकि वहां विशेषज्ञ जांच अधिकारी नहीं होते तथा इन परिषदों द्वारा आरम्भ की गई पहलों का उचित लेखा-परीक्षण भी नहीं होता।
- **मौजूदा शक्तियों के कुशल उपयोग का अभाव:** यद्यपि **जिला परिषदों** को भूमि विकास और भूमि राजस्व हेतु विधि बनाने की शक्तियाँ प्राप्त हैं, लेकिन इनके द्वारा जनजातीय समाज में समृद्धि को प्रोत्साहित करने वाले भूमि-सुधारों को प्रारम्भ करने हेतु पर्याप्त कदम नहीं उठाए गए हैं।

आगे की राह

प्रस्तावित संशोधनों के अतिरिक्त, छठी अनुसूची के संबंध में कुछ और कदम उठाए जाने की आवश्यकता है जैसे:

- कानून के अंतर्गत **ग्राम सभा को मान्यता देना** और उसकी शक्तियों एवं कार्यों को निर्दिष्ट करना तथा ग्राम सभा के प्रति ग्राम परिषदों की जवाबदेही को सुनिश्चित करना।
- विकासात्मक कार्यक्रमों के योजना निर्माण, कार्यान्वयन और उसकी निगरानी में **पारदर्शिता लाना**।
- यह सुनिश्चित करना कि कई **नृजातीय अल्पसंख्यकों को परिषद में प्रतिनिधित्व से** वंचित न किया जाए।

1.4. छोटे राज्यों की मांग

(Demands for Small States)

सुर्खियों में क्यों?

हाल ही में, गोरखालैंड क्षेत्र को पश्चिम बंगाल से पृथक कर एक नए गोरखालैंड राज्य के निर्माण की मांग ने फिर से जोर पकड़ लिया है।

छोटे राज्यों की मांग के कारण

- **संस्कृति और नृजातीयता**: सांस्कृतिक रूप से भिन्न कुछ विशिष्ट समूह स्वयं को 'सांस्कृतिक रूप से अधीन और शोषित' अनुभव करते हैं। अतः, नृजातीय पहचान के संरक्षण हेतु एक नए राज्य की मांग उत्पन्न होती है। उदाहरण के लिए, पश्चिम बंगाल से गोरखालैंड, पूर्वोत्तर में नागालिम, असम में बोडोलैंड की मांग।
- **आर्थिक पिछड़ापन:** प्राकृतिक संसाधनों से समृद्ध होने के बावजूद वंचित रहने की भावना भी एक अलग राज्य की मांग का एक प्रमुख आधार है, जैसे- तेलंगाना और विदर्भ।
- **बेहतर प्रशासन:** कुछ बड़े राज्यों में बोझिल प्रशासन की समस्या ने इस धारणा को जन्म दिया है कि बड़े राज्यों को छोटे-छोटे भागों में विभाजित कर लोगों को सत्ता के निकट लाने से प्रशासन में सुधार होगा। उदाहरणस्वरूप, उत्तर प्रदेश को छोटे राज्यों में विभाजित करने का प्रस्ताव।
- **राजनीतिक कारण:** किसी क्षेत्र पर प्रभाव रखने वाले कुछ वर्ग/समूह अधिक राजनीतिक शक्ति प्राप्त करने के लिए पृथक राज्य की मांग करते हैं। उदाहरण के लिए, पश्चिमी उत्तर प्रदेश पर प्रभुत्व रखने वाले कुछ वर्गों द्वारा हरित प्रदेश की मांग की जा रही है।

छोटे राज्यों के पक्ष में तर्क

- **आर्थिक विकास और कार्यकुशलता:** जब नए राज्यों को "अपना स्वयं का क्षेत्र" प्राप्त होता है, तो अभी तक गौण रहे क्षेत्रों की अप्रयुक्त विकास संभावनाओं को साकार करने का मार्ग प्रशस्त होता है। जैसे मध्य प्रदेश में छत्तीसगढ़, आंध्र प्रदेश में तेलंगाना।
- **लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण**: तुलनात्मक रूप से छोटी लेकिन व्यवस्थित भौगोलिक इकाइयों में बेहतर लोकतांत्रिक प्रशासन क्षमताएं विद्यमान होती हैं, क्योंकि नीति निर्माता स्थानीय आवश्यकताओं से अवगत एवं उनके प्रति अधिक जागरुक होते हैं।

- **सांस्कृतिक समरूपता और भाषाई अनुकूलता:** छोटे राज्य सार्वजनिक संसाधनों के बेहतर प्रबंधन, कार्यान्वयन और आवंटन को संभव बनाते हैं। एक अपेक्षाकृत छोटा समरूप राज्य संप्रेषण को सुगम बनाता है तथा सीमांत सामाजिक समूहों को उनके मतों को एकीकृत करने और अभिव्यक्त करने में समर्थ बनाता है।
- **इससे नृजातीय समूहों के बीच पहचान की समस्या का समाधान होता है** और वे अपनी भाषा और संस्कृति को विकसित करने में सक्षम होते हैं। इससे उन्हें 'आंतरिक उपनिवेशवाद की भावनाओं' से छुटकारा पाने में सहायता मिलती है।

छोटे राज्यों के विरुद्ध तर्क

- क्षेत्रीय और भाषाई कट्टरता के उदय के कारण **राष्ट्रीय एकता और अखंडता के समक्ष खतरा** उत्पन्न होता है।
- **विकास की गारंटी नहीं:**
    - केवल छोटे राज्य बना दिया जाना ही उन पिछड़े क्षेत्रों के **तीव्र आर्थिक विकास की गारंटी नहीं दे सकता** जिनके पास आवश्यक वस्तुओं और मानव संसाधनों का अभाव है।
    - कृषि विकास, सकल घरेलू उत्पाद में वृद्धि, निर्धनता में कमी और शिशु मृत्यु दर के मामले में **उत्तराखंड, छत्तीसगढ़ और झारखंड में** कोई महत्वपूर्ण बदलाव नहीं आए हैं।
    - कुछ छोटे राज्यों में पर्याप्त आर्थिक क्षमता का अभाव हो सकता है जिससे उनकी केंद्र पर निर्भरता में वृद्धि होगी।
- **विकास का दोषपूर्ण मॉडल:**
    - नवगठित छोटे राज्य विकास प्रक्रिया में विलंब से शामिल होने और पिछड़े होने के कारण **उद्योगों की कमी, कृषि संकट और निम्नस्तरीय अवसंरचना सुविधाओं जैसी समस्याओं से ग्रसित होते हैं।**
    - इसके परिणामस्वरूप कच्चे माल के **अत्यधिक दोहन** पर आधारित विकास के मॉडल का प्रयोग किया जाता है, जैसे कि उद्योग स्थापित करने के बजाय खनिजों का खनन, भूमि के अतार्किक सौदे, उपजाऊ कृषि भूमि को अत्यधिक लाभ के लिए रियल स्टेट में बदल कर किए जाने वाले लेन-देन।
- **सत्ता का कोई वास्तविक हस्तांतरण नहीं:** छोटे राज्यों के निर्माण के तहत ग्राम पंचायत आदि मौजूदा संरचनाओं को सशक्त किए बिना केवल पुराने राज्य की राजधानी से नई राज्य की राजधानी को सत्ता का हस्तांतरण कर दिया जाता है।
- लोकतांत्रिक और विकासात्मक क्षमता के मूल्यांकन के स्थान पर नए राज्यों के गठन का प्रमुख उद्देश्य **राजनीतिक लाभ और अवसरवाद** है।
- **आक्रामक क्षेत्रवाद: छोटे राज्य भी अपनी शक्ति संरचनाओं पर प्रमुख समुदाय/जाति/जनजाति का वर्चस्व उत्पन्न कर** सकते हैं। इससे ऐसे राज्यों में आक्रामक क्षेत्रवाद भी विकसित हो सकता है जिससे उग्र स्वयंभू नेता सक्रिय हो सकते हैं और परिणामस्वरूप प्रवासियों में डर और भय की भावना उत्पन्न हो सकती है।
- जल, बिजली और सीमा संबंधी **अंतर-राज्यीय विवाद** बढ़ सकता है।

आगे की राह

- **सुशासन:** दूरदराज के क्षेत्रों तक पहुँच स्थापित करने हेतु प्रौद्योगिकी के बेहतर उपयोग तथा बेहतर सार्वजनिक सेवा वितरण और लोगों की विस्थापन एवं असंतोष की समस्याओं को दूर करके सुशासन सुनिश्चित करना।
- **73वें और 74वें संवैधानिक संशोधनों को सही अर्थों में कार्यान्वित करके प्रशासन का लोकतांत्रिक विकेंद्रीकरण** और स्थानीय स्व-शासन संबंधी संस्थाओं को सबल बनाना। समनुषंगिता के सिद्धांत के आधार पर सत्ता का विकेंद्रीकरण किया जाना चाहिए।
- **न्यायसंगत तरीके से संतुलित सामाजिक-आर्थिक विकास** और कृषि संकट की वास्तविक चिंताओं को दूर करने से उत्पन्न रोजगार यह सुनिश्चित करेंगे कि छोटे राज्यों के निर्माण हेतु मांग उत्पन्न न हो।
- नीतियों की निरंतरता के लिए राज्य के आकार की तुलना में **राजनीतिक स्थिरता** अधिक महत्वपूर्ण है।
- **पृथक** राज्य की किसी भी मांग पर निर्णय लेने से पहले उसका **वस्तुनिष्ठ और वैज्ञानिक दृष्टि से विश्लेषण किया जाना चाहिए।**

गोरखालैंड आंदोलन

- गोरखालैंड आंदोलन, वस्तुतः **नेपाली भाषी भारतीय नागरिकों** (सामान्यतः इन्हें 'गोरखा' कहा जाता है) हेतु पश्चिम बंगाल राज्य से **पृथक गोरखालैंड राज्य** के गठन की दीर्घकालिक मांग है।
- **गोरखालैंड टेरिटोरियल एडमिनिस्ट्रेशन (GTA) का गठन केंद्र तथा राज्य की सरकारों एवं** गोरखा जनमुक्ति मोर्चा (GJM) के मध्य हस्ताक्षरित एक त्रिपक्षीय समझौते के माध्यम से **2012 में** किया गया था। इसने पूर्ववर्ती दार्जिलिंग गोरखा हिल काउंसिल (DGHC) को प्रतिस्थापित किया था। यह एक अर्ध-स्वायत्त प्रशासनिक निकाय है। इसे प्रशासनिक, कार्यकारी और वित्तीय शक्तियां प्राप्त हैं, किन्तु विधायी शक्तियां प्राप्त नहीं हैं।

VISION IAS

इसकी मांग क्यों?

- बंगाली समुदाय से **नृजातीय भिन्नता।**
- **भारतीय गोरखा पहचान की आकांक्षा।**
- **आर्थिक अभाव,** जैसे रोजगार के कम अवसर, जबकि बाहरी लोग चाय उद्योग के स्वामी हैं।
- राज्य सरकार द्वारा **बंगाली भाषा का थोपा जाना।**

भारत में राज्य पुनर्गठन का इतिहास

- **स्वतंत्रता के समय** 1947 में, भारत में 571 असंबद्ध रियासतें थीं, जिन्हें मिलाकर 27 राज्यों का गठन किया गया था। यह समूहीकरण सामाजिक, सांस्कृतिक या भाषाई विभाजनों की तुलना में ऐतिहासिक और राजनीतिक विचारों के आधार पर किया गया था।
- सरकार ने भाषायी आधार पर राज्यों के पुनर्गठन की व्यवहार्यता की जांच करने के लिए **एस. के. धर आयोग** का गठन किया, किन्तु आयोग ने भाषायी कारक के स्थान पर प्रशासनिक सुविधा के आधार पर पुनर्गठन को वरीयता दी।
- जवाहरलाल नेहरू, सरदार पटेल और पट्टाभि सीतारमैय्या के अधीन एक कांग्रेस समिति **(जेवीपी समिति)** ने भी भाषायी आधार का समर्थन नहीं किया।
- 1953 में तेलुगु भाषी क्षेत्रों को मद्रास राज्य से अलग करके आंध्र प्रदेश को भाषायी आधार पर पहला राज्य बनाया गया था।
- चूंकि भाषायी आधार पर कई और राज्यों के निर्माण की मांग उठने लगी थी, इसलिए **एच. एन. कुंजरू और के. एम. पणिक्कर को शामिल करते हुए न्यायमूर्ति एफ. फजल अली की अध्यक्षता में एक आयोग का गठन किया गया था, जिसने 1955 में अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की।** इसके सुझावों के आधार पर 1956 में **राज्य पुनर्गठन अधिनियम** पारित किया गया, जिसके परिणामस्वरूप 14 राज्यों और 6 संघ राज्य क्षेत्रों का निर्माण किया गया।
- **1960 और 1970 के दशकों में** नृजातीय आधार पर (पूर्वोत्तर) और भाषायी आधार पर (पंजाब और महाराष्ट्र) अन्य राज्यों का गठन किया गया।
- **2000** में जनजातीय संबद्धता और आर्थिक विकास की कमी के आधार पर झारखंड, छत्तीसगढ़ और उत्तराखंड का गठन किया गया था।
- लम्बे समय से की जाने वाली मांग के परिणामस्वरूप **2014 में** तेलंगाना आधिकारिक रूप से भारत का 29वां राज्य बन गया।

नवीन राज्य के गठन की प्रक्रिया

- संविधान के **अनुच्छेद 3** के तहत **संसद** किसी राज्य के **नाम, सीमा और क्षेत्र** में परिवर्तन करने हेतु प्राधिकृत है। अत: संसद विधि द्वारा-
  - किसी राज्य में से उसका राज्यक्षेत्र पृथक करके अथवा दो या अधिक राज्यों को या राज्यों के भागों को मिलाकर अथवा किसी राज्यक्षेत्र को किसी राज्य के भाग के साथ मिलाकर नए राज्य का निर्माण कर सकेगी;
  - किसी राज्य के क्षेत्र में वृद्धि एवं कमी कर सकेगी तथा
  - राज्य की सीमाओं एवं नाम में परिवर्तन कर सकेगी।
- परन्तु यह **दो शर्तों** को निर्धारित करता है, ये हैं-
  - ऐसा कोई भी विधेयक केवल **राष्ट्रपति की पूर्व अनुशंसा** के साथ ही संसद में प्रस्तुत किया जा सकता है; तथा
  - विधेयक को अनुशंसित करने से पूर्व राष्ट्रपति **विधेयक को** एक निर्दिष्ट अवधि के भीतर अपने विचार प्रकट करने हेतु **संबंधित राज्य विधानमंडल** को प्रेषित करेगा।
- ज्ञातव्य है कि राष्ट्रपति (अथवा संसद) राज्य विधानमंडल के **विचारों से बाध्य नहीं है** तथा वह उन्हें स्वीकृत या अस्वीकृत कर सकता है, भले ही उन्हें निर्दिष्ट अवधि के भीतर प्राप्त कर लिया गया हो।
- इसके अतिरिक्त, यदि विधेयक में कोई भी संशोधन प्रस्ताव संसद में प्रस्तुत एवं स्वीकार किया जाता है तो, विधेयक को राज्य विधानमंडल को पुन: प्रेषित करना अनिवार्य नहीं है।
- किसी **संघ शासित प्रदेश** के मामले में विधेयक को संबंधित विधानमंडल को संदर्भित करने की आवश्यकता नहीं होती है।
- **अनुच्छेद 4** यह घोषित करता है कि अनुच्छेद 2 (नए राज्यों का प्रवेश या स्थापना) और अनुच्छेद 3 (नए राज्यों का निर्माण और

VISIONIAS

वर्तमान राज्यों के क्षेत्रों, सीमाओं या नामों में परिवर्तन) के अंतर्गत बनाई गई कोई भी विधि अनुच्छेद 368 के प्रयोजनों हेतु संविधान का संशोधन नहीं समझी जाएगी। **इसका आशय यह है कि ऐसी विधियाँ साधारण बहुमत तथा सामान्य विधायी प्रक्रिया द्वारा पारित की जा सकती हैं।**

- यही कारण है कि भारत को "**विनाशी राज्यों का अविनाशी संघ**" कहा जाता है।

1.5. राज्य विधानसभाओं के विघटन में राज्यपाल की भूमिका

(Governor's Role in dissolution of State Assemblies)

सुर्ख़ियों में क्यों?

- हाल ही में जम्मू-कश्मीर के राज्यपाल ने दो राजनीतिक दलों द्वारा सरकार बनाने के अलग-अलग दावे किए जाने के बाद राज्य विधानसभा (जो निलंबित अवस्था में थी) को विघटित कर दिया।

अन्य संबंधित तथ्य

- विघटन हेतु निम्नलिखित तर्क दिए गए: **"विधायकों की व्यापक खरीद फरोख्त (extensive horse trading)" और "विपरीत राजनीतिक विचारधाराओं"** वाले दलों द्वारा बनाई गई सरकार के अस्थिर होने की संभावना।
- इस कदम को **लोकतंत्र के लिए हानिकारक** माना जा रहा है, क्योंकि केंद्र के साथ जम्मू-कश्मीर का संबंध संवैधानिक सुरक्षात्मक प्रावधानों तथा चुनावी राजनीति और संसदीय लोकतंत्र में राज्य के प्रमुख दलों की भागीदारी में निहित है।

संवैधानिक प्रावधान

- **अनुच्छेद 172** यह प्रावधान करता है कि प्रत्येक राज्य की विधान सभा, यदि समय-पूर्व विघटित नहीं कर दी जाती है तो पांच वर्ष तक बनी रहेगी।
- भारतीय संविधान के **अनुच्छेद 174 (2)(b)** में प्रावधान है कि राज्यपाल समय-समय पर विधान सभा का विघटन कर सकता है।
- **अनुच्छेद 356 ("राष्ट्रपति शासन")** के अनुसार यदि राष्ट्रपति राज्यपाल के प्रतिवेदन से या अन्यथा, इस सन्दर्भ में आश्वस्त हो जाता है कि ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गई है जिसमें उस राज्य का शासन संविधान के उपबंधों के अनुसार संचालित नहीं किया जा सकता है (संवैधानिक तंत्र की विफलता) तो राष्ट्रपति उद्घोषणा द्वारा-
    - उस राज्य की सरकार के सभी कृत्य और शक्तियां अपने हाथ में ले सकता है।
    - यह घोषित कर सकता है कि राज्य के विधानमंडल की शक्तियां संसद द्वारा या उसके प्राधिकार के अधीन प्रयोग की जाएंगी।
- **जम्मू-कश्मीर के संविधान के संदर्भ में**: इस स्थिति हेतु **धारा 92** (संवैधानिक तंत्र की विफलता) और **धारा 52** (विधानसभा के विघटन से संबंधित) के अंतर्गत शक्तियां प्रदान की गई हैं।

विघटन की शक्तियों से संबंधित मुद्दे

- **निर्धारित अवधि से पूर्व विघटन के लिए वस्तुनिष्ठ मानदंडों का अभाव:** हालांकि, अनुच्छेद 174 राज्यपाल को विधानसभा को विघटित करने की शक्ति प्रदान करता है किन्तु **संविधान में इस विषय में कोई प्रावधान नहीं किया गया है कि सदन को कब और किस परिस्थिति में विघटित किया** जा सकता है।
- **विघटन हेतु राजनीतिक कारणों का उल्लेख किया जाना:** जम्मू-कश्मीर में उभरते गठबंधन को रोकने के लिए 'भविष्य में राजनीतिक अस्थिरता की संभावना' संबंधी तर्क दिया गया है। इस तर्क की प्रकृति अलोकतांत्रिक है।
    - इसके अतिरिक्त, किसी गठबंधन को अवसरवादी के रूप में वर्णित करना तो सही हो सकता है क्योंकि यह एक राजनीतिक मत है लेकिन यह उसके विरुद्ध संवैधानिक कार्रवाई का आधार नहीं हो सकता है।
- **राज्यपाल के पद में राजनीतिक तटस्थता का अभाव:**
    - इस पद को तत्कालीन सरकार के प्रति राजनीतिक दृष्टि से निष्ठावान होने के लिए राजनेताओं हेतु एक सेवानिवृत्ति पैकेज की तरह बना दिया गया है। परिणामस्वरूप, निर्वाचित राज्य सरकारों को अस्थिर करने के लिए केंद्र की विभिन्न सरकारों द्वारा इस पद का उपयोग राजनीतिक उपकरण के रूप में किया गया है।
    - **उदाहरण के लिए,** 'हॉर्स ट्रेडिंग' की आशंकाओं के आधार पर वर्ष 2005 में बिहार के राज्यपाल द्वारा वहाँ के विधानसभा को विघटित कर दिया गया था। बाद में सुप्रीम कोर्ट ने इस निर्णय को अवैध और दुर्भाग्यपूर्ण बताया।

VISION IAS

सुझाव

सरकारिया आयोग:

- संसद द्वारा राष्ट्रपति शासन की घोषणा को स्वीकृति प्रदान किए जाने के पश्चात् ही राज्य विधानसभा को विघटित किया जाना चाहिए।
- संविधान के अनुच्छेद 356 का उपयोग केवल कुछ अपरिहार्य अवसरों पर ही किया जाना चाहिए।
- राज्य में राष्ट्रपति शासन लागू करने से पूर्व वैकल्पिक सरकार के गठन की सभी संभावनाओं का पता लगाया जाना चाहिए।

एम. एम. पुंछी आयोग

- त्रिशंकु विधानसभा (hung Assembly) की स्थिति में राज्यपाल को **"संवैधानिक रीतियों"** का अनुपालन करना चाहिए।
- इस आयोग ने **'लोकलाइज्ड इमरजेंसी' (स्थानीय आपातकाल)** का सुझाव दिया। इसके द्वारा **केंद्र सरकार राज्य विधानसभा को भंग किए बिना नगर/जिला स्तर पर किसी मुद्दे का समाधान कर सकती है।**

सुप्रीम कोर्ट के निर्णय:

- **बोम्मई वाद (1994):**
  - न्यायालय द्वारा बहुमत की जांच हेतु फ्लोर टेस्ट को प्राथमिकता प्रदान की गयी है।
  - न्यायालय ने यह भी वर्णित किया कि अनुच्छेद 356 के तहत अत्यधिक महत्वपूर्ण शक्ति प्रदान की गयी है और इसका न्यायोचित एवं संयमपूर्ण उपयोग किया जाना चाहिए, न कि राजनीतिक लाभ के लिए।
- **रामेश्वर प्रसाद वाद (2006)**
  - इसके अंतर्गत एक वर्ष पूर्व विधानसभा को विघटित करने के लिए बिहार के राज्यपाल की सिफारिश को गैर-कानूनी और दुर्भाग्यपूर्ण घोषित किया गया था।
  - कोई राज्यपाल लोकतांत्रिक सरकार के गठन की एक विधि के रूप में **निर्वाचन के पश्चात् बनाए गए गठबंधन (post-poll alliances)** को अवैध घोषित नहीं कर सकता है।
  - न्यायालय ने यह भी वर्णित किया कि सरकार के गठन संबंधी प्रयासों में **हॉर्स ट्रेडिंग या भ्रष्टाचार के अप्रमाणित दावों** को विधानसभा को विघटित करने के आधारों के रूप में उद्धृत नहीं किया जा सकता।

1.6. समवर्ती सूची को समाप्त करने की मांग

(Demand For Abolishing The Concurrent List)

सुर्ख़ियों में क्यों?

तेलंगाना के मुख्यमंत्री ने **राज्यों के लिए और अधिक स्वायत्तता** की मांग करते हुए समवर्ती सूची को पूर्णत: समाप्त (उत्सादित) करने का सुझाव दिया है।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि

- देश के विभिन्न भागों से राज्यों के पक्ष में अधिक शक्ति हस्तांतरण की बढ़ती मांगों के कारण केंद्र-राज्य संबंध बार-बार समीक्षा का विषय बनते रहे हैं।
- यद्यपि भारतीय शासन प्रणाली का स्वरूप संघीय है तथापि इसमें सुदृढ़ केंद्रीय प्रवृत्तियाँ विद्यमान हैं। ये प्रवृत्तियाँ विभिन्न मुद्दों के परिणामस्वरूप उत्पन्न हुई हैं, यथा- भारत सरकार अधिनियम, 1935 के तहत निर्धारित दिशा-निर्देशों के दायरे में बने रहने की जड़ता, समाप्ति का भय आदि।

सातवीं अनुसूची (अनुच्छेद 246)

भारतीय संविधान केंद्र एवं राज्यों के मध्य शक्तियों के विभाजन को सातवीं अनुसूची के अंतर्गत निम्नलिखित 'तीन सूचियों' के माध्यम से निर्धारित करता है:

- **संघ सूची** में उन विषयों का उल्लेख किया गया है, जिन पर संसद विधि का निर्माण कर सकती है, जैसे- रक्षा, विदेशी मामले, रेलवे, बैंकिंग इत्यादि।
- **राज्य सूची** में उन विषयों का उल्लेख किया गया है, जो राज्य विधान-मण्डलों के दायरे में आते हैं, जैसे- लोक व्यवस्था, पुलिस, लोक स्वास्थ्य एवं स्वच्छता, अस्पताल और औषधालय, सट्टेबाजी तथा जुआ आदि।
- **समवर्ती सूची** में उन विषयों का विवरण दिया गया है, जिन पर संसद और राज्य विधान-मण्डल दोनों कानून बना सकते हैं।

VISION IAS

उदाहरणार्थ: शिक्षा जिसके अंतर्गत तकनीकी शिक्षा, आयुर्विज्ञान शिक्षा और विश्वविद्यालय हैं, जनसंख्या नियंत्रण और परिवार नियोजन, दण्ड विधि (आपराधिक कानून), पशुओं के प्रति क्रूरता का निवारण, वन्य जीव जन्तुओं और पक्षियों का संरक्षण, वन आदि।

- संविधान समवर्ती सूची के विषयों पर संसद की संघीय सर्वोच्चता का भी प्रावधान करता है, अर्थात् समवर्ती सूची के विषयों के संबंध में किसी भी प्रकार के संघर्ष की स्थिति में संघ को यह शक्ति है कि वह राज्य विधि को निरस्त कर दे अथवा उसके स्थान पर दूसरी विधि प्रतिस्थापित कर दें।

समवर्ती सूची की आवश्यकता क्यों?

- समवर्ती सूची का उद्देश्य संपूर्ण देश में **समरूपता को सुनिश्चित** करना है, ताकि केंद्र एवं राज्य स्वतंत्र रूप से विधान का निर्माण कर सकें। इसलिए संविधान में राज्यों हेतु पर्याप्त लचीलेपन के साथ एक मॉडल कानून को सम्मिलित किया गया।
- इसके अतिरिक्त समवर्ती सूची के कुछ विषयों हेतु **बृहत् मात्रा में वित्त-पोषण** की आवश्यकता होती है, जिसमें केंद्र एवं राज्य सरकारों द्वारा योगदान किया जाता है।

समवर्ती सूची पर सरकारिया आयोग की अनुशंसाएं

- कराधान की अवशिष्ट शक्तियां संसद के पास ही बनी रहनी चाहिए, जबकि अन्य अवशिष्ट शक्तियों को समवर्ती सूची में शामिल किया जाना चाहिए।
- केंद्र को समवर्ती सूची के किसी विषय पर विधि निर्माण करने से पूर्व राज्यों से परामर्श करना चाहिए।
- सामान्यतः संघ को समवर्ती सूची के किसी विषय के केवल उतने ही कार्य क्षेत्र पर आधिपत्य स्थापित करना चाहिए, जो देश के व्यापक हित हेतु नीति एवं कार्रवाई की समरूपता के लिए आवश्यक हो, शेष कार्य क्षेत्र एवं विवरण को राज्य हेतु छोड़ देना चाहिए।

समवर्ती सूची में विस्तार और शक्ति के केन्द्रीकरण का मुद्दा

- वर्ष 1950 से ही संविधान की सातवीं अनुसूची में अनेक संशोधन किए गए हैं। **संघ सूची एवं समवर्ती सूची के विषयों में वृद्धि हुई है, जबकि राज्य सूची के विषयों में निरंतर कटौती हुई है।**
- **42वें संविधान संशोधन अधिनियम** को 1976 में क्रियान्वित किया गया था, जिसने सातवीं अनुसूची को पुनर्संरचित करते हुए शिक्षा, वन, वन्य जीवजंतुओं एवं पक्षियों का संरक्षण, न्याय प्रशासन, बाट एवं माप-तौल जैसे राज्य सूची के विषयों का समवर्ती सूची में हस्तांतरण सुनिश्चित किया।
- केंद्र-राज्य संबंधों की समीक्षा हेतु तमिलनाडु सरकार द्वारा **पी. वी. राजमन्नार समिति** का गठन किया गया। इस समिति ने 42वें संशोधन अधिनियम और पूर्व में (ऐतिहासिक रूप से) राज्य सूची के तहत शामिल विषयों पर केंद्र द्वारा अतिक्रमण के कारण उत्पन्न नए शक्ति-संबंध का विरोध करने हेतु अन्य राज्यों को प्रेरित किया।
- राज्यों द्वारा किए गए विरोध के परिमाणस्वरूप केंद्र-राज्य संबंधों की समीक्षा हेतु **सरकारिया आयोग** का गठन किया गया। हालांकि, सरकारिया आयोग की अनुशंसाओं को उत्तरवर्ती केंद्र सरकारों द्वारा क्रियान्वित नहीं किया गया।

समवर्ती सूची से संबंधित मुद्दे

- **राज्यों की सीमित क्षमता:** समवर्ती सूची के किसी विषय पर संसद द्वारा अधिनियमित कुछ विधियों के क्रियान्वयन हेतु राज्य सरकारों को धन आबंटित करने की आवश्यकता पड़ सकती है। परंतु, संघीय वर्चस्व के कारण राज्यों को इन विधियों का अनुपालन करने के लिए बाध्य किया जाता है, जिसके लिए उनके पास **पर्याप्त मात्रा में वित्तीय संसाधन उपलब्ध नहीं होते हैं।**
- **लचीलापन एवं समरूपता के मध्य संतुलन:** कुछ विधियां **राज्यों को समरूपता प्राप्त करने हेतु उनकी आवश्यकताओं के अनुसार इनके क्रियान्वयन हेतु अत्यधिक कम अवसर** प्रदान करती हैं।
  - केंद्र के स्तर पर विधियों की व्याख्या संपूर्ण देश में विधिक समरूपता सुनिश्चित करती है और समान सुरक्षा एवं अधिकार प्रदान करती है।
  - हालाँकि, यह राज्यों के लिए उनकी विविध स्थानीय परिस्थितियों के अनुरूप विधियों को अनुकूलित करने संबंधी नम्यता (flexibility) को कम करता है।

VISION IAS

- **राज्यों के अधिकार क्षेत्र का अतिक्रमण:** कुछ विधेयक **राज्यों के अधिकारों का प्रत्यक्षतः अतिक्रमण** कर सकते हैं, अर्थात् केन्द्रीय कानून से संबंधित विषय जो राज्य विधान-मण्डलों के अधिकार क्षेत्र में शामिल हैं। उदाहरणार्थ: आतंकवाद-रोधी कानून, लोकपाल विधेयक, वस्तु एवं सेवा कर (GST) तथा आधार कानून से संबंधित मुद्दे इत्यादि, जहां राज्यों के अधिकार को अप्रत्यक्ष रूप से कम किया जा रहा है।

यह असमरूपता, संघवाद पर एक व्यापक सार्वजानिक विचार-विमर्श तथा समवर्ती सूची के विषयों से संबंधित मुद्दों का समाधान करने की आवश्यकता को रेखांकित करती है।

क्या कदम उठाए जाने चाहिए?

- **अंतर्राज्यीय परिषद् को सुदृढ़ बनाना:** विगत वर्षों में गठित विभिन्न आयोगों (जैसे- राजमन्नार, सरकारिया और पुंछी) ने अंतर्राज्यीय परिषद् के सुदृढ़ीकरण की अनुशंसा की है, जहाँ केंद्र-राज्य संबंधों को संतुलित करने हेतु समवर्ती सूची के विषयों पर वाद-विवाद एवं चर्चा की जा सकती है। अंतर्राज्यीय विवादों का समाधान करने हेतु बहुत कम संस्थागत विकल्प उपलब्ध होने के कारण अंतर्राज्यीय परिषद् जैसी संवैधानिक संस्था अत्यधिक उपयोगी सिद्ध हो सकती है।
- **राज्यों को स्वायत्तता:** केंद्र को ऐसे मॉडल कानूनों का निर्माण करना चाहिए जिसमें परिवर्तन करने हेतु राज्यों के पास पर्याप्त अवसर हों। राज्यों को बजटीय बोझ से बचाने के लिए केंद्र को उन्हें पर्याप्त बजटीय सहायता प्रदान करनी चाहिए। साथ ही, राज्य के विषयों में कम से कम हस्तक्षेप करना चाहिए।

1.7. केंद्र प्रायोजित योजनाओं का युक्तियुक्तकरण

(Rationalisation of Centrally Sponsored Schemes)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, 15वें वित्त आयोग के अध्यक्ष **एन. के. सिंह** ने केंद्र प्रायोजित योजनाओं (CSSs) को अधिक युक्तिसंगत बनाने की आवश्यकता पर बल दिया है।

पृष्ठभूमि

- **केंद्र प्रायोजित योजनाएं (CSSs),** केंद्र सरकार द्वारा राज्यों को हस्तांतरित योजनाएं होती हैं। इनका कार्यान्वयन राज्य सरकारों द्वारा किया जाता है। ये योजनाएँ राज्य सूची एवं समवर्ती सूची में शामिल क्षेत्रों से संबंधित होती हैं।
- **CSS वस्तुतः राज्य की योजनाओं हेतु केन्द्रीय सहायता का सबसे बड़ा घटक** हैं। ज्ञातव्य है कि इनके अंतर्गत राज्यों को अधिक लोचशीलता (flexibility) प्राप्त नहीं होती है।
- भारत में योजना काल के आरंभिक वर्षों में CSS की संख्या सर्वाधिक थी; उदाहरणार्थ- 5वीं पंचवर्षीय योजना के अंत तक इनकी संख्या 190 थी, जो **9वीं योजना के अंत तक बढ़ कर 360 हो गई।**
- CSSs राज्यों एवं केंद्र के मध्य **विवाद का एक प्रमुख विषय** बनी हुई हैं। इसके परिणामस्वरुप विभिन्न समितियों द्वारा इस मुद्दे की समीक्षा करते हुए अपनी अनुशंसाएं प्रस्तुत की गई हैं।
- इस संबंध में सरकार ने **मुख्यमंत्रियों के उप-समूह** द्वारा प्रस्तुत अनुशंसाओं को स्वीकार किया है तथा CSSs को युक्तिसंगत बनाने हेतु विभिन्न उपाय अपनाए गए हैं।

CSS की आवश्यकता

- **विकास के राष्ट्रीय ढांचे का सृजन:** महत्वपूर्ण राष्ट्रीय उद्देश्यों की प्राप्ति हेतु जैसे निर्धनता उन्मूलन या शिक्षा के क्षेत्र में न्यूनतम मानकों की स्थापना।
- **राज्यों के वित्तीय संसाधनों हेतु पूरक व्यवस्था:** क्योंकि राज्यों के पास उत्तरदायित्वों की तुलना में न्यूनतम संसाधन विद्यमान हैं।
- **समावेशी विकास:** विशेष श्रेणी के राज्यों को अतिरिक्त सहायता प्रदान की जाती है ताकि देश में संतुलित विकास सुनिश्चित किया जा सके।
- **योजनाओं के बेहतर कार्यान्वयन में सहायता:** इससे बेहतर विशेषताओं को प्रदर्शित करने, विभिन्न पहलुओं पर अनुसंधान करने तथा सुधारों का अनुसरण करने हेतु अन्य राज्यों को प्रोत्साहित करने में सहायता प्राप्त हो सकती है।

VISION IAS

CSS की वर्तमान संरचना:

CSS के प्रकार	मानदंड	वित्तपोषण प्रतिमान (केंद्र : राज्य)	योजनाएं
अति महत्वपूर्ण योजनाएँ (Core of the Core) (6)	राज्यों की अनिवार्य भागीदारी	• सामान्य श्रेणी के राज्य: मौजूदा प्रतिमान • विशेष श्रेणी के राज्य: मौजूदा प्रतिमान	• मनरेगा (MGNREGA) • राष्ट्रीय सामाजिक सहायता कार्यक्रम (वरिष्ठ नागरिक, महिलाएं आदि के लिए) • अनुसूचित जाति (SC) हेतु अम्ब्रेला योजना (SC हेतु एक ही योजना के अंतर्गत शामिल सभी योजनाएं) • अनुसूचित जनजाति (ST) हेतु अम्ब्रेला योजना (ST हेतु एक ही योजना के अंतर्गत शामिल सभी योजनाएं) • अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) हेतु अम्ब्रेला योजना (OBC हेतु एक ही योजना के अंतर्गत शामिल सभी योजनाएं) • अल्पसंख्यकों हेतु अम्ब्रेला योजना (अल्पसंख्यकों हेतु एक ही योजना के अंतर्गत शामिल सभी योजनाएं)
महत्वपूर्ण योजनाएँ (Core) (20)	राज्यों की अनिवार्य भागीदारी	• सामान्य श्रेणी के राज्य: 60: 40 • विशेष श्रेणी के राज्य: 90: 10	राष्ट्रीय कृषि विकास योजना, राष्ट्रीय पशुधन विकास योजना, प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना, राष्ट्रीय ग्रामीण पेयजल मिशन, राष्ट्रीय स्वास्थ्य मिशन, स्वच्छ भारत अभियान, समेकित बाल विकास योजना, राष्ट्रीय शिक्षा अभियान, वानिकी और वन्य जीवन, प्रधानमंत्री आवास योजना आदि।
वैकल्पिक (Optional) (2)	राज्य या तो सभी अथवा किसी एक का चयन कर सकते हैं।	• सामान्य श्रेणी के राज्य: 50: 50 • विशेष श्रेणी के राज्य: 80: 20	• सीमा क्षेत्र विकास कार्यक्रम (BADP) • राष्ट्रीय नदी संरक्षण योजना

CSS को युक्तिसंगत बनाने हेतु किए गए उपाय

- **विचार-विमर्श में राज्यों की भागीदारी:** वर्ष 2014-15 में, राज्य की कार्यान्वयन एजेंसियों को किए जाने वाले प्रत्यक्ष **अंतरण** को समाप्त कर दिया गया। वर्तमान में **CSS** हेतु राज्यों को सभी अंतरण राज्यों की संचित निधि के माध्यम से किए जा रहे हैं।
- **CSS की संख्या में कमी:** वर्तमान में CSSs की संख्या को **66 से घटाकर 28** कर दिया गया है तथा इन्हें तीन श्रेणियों में भी विभाजित किया गया है।
- **राज्यों को प्रदत्त विकल्पों में वृद्धि:** राज्यों को उनके द्वारा कार्यान्वित की जाने वाली वैकल्पिक योजनाओं के चयन का विकल्प प्रदान किया गया है। इसके अतिरिक्त, CSS के डिजाइन करने के क्रम में, केन्द्रीय मंत्रालयों द्वारा राज्यों को घटकों के चयन करने की छूट प्रदान की गई है। उदाहरणार्थ इस प्रकार की सुविधा राष्ट्रीय कृषि विकास योजना (RKVY) के तहत उपलब्ध है।
- **निधियों के उपयोग से संबंधित कठोरता में कमी:** प्रत्येक CSS के लिए किये जाने वाले समग्र वार्षिक आबंटन में फ्लेक्सी-फंड्स (लोचशील निधि) की राशि में वृद्धि की गई है। राज्यों और संघ शासित प्रदेशों हेतु इसे 10% से बढ़ाकर क्रमशः 25% और 30% कर दिया गया है।
- **CSS का मूल्यांकन:** CSS के अनुमोदन को वित्त आयोग की समयावधि के साथ संबद्ध (को-टर्मिनस) किया जा रहा है। नीति आयोग सभी CSSs के मूल्यांकन प्रक्रिया में शामिल है।

CSS के प्रति राज्यों की शिकायतें

- **राज्यों के कार्यों का अतिक्रमण:** क्योंकि, CSS का निर्माण सातवीं अनुसूची के अंतर्गत राज्य सूची के विषयों के आधार पर किया जाता है।
- **योजनाओं का प्रसार:** योजनाओं की अत्यधिक संख्या के कारण पर्याप्त संसाधन उपलब्ध नहीं होते हैं, जिसके कारण इन योजनाओं के परिणाम (आउटकम) भी प्रतिकूल रुप से प्रभावित होते हैं।

- **"वन साइज़ फिट फॉर ऑल" की समस्या:** विकास संकेतकों तथा संसाधनों की उपलब्धता के संदर्भ में राज्यों के मध्य विद्यमान भिन्नताओं के कारण अनेक योजनाएं कई राज्यों के लिए प्रासंगिक नहीं हैं।
- हाल ही में समाविष्ट लोचशील निधि (फ्लेक्सी-फंड) के प्रावधान के बावजूद, इन योजनाओं के कार्यान्वयन में राज्यों को **सीमित स्वायत्तता** प्राप्त है।
- **राज्यों के साथ अपर्याप्त विचार-विमर्श:** नवीन योजनाओं को प्रारंभ करने से पूर्व राज्यों से पर्याप्त विचार-विमर्श नहीं किया जाता हैं। प्राय: राज्यों की वित्तीय स्थिति पर भी उचित ध्यान नहीं दिया जाता है।

CSS को अधिक युक्तिसंगत बनाने की संभावनाएं

- **निधियों के अंतरण की प्रक्रिया में सुधार करना:** क्योंकि निधियों के अबाध प्रवाह के संदर्भ में राज्य सरकारों को अनेक कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।
- **प्रदर्शन आधारित वित्तीयन मॉडल को अपनाने में सहायता प्राप्त हो सकती है:** सार्वजनिक योजनाओं के प्रदर्शन को तात्कालिक परिणामों (आउटपुट) तथा दीर्घकालिक परिवर्तनों (आउटकम) के एक संयोजन के रुप में परिभाषित किया जाना चाहिए। राज्य सरकारों द्वारा प्राप्त निधियों के निवेश हेतु अनुकूल घटकों के चयन में अत्यधिक लोचशीलता प्रदान करते हुए, एक प्रदर्शन आधारित वित्तीयन मॉडल को डिजाइन किया जा सकता है।
- **क्षेत्र के व्यापक विकास को समक्ष बनाना:** जिन क्षेत्रों में केन्द्रीय निधि उपलब्ध होती है उनमें राज्यों द्वारा विकास हेतु पर्याप्त प्रयास नहीं किए जाते है, जैसे- कृषि क्षेत्र में बीज उत्पादन। ऐसे में केन्द्रीय निधियों का प्रयोग संतुलित विकास हेतु किया जा सकता है, जो राज्यों के संसाधनों के लिए अनुपूरक हो सकता है।

आगे की राह

केंद्र प्रायोजित योजनाएं सहकारी संघवाद और प्रतिस्पर्धात्मक संघवाद हेतु एक महत्वपूर्ण उपकरण हैं, जिनकी सहायता से देश के विभिन्न क्षेत्रों की विकासात्मक आवश्यकताओं को पूर्ण किया जा सकता है।

2. संवैधानिक उपबंधो से संबंधित मुद्दे (Issues Related to Constitutional Provisions)

2.1. आधार की संवैधानिक वैधता

(Aadhaar Constitutionally Valid)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, उच्चतम न्यायालय की एक संविधान पीठ द्वारा 4:1 बहुमत से कुछ प्रशर्तों के साथ आधार (Aadhaar) की वैधता को बनाए रखा गया है।

पृष्ठभूमि

- आधार हेतु एक व्यक्ति के जनसांख्यिकीय और बॉयोमीट्रिक डेटा अनिवार्य रूप से आवश्यक होते हैं, जिसे निजता के मौलिक अधिकार के विरुद्ध माना गया है।
- आधार और भारतीय विशिष्ट पहचान प्राधिकरण (UIDAI) को वैधानिक समर्थन प्रदान करने हेतु आधार अधिनियम, 2016 को धन विधेयक के रूप में पारित किया गया था। इसे धन विधेयक के रूप में पारित करना भी विवाद का विषय रहा था।
- अब तक भारत में कोई विशिष्ट डेटा गोपनीयता कानून विद्यमान नहीं है, जो राज्य निगरानी और वाणिज्यिक संस्थाओं द्वारा **व्यक्तिगत डेटा के दुरुपयोग संबंधी चिंताओं** को उत्पन्न करता है।

आधार:

जहां आवश्यक है:

- कल्याणकारी योजनाएं (PDS, LPG, मनरेगा इत्यादि)
- आयकर रिटर्न
- पैन कार्ड से लिंक करना

आवश्यक नहीं है:

- बैंक खाते
- सिम कार्ड
- निजी कंपनियों
- स्कूल में प्रवेश
- NEET, UGC, CBSE

इस निर्णय के प्रमुख बिंदु:

- **आधार की संवैधानिकता:**आधार अधिनियम द्वारा समर्थित आधार योजना निजता से संबंधित **पुट्टास्वामी वाद** के निर्णय में निर्धारित **ट्रिपल टेस्ट** के अनुरूप है, जो अनुच्छेद 21 के तहत निजता के उल्लंघन की तर्कसंगतता का निर्धारण करता है।
    - **विधि की विद्यमानता (Existence of a law)**: संविधि अर्थात आधार अधिनियम, 2016 द्वारा समर्थित।
    - एक वैध राज्य हित **(A legitimate state interest)** - पात्र एवं निर्धन वर्ग तक सामाजिक लाभ योजनाओं की पहुँच सुनिश्चित करना।
    - **आनुपातिकता की जांच (Test of proportionality)** - आधार के संतुलित लाभ और निजता के मौलिक अधिकार संबंधी संभावित खतरे।
- **राज्य द्वारा निगरानी किए जाने संबंधी भय की समाप्ति:** आधार अधिनियम के प्रावधान "निगरानी करने वाले राज्य के निर्माण का मार्ग प्रशस्त नहीं करते हैं"।
    - आधार के अंतर्गत आईरिस और फिंगरप्रिंट के रूप में न्यूनतम बॉयोमीट्रिक डेटा एकत्र किया जाता है तथा UIDAI (जिसके द्वारा आधार के नामांकन सम्बन्धी कार्यों की निगरानी की जाती है) प्रयोजनपूर्ण, अवस्थिति या लेन-देनों के विवरण संबंधी आंकड़े एकत्र नहीं करता है।
    - गैर निगरानी सुनिश्चित करने हेतु, न्यायालय ने आदेश दिया कि प्रमाणीकरण रिकाड्र्स को प्रमाणीकरण विनियमों के मौजूदा विनियम 27 (1) के तहत निर्धारित पांच वर्षों के स्थान पर छह माह के पश्चात ही हटा दिया जाना चाहिए।

VISION IAS

- **बॉयोमीट्रिक डेटा की सुरक्षा:** UIDAI द्वारा बॉयोमीट्रिक आधारित प्रमाणीकरण संबंधी लेन-देनों के संचालन हेतु केवल पंजीकृत उपकरणों के उपयोग को ही अधिकृत किया गया है।
  - होस्ट एप्लिकेशन और UIDAI के मध्य एक **एन्क्रिप्टेड, एकदिशीय संबंध** है। यह संग्रहीत बॉयोमीट्रिक डेटा के उपयोग या किसी अन्य स्रोत से प्राप्त बॉयोमीट्रिक्स डेटा के पुनःप्रदर्शन की किसी भी संभावना को समाप्त करता है।
  - इसके अतिरिक्त, विनियमों के अनुसार, प्रमाणीकरण एजेंसियों को आधार प्रमाणीकरण के लिए प्राप्त बॉयोमीट्रिक्स डेटा को संग्रहित करने की अनुमति नहीं है।
- **वित्तीय लेन-देन के साथ आधार को जोड़ना:** धन शोधन निवारण (अभिलेखों का रखरखाव) अधिनियम, 2005 के नियम 9 में 2017 में संशोधन किया गया था, जिसके द्वारा बैंक खातों एवं म्यूचुअल फंड, क्रेडिट कार्ड, बीमा पॉलिसी जैसे अन्य सभी वित्तीय उपकरणों को आधार से अनिवार्य रूप से लिंक करने संबंधी प्रावधान को असंवैधानिक घोषित किया गया। **चूंकि संशोधन के अंतर्गत ट्रिपल टेस्ट में आनुपातिक जांच का प्रावधान नहीं किया गया है,** इस प्रकार यह व्यक्ति की निजता के अधिकार का उल्लंघन करता है, जिसमें बैंकों से संबंधित विवरण भी शामिल हैं।
- **धन विधेयक के रूप में आधार अधिनियम:** अधिनियम का मुख्य प्रावधान धारा 7 है। उच्चतम न्यायालय ने धन विधेयक के रूप में पारित आधार अधिनियम की वैधता को बनाए रखा है।
  - आधार अधिनियम की धारा 7 के तहत सब्सिडी, लाभ या सेवा इत्यादि प्राप्त करने हेतु आधार आधारित प्रमाणीकरण का प्रावधान किया गया है। इस प्रावधान में यह स्पष्ट रूप से घोषित किया गया है कि इस प्रकार की सब्सिडी, लाभ या सेवा के संबंध में किए गए व्यय भारत की संचित निधि पर भारित होंगे।
- इस प्रकार के मुद्दे पर न्यायालय द्वारा धारा 59 की वैधता को बनाए रखा गया है, जो आधार अधिनियम, 2016 के अधिनियमित होने से पूर्व किए गए सभी आधार नामांकन को भी वैधता प्रदान करती है। न्यायालय द्वारा कहा गया है कि, चूंकि नामांकन की प्रकृति स्वैच्छिक थी, इसलिए जो लोग विशेष रूप से स्वीकृति प्रदान करने से मना करते हैं, उन्हें आधार योजना से बाहर निकलने की अनुमति प्राप्त होगी।

निर्णय का प्रभाव

- **विनियम 27 (1) को अमान्य घोषित करना** और प्रमाणीकरण डेटा की भंडारण अवधि को पांच वर्ष से छह माह करना, यह सुनिश्चित करेगा कि **व्यक्तिगत डेटा का दुरुपयोग नहीं किया गया है।**
  - विनियम 26 में संशोधन करने और लेन-देन से संबंधित मेटाबेस को अस्वीकार्य बनाने से आधार धारक की फेक प्रोफाइलिंग की रोकथाम होगी।
- धारा 47 को अमान्य घोषित करने का अर्थ है कि **नागरिक, डेटा चोरी के मामले में शिकायत दर्ज कर सकते हैं**, जो पूर्व में केवल सरकार (अर्थात् UIDAI) द्वारा ही किया जा सकता था।
- आधार अधिनियम की **धारा 57** के उस भाग को असंवैधानिक माना गया है, जो निगम और व्यक्तिगत निकाय को प्रमाणीकरण करने हेतु सक्षम बनाता है। इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि **आधार का उपयोग केवल सरकार द्वारा किया जा सकता है, न कि निजी पक्षों द्वारा।**
- यह निर्णय आधार के अनेक पहलुओं से संबंधित **अस्पष्टता को स्पष्ट** करता है तथा सुशासन और सामाजिक कल्याण सेवाओं के प्रभावी वितरण के लिए इसकी क्षमता को प्रकट करता है।
- संवैधानिक पीठ द्वारा आधार अधिनियम की धारा 33 (2) के तहत राष्ट्रीय सुरक्षा अपवाद को अमान्य घोषित किया गया है, जबकि आधार अधिनियम की धारा 33 (1) के तहत सूचनाओं के प्रकटीकरण से पूर्व नागरिकों को सुनवाई का अवसर प्रदान किया गया है। यह अप्रत्यक्ष रूप से व्यक्तियों के आधार डेटा की अधिक गोपनीयता को सुनिश्चित करता है, वही सरकार की इस डेटा तक पहुंच को सीमित करता है।
- शिक्षा और स्कूल में दाखिले के लिए आधार की आवश्यकता को भी प्रतिबंधित कर दिया गया है। इसने बच्चों (6-14 वर्ष) के शिक्षा के मूल अधिकार (अनुच्छेद 21A) को बनाए रखा है और माना है कि दाखिला न तो एक सेवा है और न ही सब्सिडी।
- न्यायालय द्वारा अनिवार्य सामाजिक कल्याणकारी अनिवार्यताओं एवं नागरिक के निजता के मूल अधिकार के मध्य एक संवेदनशील संतुलन स्थापित किया गया है।

VISION IAS

आधार अधिनियम की धारा 33 कुछ मामलों में सूचना के प्रकटीकरण को संदर्भित करती है:

- **धारा 33 (1):** यदि न्यायालय (जिसकी अधिकारिता जिला न्यायाधीश से नीचे की न हो) द्वारा आदेश दिया गया है तो यह धारा पहचान और प्रमाणीकरण रिकॉर्ड के प्रकट करने सहित सूचना के प्रकटीकरण की अनुमति प्रदान करती है।
- **धारा 33 (2):** यह, एक अधिकारी (भारत सरकार के संयुक्त सचिव या उससे उच्च रैंक) के निदेशन में राष्ट्रीय सुरक्षा के हित में पहचान और प्रमाणीकरण डेटा को उद्घाटित करने की अनुमति प्रदान करती है।

आधार अधिनियम की धारा 47 अपराधों के संज्ञान को संदर्भित करती है। इस धारा के अंतर्गत, किसी अधिकारी या उसके द्वारा अधिकृत व्यक्ति द्वारा की गई शिकायत के अतिरिक्त किसी भी न्यायालय को इस अधिनियम के तहत दंडनीय अपराध के संज्ञान लेने की अनुमति नहीं है।

चुनौतियां, जो अभी भी विद्यमान हैं:

- **फिनटेक कंपनियों के लिए,** जहां धोखाधड़ी और प्रतिरूपण का उच्च जोखिम है, आधार एक सुदृढ़ सहायता प्रदान करता है। यह ग्राहकों के ऑनलाइन प्रमाणीकरण की अनुमति प्रदान करता है, जिससे वित्तीय सेवाओं का त्वरित प्रचालन किया जाता है और सेवा संबंधी पहलुओं में भी सुधार करता है। यह निर्णय डेटा की गोपनीयता की सुरक्षा सुनिश्चित करने के स्थान पर इसकी एक **समर्थकारी भूमिका को समाप्त करने** की भांति कार्य करता है।
- **निर्धनों पर आधार को अनिवार्य बनाने के प्रभाव:** आसान पहुंच को सक्षम बनाने के स्थान पर, तकनीकी प्रमाणीकरण समस्याओं के कारण उन्हें उनके अधिकारों से वंचित करके हानि पहुंचा सकता है।
- **निजता:** हमें एक सुदृढ़ डेटा संरक्षण कानून की आवश्यकता है जो सरकार और निजी पक्षों को आधार के गैर-सहमति प्राप्त उपयोग करने से प्रतिबंधित करता हो । इस संबंध में **न्यायमूर्ति श्रीकृष्ण समिति द्वारा की गई अनुशंसाएं महत्वपूर्ण सिद्ध** हो सकती हैं।
- संग्रहित आधार डेटा से संबंधित **राईट टू फॉरगॉटन मुद्दें** में अभी भी अस्पष्टताएं विद्यमान हैं। इस निर्णय में स्पष्ट रूप से यह निर्धारित नहीं किया गया है कि बैंकों और मोबाइल कंपनियों जैसी इकाईयों को एकत्रित सूचनाओं को हटाना होगा।
- **आधार एक एकल पहचानकर्ता के रूप में:** यदि आधार संख्या प्रत्येक डेटाबेस (ट्रेन यात्रा, हवाई यात्रा, बैंक खाता, मोबाइल फोन, रोजगार वृत्तांत, स्वास्थ्य आदि) में 'निहित' है, तो यह इन डेटा संग्रहों को एकीकृत करता है। इस प्रकार आधार असंबद्ध डेटा भंडारों के मध्य की संयोजक कड़ी (bridge) बन गया है।
    - सरकारी कर्मचारी उस एकल पहचानकर्ता का उपयोग करके विभिन्न डेटाबेस से प्राप्त सूचनाओं के माध्यम से नागरिकों की 'प्रोफ़ाइल' का निर्माण करने में सक्षम हों सकेंगे।
    - इस प्रकार की प्रोफाइलिंग के माध्यम से स्व -नियंत्रण (self-censorship) को बढ़ावा मिलने तथा असहमति को समाप्त करने की संभावना है।
- **अल्पमत निर्णय:** बहुमत वाले न्यायाधीशों के विपरीत, न्यायमूर्ति चंद्रचूड़ ने सभी तर्कों को अस्वीकृत कर दिया और आधार अधिनियम को निजता के उल्लंघन, सर्वव्यापी राज्य नियंत्रण और अपवर्जन के आधार पर असंवैधानिक माना है। इसके अतिरिक्त, उन्होंने कहा कि आधार अधिनियम को धन विधेयक के रूप में पारित करना "संविधान के साथ धोखाधड़ी" था।

2.2. आरक्षण

(Reservation)

पृष्ठभूमि

- संविधान निर्माताओं द्वारा की गई परिकल्पना के अनुसार **आरक्षण का उद्देश्य** पिछड़ी जातियों को विशेष स्थिति प्रदान करके **सामाजिक न्याय** प्रदान करना था क्योंकि उन्हें कई पीढ़ियों से समान अवसरों से वंचित किया गया था। अन्य अगड़ी जातियों के समान विकास में भागीदारी प्रदान करने हेतु इन जातियों पर विशेष रूप से ध्यान दिए जाने की आवश्यकता थी।
- बाद में **मंडल आयोग** की अनुशंसा के आधार पर अन्य पिछड़े वर्गों (OBCs) को भी आरक्षण दिया गया। मंडल आयोग ने आवश्यक आंकड़ों और साक्ष्यों के माध्यम से उन जातियों की पहचान की जो **सामाजिक, शैक्षणिक और आर्थिक रूप से पिछड़ी थीं**। अन्य पिछड़े वर्गों (OBCs) को शिक्षा और रोजगार के अवसरों में आरक्षण दिया गया है लेकिन राज्य विधानसभाओं या संसद में कोई आरक्षण नहीं दिया गया है।
- हालाँकि, हाल के वर्षों में **ऐतिहासिक रूप से समृद्ध एवं भूस्वामित्व धारक प्रभुत्वशाली जातियों, राजनीतिक रूप से प्रभावशाली समुदायों (महाराष्ट्र में मराठा, गुजरात में पाटीदार, हरियाणा में जाट, आंध्र प्रदेश में कापू)** आदि द्वारा भी राज्य और सार्वजनिक क्षेत्रक से रोजगार एवं उच्च शिक्षा में आरक्षण की माँग की जा रही है।

VISION IAS

- आरक्षण को **सामाजिक उन्नयन की दिशा में गतिशीलता के लिए उपलब्ध एकमात्र उपकरण के रूप में तथा युवाओं के लिए** अच्छे रोजगार और आजीविका के स्थिर स्रोत हेतु **एक उपकरण के रूप में देखे जाने की प्रवृत्ति निरंतर बढ़ती जा रही है।**

प्रमुख जातियों द्वारा आरक्षण की मांग क्यों?

- वर्तमान में अप्रचलित हो चुकी व्यापार या विनिर्माण प्रक्रिया में संलग्न उच्च जातियों का **आर्थिक रूप से हाशिए पर आ जाना।**
- **कृषि संकट:** आरक्षण की मांग करने वाली जातियां मुख्य रूप से कृषि समुदाय से संबंधित हैं। कृषि के गिरते महत्व और उत्पादकता को प्रभावित करने वाली निगमीकृत कृषि और जल की कमी के कारण, ये समूह स्वयं को अत्यधिक असुरक्षित अनुभव करते हैं।
- **शक्ति क्षीणता की धारणा:** शक्तिशाली कृषक समुदायों के बीच यह भावना व्याप्त है कि वास्तविक आर्थिक सत्ता बड़े निगमों के हाथों में केंद्रित हो गई है और राज्य उनके ही हित में कार्य करते हैं। इसलिए इन समुदायों को ऐसा लग रहा है कि इनकी शक्ति छिन रही है।
- **स्थिति के अधिक खराब होने की धारणा:** जब किसी समुदाय को यह प्रतीत होता है कि उसके क्षेत्र में आर्थिक और सामाजिक रूप से समान स्थितियों वाले अन्य समुदायों को आरक्षण का लाभ मिल रहा है, तो वे भी उसी स्थिति के लिए दावा करते हैं।
- **सुरक्षित भविष्य के लिए: सुरक्षित भविष्य** का एकमात्र समाधान सरकारी नौकरी या पेशेवर पाठ्यक्रमों में प्रवेश है। पेशेवर पाठ्यक्रमों में प्रवेश के लिए बेहतर शैक्षणिक संस्थान में प्रवेश की आवश्यकता होती है। दोनों के लिए सामान्य वर्ग में कड़ी प्रतिस्पर्धा विद्यमान है।

2.2.1. पदोन्नति में आरक्षण

(Reservation in Promotion)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, पांच-न्यायाधीशों की एक संविधान पीठ ने अनुसूचित जातियों (SCs) और अनुसूचित जनजातियों (STs) के पिछड़ेपन को दर्शाने वाले "मात्रात्मक डेटा एकत्रित करने" (collect quantifiable data) की आवश्यकता के बगैर सरकारी नौकरियों में इन समुदायों को पदोन्नति के लिए कोटा प्रदान करने की अनुमति प्रदान की है। उल्लेखनीय है कि "मात्रात्मक डेटा एकत्रित करने" की आवश्यकता को उच्चतम न्यायालय द्वारा वर्ष 2006 के नागराज वाद में अधिदेशित किया गया था।

पृष्ठभूमि

- **आरक्षण** के प्रावधान को भारत के संविधान में अनुच्छेद 16(4) के माध्यम से समाज में दीर्घकाल से भेदभाव का सामना कर रहे वंचित वर्गों को संरक्षण प्रदान करने हेतु शामिल किया गया था।
- क्या आरक्षण के प्रावधान को **प्रारंभिक नियुक्तियों** तक सीमित किया जाना चाहिए या इसे **पदोन्नति तक विस्तारित** किया जाना चाहिए, यह प्रश्न आरंभ से ही एक विवाद का मुद्दा रहा है।
- **इंदिरा साहनी और अन्य बनाम भारत संघ, 1992** (आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों के लिए आरक्षण वाले भाग को देखें)।
- **एम. नागराज बनाम भारत संघ वाद 2006**
    - उच्चतम न्यायालय ने अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के लिए पदोन्नति में आरक्षण के विस्तार संबंधी राज्य के निर्णय को वैध ठहराया था, किंतु इसने यह भी निर्देश दिया था कि राज्य द्वारा इस हेतु निम्नलिखित तीन मापदंडों के आधार पर प्रमाण उपलब्ध कराए जाने चाहिए-
        - आरक्षण से लाभान्वित होने वाले वर्ग के **पिछड़ेपन संबंधी अनुभवजन्य आंकड़े;**
        - उस पद/सेवा में जिसके लिए पदोन्नति में आरक्षण दिया जाना है, से सम्बद्ध **अपर्याप्त प्रतिनिधित्व संबंधी अनुभवजन्य आंकड़े; और**
        - **दक्षता पर प्रभाव,** कि पदोन्नति में आरक्षण प्रशासनिक दक्षता में किस प्रकार वृद्धि करेगा।

संबंधित वाद, संवैधानिक प्रावधान और संशोधन

- **अनुच्छेद 15(4)** राज्य को नागरिकों के किसी भी सामाजिक और शैक्षणिक रूप से पिछड़े वर्गों अथवा SCs एवं STs की उन्नति हेतु विशेष प्रावधान उपबंधित करने की अनुमति प्रदान करता है।
- **अनुच्छेद 16(4B)** के अनुसार, यदि SCs एवं STs हेतु आरक्षित पदोन्नति वाले पद रिक्त रह जाते हैं तो उन्हें उत्तरवर्ती वर्षों में भरा जा सकता है। यह सुनिश्चित करता है कि इंदिरा साहनी वाद के तहत निर्धारित 50% आरक्षण की अधिकतम सीमा इन रिक्त पदों पर उत्तरवर्ती वर्षों में की जाने वाली भर्तियों पर लागू नहीं होंगी।
- **अनुच्छेद 335** वर्णित करता है कि "संघ या राज्य के कार्यकलाप से संबंधित सेवाओं और पदों के लिए SCs एवं STs के सदस्यों के दावों का **'प्रशासन की दक्षता बनाए रखने'** की संगति के अनुसार ध्यान रखा जाएगा।

VISION IAS

- **इंदिरा साहनी वाद (1992)** में उच्चतम न्यायालय ने यह निर्धारित किया कि आरक्षण नीति को पदोन्नति तक विस्तारित नहीं किया जा सकता है।
- हालांकि, **77वें संविधान संशोधन द्वारा अनुच्छेद 16 में खंड 4A अंतःस्थापित किया गया,** जो राज्य को SCs एवं STs के लिए पदोन्नति में आरक्षण से संबंधित विधि निर्माण हेतु सक्षम बनाता है।
- 1990 के दशक में न्यायालय ने पदोन्नत होने पर अनारक्षित प्रत्याशियों की वरिष्ठता को पुनः उन SC/ST प्रत्याशियों के अनुरूप बहाल करने का प्रावधान कर दिया जिन्होंने अपने अनारक्षित समकक्षों की तुलना में शीघ्रता से पदोन्नति प्राप्त की हो।
- हालांकि, **85वें संविधान संशोधन अधिनियम, 2001 द्वारा SCs/STs के उत्थान हेतु "परिणामी वरिष्ठता" के सिद्धांत** को पुनः लागू किया गया।

हाल के निर्णय से संबंधित अन्य तथ्य

- केंद्र ने आरोप लगाया था कि एम नागराज वाद निर्णय द्वारा कोटा लाभ प्रदान करने हेतु अनावश्यक शर्तें रखी गयी है।
- पीठ द्वारा 2006 के नागराज वाद निर्णय द्वारा प्रदान की गई **दो अन्य शर्तों के संबंध में परिवर्तन नहीं** किया गया, जो पर्याप्त प्रतिनिधित्व और प्रशासनिक दक्षता से संबंधित थी।
- न्यायालय द्वारा कहा गया है कि अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजातियों के पिछड़ेपन को प्रदर्शित करने वाले मात्रात्मक डेटा को संग्रहित करने संबंधी आवश्यकता,1992 के इंदिरा साहनी निर्णय में नौ न्यायाधीशों की पीठ द्वारा दिए गए निर्णय के "विपरीत" थी।
- उच्चतम न्यायालय द्वारा SC/ST की सम्पूर्ण जनसंख्या को कोटा हेतु पात्र मानने संबंधी केंद्र की याचिका को भी अस्वीकृत कर दिया गया।
- न्यायालय ने सरकार से SC और ST के लिए **क्रीमीलेयर संबंधी प्रावधान को प्रस्तावित करने की संभावना की जांच करने का निर्देश** देते हुए कहा कि यदि सभी प्रतिष्ठित नौकरियों को कुछ वर्गों द्वारा ही प्राप्त कर लिया जाएगा तो इसके परिणामस्वरूप शेष वर्ग पिछड़ेपन की अपनी पूर्व स्थिति में ही बना रहेगा। इसके कारण कुछ अवसरों पर इस निर्णय की आलोचना भी हुई है।
- हालांकि,इसने 2006 के नागराज वाद के निर्णय पर पुनर्विचार करने के लिए इसे 7 न्यायाधीशों की पीठ को संदर्भित करने की मांग को अस्वीकार कर दिया।

पदोन्नति में आरक्षण के विरुद्ध तर्क

- **मूल अधिकार नहीं है:** संविधान के अनुच्छेद 16(4), 16(4A) और 16(4B) के तहत उपलब्ध प्रावधान केवल **सक्षमकारी प्रावधान (enabling provisions)** हैं, न कि मूल अधिकार। संविधान निर्माण के दौरान आयोजित विचार विमर्श और व्याख्यानों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि इसके (संविधान) निर्माताओं द्वारा भी इसे परिकल्पित नहीं किया गया था।
- रोज़गार और पद प्राप्त करना सामाजिक भेदभाव की समाप्ति को सुनिश्चित नहीं करता है और इसलिए पिछड़ेपन की गणना के लिए एकल मानदंड के रूप में इसका उपयोग नहीं किया जाना चाहिए।
- **प्रशासनिक दक्षता में कमी:** यह पहलू उच्च तकनीकी क्षेत्रों जैसे परमाणु अनुसंधान,अंतरिक्ष कार्यक्रम इत्यादि में महत्वपूर्ण हो जाता है।
- **लाभों का कुछ ही वर्गों तक सीमित होना:** आलोचकों का तर्क है कि आरक्षण के समान,पदोन्नति में आरक्षण का लाभ भी केवल कुछ ही जातियों और जनजातियों तक ही सीमित हो जाएगा।
- **आरक्षण ही पर्याप्त है:** उच्च सेवाओं के लिए पदोन्नति में आरक्षण नहीं होना चाहिए, क्योंकि SC और ST कर्मचारियों का पिछड़ापन उनके सरकारी सेवा में शामिल होने के पश्चात समाप्त हो जाता है।

पदोन्नति में आरक्षण के पक्ष में तर्क

- **"दक्षता" संबंधी गलत धारणा**
  - 'दक्षता में कमी' संबंधी तर्क व्यापक रूप से 'योग्यता' की अत्यंत रूढ़िवादी समझ का परिणाम है।
  - इस तर्क के आधार को उच्चतम न्यायालय के किसी भी निर्णय में स्पष्ट नहीं किया गया है और इसे सदैव एक स्वयं सिद्ध सत्य के रूप में वर्णित किया गया है इसके अतिरिक्त,यह किसी भी प्रकार के आनुभविक अध्ययन पर आधारित नहीं है।
  - किसी भी व्यक्ति को तब तक पदोन्नत नहीं किया जा सकता जब तक कि वे अपनी वार्षिक गोपनीय रिपोर्ट में बेहतर रेटिंग प्राप्त न कर लें जो वर्तमान में दक्षता का मापदंड है।
- **उच्च स्तर पर SC/ST के प्रतिनिधित्व में कमी:**
  - यद्यपि, विभिन्न स्तरों पर SCs/STs के प्रतिनिधित्व में वृद्धि हुई है, तथापि विभिन्न प्रकार के पूर्वाग्रहों के कारण वरिष्ठ स्तरों पर इनका प्रतिनिधित्व बहुत कम है।
  - 2017 में सरकार में सचिव रैंक पर केवल 4 अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति अधिकारी पदासीन थे।

VISION IAS

- **रिक्त पदों की अधिक संख्या:** "पिछड़ा वर्ग" अभिव्यक्ति की कोई निश्चित परिभाषा नहीं थी जिसके आधार पर "मात्रात्मक आंकड़े" एकत्र किए जाने थे। परिणामतः, नागराज वाद के पश्चात की गयी सभी पदोन्नतियों को इस आधार पर रोक दिया गया कि कोई मात्रात्मक आंकड़े उपलब्ध नहीं थे।
- **ऐतिहासिक पिछड़ापन:** यह देखते हुए कि अनुसूचित जाति को अस्पृश्य के रूप में ऐतिहासिक पिछड़ेपन का सामना करना पड़ा है, अत: पदोन्नति के लिए मात्रात्मक आंकड़ों द्वारा पिछड़ापन सिद्ध करने का प्रश्न ही नहीं उठता है।

आगे की राह

- SC/ST आरक्षण के संदर्भ में क्रीमी लेयर के प्रावधान को लागू करने से संबंधित उच्चतम न्यायालय के पर्यवेक्षण के संदर्भ में, इस प्रकार के विवादास्पद मुद्दों पर कोई निर्णय लेने से पूर्व सभी हितधारकों के साथ वार्ता आयोजित की जानी चाहिए।
- संविधान में न केवल अवसर की औपचारिक समानता की परिकल्पना की गई है, बल्कि वास्तविक समानता को भी उपबंधित किया गया है। वर्तमान में, पदोन्नति प्रक्रिया में अस्पष्टता विद्यमान है। अतः, एक नए एवं व्यापक कानून का निर्माण किए जाने की आवश्यकता है।

2.2.2. आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों हेतु आरक्षण

(Reservation for Economically Weaker Sections)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, राष्ट्रपति ने **संविधान संशोधन (103वां संशोधन) अधिनियम, 2019** (124वां संविधान संशोधन विधेयक) को स्वीकृति प्रदान कर दी है। यह अधिनियम **आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों (EWS)** को सरकारी नौकरियों तथा शैक्षणिक संस्थानों में **10 प्रतिशत आरक्षण** प्रदान करता है, ध्यातव्य है कि ये वर्ग किसी भी आरक्षण योजना द्वारा कवर नहीं किए जाते हैं।

इस संशोधन की प्रमुख विशेषताएं:

- यह अधिनियम सरकार को "आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों" (EWS) की प्रगति हेतु विशिष्ट उपाय (आरक्षण तक सीमित नहीं) करने हेतु सशक्त करने के लिए **अनुच्छेद 15 को संशोधित करता है।**
  - इसके तहत इस प्रकार के वर्गों के शैक्षणिक संस्थानों में प्रवेश हेतु 10 प्रतिशत सीटों को आरक्षित किया जा सकता है। यह आरक्षण अल्पसंख्यक शैक्षणिक संस्थानों पर **लागू नहीं** होगा।
- यह संशोधन **अनुच्छेद 16(6) को अंतःस्थापित करता** है, जो सरकार को नागरिकों के "आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों" हेतु सभी पदों पर 10 प्रतिशत आरक्षण का प्रावधान करने हेतु सक्षम बनाता है।
- EWS को 10% तक का आरक्षण अनुसूचित जाति (SC), अनुसूचित जनजाति (ST) और अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) हेतु प्रदत्त 50% के वर्तमान आरक्षण सीमा के अतिरिक्त प्रदान किया जाएगा।
- केंद्र सरकार पारिवारिक आय एवं आर्थिक पिछड़ेपन के अन्य संकेतकों के आधार पर नागरिकों के **"आर्थिक रूप से कमजोर वर्गों"** को अधिसूचित करेगी।
- **आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग (EWS) को संवैधानिक मान्यता:** यह प्रथम अवसर है जब किसी आर्थिक वर्ग को संवैधानिक रूप से कमजोर वर्ग के रूप में मान्यता दी गई तथा यह वर्ग सकारात्मक कार्रवाई कार्यक्रम के आधार का निर्माण करेगा। यह सकारात्मक कार्रवाई के निर्धारण हेतु पारंपरिक रूप से प्रयुक्त जाति संबंधी केंद्रीयता के प्रस्थान को इंगित करता है।

आर्थिक स्थिति के आधार पर आरक्षण प्रदान करने के पक्ष में तर्क:

- **नए अभाव मूल्यांकन मानदंड की आवश्यकता:** यद्यपि जाति, भारत में अन्याय का प्रमुख कारण रहा है परन्तु इसे किसी वर्ग के पिछड़ेपन के एकमात्र निर्धारक के रूप में नहीं मानना चाहिए। इसका कारण बदली हुयी परिस्थितियों में जाति एवं वर्ग के मध्य के कमजोर होती संबद्धता हैं।
- **राम सिंह बनाम भारत संघ (2015) वाद** में उच्चतम न्यायालय के अनुसार सामाजिक अपूर्णताएं जाति (जैसे कि आर्थिक स्थिति/ट्रांसजेंडरों की लैंगिक पहचान) अवधारणा से परे विद्यमान हो सकती हैं। इसलिए, पिछड़ेपन की जाति-केंद्रित परिभाषा से

परे जाकर नए मानदंड विकसित करने की आवश्यकता है, ताकि मौजूदा सूची गतिशील बनी रहे और सर्वाधिक पिछड़े व्यक्ति को सकारात्मक कार्रवाई का लाभ प्राप्त हो सके।

- **विभिन्न वर्गों के मध्य असंतोष में वृद्धि:** राजनीतिक रूप से, वर्गीय मुद्दों की तुलना में जातिगत मुद्दे अधिक वर्चस्वशाली होते हैं। इसके कारण समान स्थिति अथवा अपेक्षाकृत कमजोर आर्थिक स्थिति वाले समुदायों के मध्य असंतोष की भावना उत्पन्न होती है, जिन्हें जाति-आधारित आरक्षण से बाहर रखा जाता है।

आर्थिक स्थिति के आधार पर विस्तारित आरक्षण के विपक्ष में तर्क:

- **समानता के मानक के विरुद्ध:** सभी के समानता के अधिकार के 'विरुद्ध' पिछड़े वर्गों के लिए अवसर की समानता को संतुलित करने के लिए, आरक्षित सीटों पर 50% की सीमा निर्धारित की गई थी। जब कोटा 50% की सीमा से अधिक हो जाता है, तो यह समानता के मानक का उल्लंघन करता है।
- **एम. नागराज बनाम भारत संघ (2006) वाद** में उच्चतम न्यायालय की संविधान पीठ ने निर्णय दिया कि समानता, संविधान की आधारभूत संरचना का एक भाग है। 50% की सीमा एक संवैधानिक आवश्यकता है जिसके बिना अवसर की समानता की संरचना समाप्त हो जाएगी।
- **अल्प-प्रतिनिधित्व नहीं:** सार्वजनिक रोजगार में उच्च जातियों का पर्याप्त प्रतिनिधित्व है। अतः यह स्पष्ट नहीं है कि सरकार के पास निम्न आय वर्ग के लोगों का सार्वजनिक रोजगार में अल्प-प्रतिनिधित्व प्रदर्शित करने वाले मात्रात्मक डेटा हैं अथवा नहीं।
- **उच्चतम सीमा के साथ समस्या:** EWS हेतु पात्रता के लिए 8 लाख रूपये प्रति वर्ष आय सीमा निर्धारित की गई है- जो 'क्रीमी लेयर' हेतु निर्धारित सीमा के समान है जिसके तहत OBC उम्मीदवार आरक्षण प्राप्ति के लिए अयोग्य हो जाते हैं- सीमित साधनों के साथ सामाजिक एवं आर्थिक रूप से पिछड़े वर्गों के मध्य समानता स्थापित की गई है।
- **EWS की परिभाषा तथा कोटा का आवंटन:** EWS की परिभाषा से संबंधित वर्तमान मुद्दा यह है कि यह अत्यधिक व्यापक तथा जनसंख्या के एक वृहत भाग को सम्मिलित करेगी।
    - अनुसूचित जातियों / अनुसूचित जनजातियों तथा अन्य पिछड़ा वर्गों ('नॉन-क्रीमी लेयर') के लिए आरक्षण, देश में उनकी जनसंख्या से परस्पर संबंधित है। जबकि EWS हेतु 10% कोटा पर इस प्रकार की कोई स्पष्टता प्रदान नहीं की गई है।
    - **लाभार्थियों की पहचान में चुनौतियां:** ऐसे देश में जहां आय के गलत प्रस्तुतीकरण के कारण वर्तमान में करदाता अत्यधिक न्यून है, इसके बावजूद आर्थिक पात्रता संबंधी मानदंडों को क्रियान्वित करने से नौकरशाही पर दबाव की स्थिति उत्पन्न हो सकती है।
- **'पेंडोरा बॉक्स' (Pandora's box) की मांगें:** अनुसूचित जाति / अनुसूचित जनजाति तथा OBC के वर्गों द्वारा भी इस प्रकार की मांगें उठायी जा सकती हैं कि उनके भी संबंधित कोटा के भीतर आर्थिक मानदंडों के आधार पर समान रूप से उप-वर्गीकरण किया जाना चाहिए।
- **सार्वजनिक क्षेत्र का सिकुड़ना:** केंद्र सरकार, केंद्रीय सार्वजनिक क्षेत्र उद्यम (CPSEs) और यहां तक कि बैंकों में निरंतर रूप से कम होती नौकरियों के पूल के साथ, 10% आरक्षण अपेक्षाओं की पूर्ति करने में अक्षम हो सकता है।
- **मेरिट विरोधी:** सामान्य अवधारणा में, आरक्षण को मेरिट विरोधी का पर्याय माना जाता है। आरक्षण के विस्तार के साथ ही, यह अवधारणा जन सामान्य के मस्तिष्क में अधिक स्थायी रूप धारण कर सकती है।
- **लोकलुभावनवाद का उपकरण:** राजनीति में राजनीतिक लाभ हेतु आरक्षण प्रदान करने को एक प्रभावी उपकरण के रूप में प्रयुक्त किया जाता है। यह सामाजिक न्याय के लिए एक उपकरण के रूप में इसकी विश्वसनीयता को प्रभावित करता है।
- **विधेयक का पारित होना:** विधेयक को प्रस्तुत किए जाने से पूर्व इसे सदस्यों के मध्य वितरित नहीं किया गया था, साथ ही इसकी जांच किसी संसदीय समिति द्वारा नहीं की गई थी तथा इसके प्रस्तुतीकरण और अंतिम चर्चा के मध्य न्यूनतम समय लिया गया था।
    - इसके अतिरिक्त, केंद्र सरकार EWS को 10% आरक्षण प्रदान करने हेतु **वर्ष 2010 की सिन्हो आयोग की रिपोर्ट** के आधार पर अपने वैधानिक आधार का समर्थन कर रही है। ध्यातव्य है कि आयोग ने EWS के लिए आरक्षण की स्पष्ट रूप से अनुशंसा नहीं की थी, परंतु EWS की सभी कल्याणकारी योजनाओं तक पहुँच सुनिश्चित करने पर बल दिया था।

आगे की राह

- **पर्याप्त संस्थागत उपाय (Adequate institutional measures):** राजनीतिक वर्ग द्वारा कोटा देने में लोकलुभावनवाद को नियंत्रित करने हेतु 50% की सीमा [इंदिरा साहनी वाद (1992)] निर्धारित की गई थी। आरक्षण प्रदान के लिए वर्गों की अनुशंसा करने हेतु एक संस्थागत तंत्र उपस्थित होना चाहिए।
- **निष्पक्ष एवं पारदर्शी सत्यापन (Independent and transparent verification):** उम्मीदवारों द्वारा प्रस्तुत शपथ पत्र के आधार पर, निष्पक्ष, पारदर्शी और अहस्तक्षेपकारी सत्यापन विधियों को स्थापित किया जाना चाहिए ताकि आरक्षण प्रावधानों का सरलता से दुरुपयोग नहीं किया जा सके।

- आर्थिक रूप से पिछड़े लोगों को आरक्षण प्रदान करने के तर्क का **SC / ST समूहों के मध्य विद्यमान क्रीमी लेयर तक विस्तार करने के लिए इस पर बहुत** ध्यानपूर्वक विचार किया जाना चाहिए।
- **निजी क्षेत्र में रोजगार सृजन की स्थिति में सुधार करना:** आरक्षण की मांग को आकांक्षायुक्त भारत में उपलब्ध निजी क्षेत्र की नौकरियों की गुणवत्ता और पारिश्रमिक के परिप्रेक्ष्य में देखा जाना चाहिए। कोटा के दलदल से बाहर निकलने का एकमात्र तरीका यह है की निजी क्षेत्रक में अधिक एवं बेहतर नौकरियों के औपचारिकीकरण और निर्माण के लिए सक्षम परिवेश का निर्माण किया जाना चाहिए।

2.3. नागरिकता संशोधन विधेयक - 2016

(Citizenship Amendment Bill - 2016)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, व्यपगत हुए नागरिकता (संशोधन) विधेयक 2016 का देश के कई भागों में विरोध किया गया।

विधेयक के प्रावधान

- **अवैध प्रवासियों की परिभाषा:** उल्लेखनीय है कि नागरिकता अधिनियम, 1955 अफगानिस्तान, बांग्लादेश और पाकिस्तान से आए **'उत्पीड़ित' गैर-मुस्लिम अल्पसंख्यक** (हिंदू, सिख, बौद्ध, जैन, पारसी और ईसाई समुदाय) जो 31 दिसंबर, 2014 को या इससे पूर्व भारत आ गए हों तथा जो भारतीय नागरिकता हेतु आवश्यक वैध यात्रा दस्तावेजों के बिना निवास कर रहे हैं, उनको भारत की नागरिकता प्रदान की जा सके। उल्लेखनीय है कि इन्हें अवैध प्रवासी नहीं माना जाएगा।
- **देशीयकरण द्वारा नागरिकता:** यह संशोधन देशीकरण द्वारा नागरिकता प्राप्त करने के लिए निवास संबंधी योग्यता की कुल अवधि को 11 वर्षों से घटाकर 6 वर्ष तक करने के साथ-साथ विगत 12 माह से निरंतर निवास करने का प्रावधान करता है।
- **भारत के ओवरसीज नागरिक (Overseas Citizens of India: OCIs) के पंजीकरण को रद्द करना:** इस विधेयक में OCI के पंजीकरण को रद्द करने (यदि उनके द्वारा देश के किसी भी कानून का उल्लंघन किया जाता है) का प्रावधान भी शामिल किया गया है।

नागरिकता अधिनियम, 1955

- यह अधिनियम जन्म, वंशानुगत, पंजीकरण, देशीकरण एवं क्षेत्र समाविष्ट करने के आधार पर नागरिकता प्राप्त करने का प्रावधान करता है।
- यह अधिनियम **अवैध प्रवासियों को भारतीय नागरिकता प्राप्त करने से वंचित** करता है। यह अवैध प्रवासियों को ऐसे विदेशी के रूप में परिभाषित करता है, जिसने (i) भारत में बिना किसी वैध पासपोर्ट या यात्रा दस्तावेजों के प्रवेश किया हो (ii) वह स्वीकृत अवधि से अधिक भारत में निवास कर रहा हो।
- यह **भारत के ओवरसीज नागरिक (OCIs) कार्डधारकों तथा उनके अधिकारों को विनियमित करता** है। एक OCI भारत आगमन हेतु मल्टी-एंट्री, मल्टी-पर्पज लाइफ-लॉन्ग वीजा प्राप्त कर सकता है।
- यह केंद्र सरकार को निम्नलिखित आधारों पर OCIs के पंजीकरण को रद्द करने हेतु सक्षम बनाता है:
  - धोखाधड़ी के माध्यम से पंजीकरण;
  - पंजीकरण की तिथि से 5 वर्ष की अवधि के भीतर 2 वर्ष से अधिक का कारावास; और
  - संप्रभुता एवं देश की सुरक्षा इत्यादि से संबद्ध मामलों के आधार पर।

यह संशोधन किस प्रकार 'उत्पीड़ित' अल्पसंख्यकों को लाभ पहुँचाएगा?

- यह विधेयक **विभाजन के दौरान हुए धार्मिक भेदभाव** का समाधान करने का प्रयास करता है। इसके अतिरिक्त, विभाजन के पश्चात धार्मिक अल्पसंख्यकों को विशेषकर मुस्लिम बहुसंख्यक देशों में व्यापक भेदभाव का सामना करना पड़ा था।
- यह विधेयक **स्व-रोजगार प्राप्त करने, संपत्ति का क्रय करने, बैंक खाता खोलने तथा ड्राइविंग लाइसेंस, पैन कार्ड (PAN) एवं आधार कार्ड प्राप्त करने में कई लोगों को लाभ पहुंचाएगा**। उदाहरणार्थ: यह बांग्लादेश के चकमा तथा हाजोंग समुदाय को अत्यधिक लाभ प्रदान करेगा।

विधेयक का विरोध

- **धार्मिक भेदभाव:** यह विधेयक **अवैध प्रवासियों के साथ उनके धर्म के आधार पर विभेदकारी व्यवहार** करता है, जो संविधान के अनुच्छेद 14 (सभी व्यक्तियों, नागरिकों एवं विदेशियों को समानता के अधिकार की गारंटी प्रदान करता है) का उल्लंघन करता है।
  - गैर-मुस्लिम अल्पसंख्यकों को सूचीबद्ध करने के साथ ही एक मुद्दा यह भी है कि यह **विभिन्न उत्पीड़ित अल्पसंख्यकों जैसे - म्यांमार के रोहिंग्या एवं पाकिस्तान में अहमदिया को शामिल नहीं** करता है।
- **देशों का चयन:** अधिकांश आलोचकों द्वारा बांग्लादेश और पाकिस्तान (जो स्वतंत्रता-पूर्व भारत के भाग थे) जैसे देशों के साथ अफगानिस्तान को सम्मिलित करने तथा श्रीलंका, म्यांमार आदि जैसे अन्य पड़ोसी देशों को शामिल न करने के कारणों के औचित्य पर प्रश्न उठाया गया है।

VISION IAS

- **राष्ट्रीय नागरिक रजिस्टर (NRC) और असम समझौता, 1985 जैसी अन्य सरकारी पहलों के साथ टकराव:** एक ओर जहाँ NRC एवं असम समझौते में भारतीय नागरिकता के लिए पात्रता की समय सीमा (मार्च) 1971 निर्धारित की गई है, तो वही दूसरी ओर यह विधेयक पात्रता की समय सीमा (दिसंबर) 2014 निर्धारित करता है, अतः यह उन लोगों के दायरे तथा संख्या में वृद्धि करता है जो भारतीय नागरिकता के लिए पात्र हो सकते हैं।
    - यह **असम समझौते के खंड 6 में निहित प्रावधान के विरुद्ध है**, जो सरकार को असम के लोगों की सांस्कृतिक एवं सामाजिक-भाषाई पहचान को संरक्षण प्रदान करने का उत्तरदायित्व सौंपता है।
- **स्थानीय जनसांख्यिकी हेतु खतरा:** स्थानीय समुदाय को भय है कि नागरिकता की संभावना बांग्लादेश से प्रवास को प्रोत्साहन प्रदान करेगी तथा इसके परिणामस्वरूप स्वदेशी लोगों पर 'बाहरी लोगों' का वर्चस्व स्थापित हो सकता है।
- **धार्मिक उप-राष्ट्रवादी (प्रादेशिकतावादी) राजनीति का उदय:** यह विधेयक असम के निवासियों को ब्रह्मपुत्र घाटी (जहां मुस्लिम बस्तियों की बहुलता हैं तथा विधेयक का अधिक विरोध किया गया है) तथा बराक घाटी (जहां हिंदू-बंगाली बस्तियों की बहुलता है तथा विधेयक का समर्थन करते हैं) में विभाजित करता है। वर्तमान समय तक, उत्तर-पूर्व के उप-राष्ट्रवादी भावना के समर्थकों ने नृजातीय-भाषाई पहचान को संरक्षित करने हेतु "विदेशियों" का विरोध करने पर ध्यान केंद्रित किया है।
- **OCI पंजीकरण को रद्द करने हेतु व्यापक आधार:** यह छोटे अपराधों जैसे - यातायात संबंधी कानूनों का उल्लंघन (यथा नो-पार्किंग जोन में पार्किंग अथवा रेड लाइट जंप करना) करने पर OCI पंजीकरण को रद्द करने हेतु केंद्र सरकार को व्यापक स्वतंत्रता प्रदान करता है।

असम समझौता, 1985

- यह भारत सरकार के प्रतिनिधियों तथा असम आंदोलन के नेताओं के मध्य हस्ताक्षरित एक समझौता ज्ञापन (Memorandum of Settlement: MoS) है।
- वे सभी विदेशी जो 1951 से 1961 के मध्य असम में आए थे, उन्हें मतदान के अधिकार (right to vote) सहित पूर्ण नागरिकता प्रदान की गई थी;
    - 1971 के पश्चात आने वाले व्यक्तियों को निर्वासित किया गया था,
    - इसके अतिरिक्त, 1961 और 1971 के मध्य असम में आने वाले व्यक्तियों को दस वर्ष की अवधि तक मतदान के अधिकार से वंचित किया गया था, परन्तु उन्हें नागरिकता के अन्य सभी अधिकार प्रदान किए गए थे।

स्थानीय समुदायों के मुद्दों का समाधान करने हेतु केंद्र सरकार द्वारा उठाए गए कदम:

- **असम समझौते के खंड 6 के संचालन हेतु उच्च स्तरीय समिति का गठन:** इस समिति द्वारा **"असमिया लोगों"** को परिभाषित किया जायेगा, जो प्रस्तावित सुरक्षा उपायों के पात्र हैं, जिसके अंतर्गत विधानसभा और स्थानीय निकायों में सीटों का आरक्षण, सरकारी नौकरियों में आरक्षण, भू-स्वामित्व अधिकार आदि शामिल हैं। साथ ही यह खंड 6 को क्रियान्वित करने हेतु 1985 के पश्चात से की गई कार्यवाहियों की प्रभावशीलता की भी जाँच करेगी।
- **अनुसूचित जनजाति का दर्जा:** सरकार ने छह प्रमुख समुदायों (यथा कोच राजबंशी, ताई अहोम, चुटिया, मटक, मोरन एवं चाय जनजातियों) को अनुसूचित जनजाति का दर्जा देने के प्रस्ताव की घोषणा की है। वर्तमान में इन्हें अन्य पिछड़ा वर्ग (OBC) के रूप में वर्गीकृत किया जाता है। इन समुदायों को अनुसूचित जनजाति का दर्जा प्राप्त होने के साथ, 34% मुस्लिम जनसंख्या वाला असम राज्य जनजातीय राज्य में परिवर्तित हो जाएगा, जिसमें अधिकांश सीटें इन जनजातियों के लिए आरक्षित होंगी।
- **अप्रवासियों का वितरण:** केंद्र सरकार द्वारा कहा गया है कि नियमित अप्रवासियों को केवल असम में ही नहीं बसाया जाएगा, बल्कि अन्य विभिन्न राज्यों में भी बसाया जाएगा।

निष्कर्ष

- इस संदर्भ में सरकार के लिए यह महत्वपूर्ण हो जाता है कि वह अपने पड़ोसी देश के उत्पीड़ित अल्पसंख्यकों को भूमि प्रदान करने के अपने वृहत दृष्टिकोण के साथ पूर्वोत्तर के लोगों की स्वदेशी पहचान को विकृत न करने के अपने वादे के मध्य संतुलन स्थापित करे।
- इस समय सरकार को अवैध प्रवास से संबंधित इस व्यापक मुद्दे का समाधान करना चाहिए, जो वर्तमान में केवल पूर्वोत्तर तक सीमित नहीं है, विशेषकर रोहिंग्या लोगों के संदर्भ में।

VISION IAS

2.4. राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम

(National Security Act)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, मध्य प्रदेश सरकार द्वारा गौ हत्या के अपराधी तीन व्यक्तियों के विरुद्ध राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम (NSA) आरोपित किया गया।

राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम, 1980 से संबंधित तथ्य

- राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम 23 सितंबर, 1980 को लागू किया गया था; इसका उद्देश्य "कुछ विशिष्ट मामलों तथा उनसे संबंधित मुद्दों में **निवारक निरोध को आरोपित करना** है।"
- **किसी व्यक्ति के निवारक निरोध के लिए निम्नलिखित आधार शामिल हैं:**
    - भारत के विदेशी सरकारों से संबंधों पर या भारत की सुरक्षा पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली रीति से कार्य करने के आधार पर।
    - भारत में किसी भी विदेशी की निरंतर उपस्थिति को विनियमित करने या भारत से उसके निष्कासन की व्यवस्था के लिए।
    - व्यक्ति द्वारा राज्य की सुरक्षा या लोक व्यवस्था बनाए रखने अथवा समुदाय के लिए आवश्यक प्रदायों एवं सेवाओं को बनाये रखने पर प्रतिकूल प्रभाव डालने वाली रीति से कार्य करने के आधार पर।
- गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को बिना किसी जांच के **तीन माह** तथा कुछ विशेष परिस्थितियों में **छह माह** तक बंदी के रूप में रखा जा सकता है।
- **तीन व्यक्तियों वाले एक सलाहकार बोर्ड** का गठन किया गया है जिसमें उच्च न्यायालय के न्यायाधीश या उच्च न्यायालय के न्यायाधीश बनने की योग्यता रखने वाले व्यक्ति शामिल होते हैं। यह बोर्ड तीन माह से अधिक समय के लिए निर्दिष्ट किसी भी आदेश की वैधता को निर्धारित करता है। यदि यह बोर्ड अनुमोदन प्रदान कर दे तो व्यक्ति को **12 महीने तक** की न्यायेतर हिरासत में रखा जा सकता है। यदि सरकार को मामले से संबंधित नए साक्ष्य प्राप्त होते हैं, तो इस अवधि में वृद्धि की जा सकती है।
- NSA के तहत गिरफ्तार किए गए व्यक्ति के बारे में राज्य सरकार को सूचना देना आवश्यक है।
- **यह जम्मू एवं कश्मीर राज्य के अतिरिक्त संपूर्ण भारत के राज्यक्षेत्र में विस्तारित है।**

भारत में निवारक निरोध संबंधी कानूनों का इतिहास

- **स्वतंत्रता-पूर्व कानून-** 1818 का बंगाल विनियमन III; डिफेंस ऑफ़ इंडिया एक्ट, 1915; रॉलेट एक्ट 1919
- **स्वातंत्र्योत्तर कानून-**
    - **निवारक निरोध अधिनियम (1950-1969)**
    - **गैरकानूनी गतिविधियां (रोकथाम) अधिनियम (1967)**
    - **आंतरिक सुरक्षा व्यवस्था अधिनियम- MISA (1971- 1978)**
    - **विदेशी मुद्रा संरक्षण और तस्करी निवारण अधिनियम, 1974 (COFEPOSA)**
    - **राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम (1980) - 1984, 1985 और 1988 में संशोधित**
- **हालिया मामले-**
    - उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा बुलंदशहर में कथित रूप से गौ-हत्या के एक मामले में NSA के तहत तीन लोगों को गिरफ्तार किया गया।
    - मुख्यमंत्री पर कथित रूप से आपत्तिजनक फेसबुक पोस्ट करने के मामले में मणिपुर के एक पत्रकार को NSA के तहत 12 माह के लिए हिरासत में ले लिया गया था।

संबंधित चिंताएं

- **अभियुक्त को सामान्य मामलों में गिरफ्तार किए गए व्यक्तियों को उपलब्ध मूलभूत अधिकारों से वंचित कर दिया जाता है, जैसे-**
    - **दंड प्रक्रिया संहिता (CrPC) के अंतर्गत:**
        - गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को उसकी गिरफ्तारी के आधार एवं जमानत के अधिकार से संबंधित जानकारी प्रदान की जानी चाहिए। परंतु NSA के तहत व्यक्ति को उसकी गिरफ्तारी के कारणों के संबंध में पांच दिनों तक कोई जानकारी प्रदान नहीं की जाती तथा असाधारण परिस्थितियों में यह अवधि 10 दिनों तक हो सकती है (इससे अधिक विस्तारित नहीं की जा सकती है)।
        - NSA के तहत गिरफ्तारी के कारण से संबंधित जानकारी प्रदान करने पर भी सरकार उन जानकारियों को प्रदान करने से मना कर सकती है, जिन्हें वह सार्वजनिक हित के विरुद्ध मानती है।

VISION IAS

- इसके अतिरिक्त CrPC के तहत गिरफ्तारी के 24 घंटे के भीतर व्यक्ति को न्यायालय में प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

- **संविधान का अनुच्छेद 22 (1)-** गिरफ़्तार व्यक्ति को अपनी रुचि के विधि वेत्ता से परामर्श करने और अपना पक्ष रखवाने अर्थात प्रतिरक्षा कराने के अधिकार से वंचित नहीं रखा जाएगा। NSA के तहत गिरफ्तार किए गए व्यक्ति को सलाहकार बोर्ड के समक्ष संचालित कार्यवाही से संबंधित किसी भी मामले में विधि वेत्ता से सहायता प्राप्त करने का अधिकार नहीं है।
- **कानून की उचित प्रक्रिया का उल्लंघन-** जैसे निर्दोषता की पूर्वधारणा का उल्लंघन
- **सरकारों का निवारक निरोध पर अत्यधिक आश्रित होना-** हालिया समय में विभिन्न राज्य सरकारों ने आपत्तिजनक मामलों के तहत नागरिकों को गिरफ्तार करने के लिए NSA के कठोर प्रावधानों को लागू किया है, जिसने इस विवादास्पद कानून के संभावित दुरुपयोग पर पुनः ध्यान केंद्रित किया है।
- **NSA के तहत निरुद्ध व्यक्तियों की सही संख्या के आंकड़ों का अभाव:** राष्ट्रीय अपराध रिकॉर्ड ब्यूरो (NCRB) के आंकड़ों में NSA के मामले शामिल नहीं हैं, क्योंकि इन मामलों की कोई भी एफआईआर दर्ज नहीं की जाती है। NCRB देश में अपराध संबंधी डाटा का एकत्रण और विश्लेषण करता है।
- **संविधानवाद के विरुद्ध-** क्योंकि इस सन्दर्भ में सरकार की निरंकुशता को नियंत्रित नहीं किया गया है और इसका दुरुपयोग होता है।
- **राज्य द्वारा कानून के अन्य प्रावधानों से बचने के लिए उपयोग किया जा सकता है-** कई प्रावधानों, जैसे राज्य की रक्षा, विदेशी शक्तियों के साथ संबंधों को जोखिम में डालना जैसे कृत्य पहले से ही भारतीय दंड संहिता (IPC) की विभिन्न धाराओं के अंतर्गत दंडनीय हैं। NSA सरकार को ऐसे अपराधियों को बिना किसी दोषारोपण के हिरासत में रखने की अनुमति प्रदान करता है।

इस प्रकार के कानून के पक्ष में तर्क

- **राष्ट्र-विरोधी बलों की उपस्थिति-** इनके अंतर्गत आतकंवादी, चरमपंथी, कट्टरपंथी जैसे तत्व शामिल हैं, जो राष्ट्र की एकता और अखंडता के लिए खतरा हैं।
- **आसूचना का एकत्रण-** आतंकवादी कानून के अंतर्गत निर्दोषता के प्रावधानों का उपयोग कर कानून प्रवर्तन एजेंसियों के लिए तत्काल आवश्यक सूचनाओं से बच सकते हैं या उन्हें नष्ट कर सकते हैं।
- **दुरुपयोग निरसन का आधार नहीं -** केवल कुछ विशिष्ट मामलों में दुरुपयोग के आरोप अधिकांश मामलों में इसकी प्रभावकारिता को क्षीण नहीं करते हैं।
- **इसका अनुप्रयोग युक्तियुक्त निर्बंधनों का एक भाग है-** इन्हें अनुच्छेद 19 (2) के तहत प्रदान किया गया है।

आगे की राह

- राज्य की सुरक्षा एवं लोगों के अधिकारों की सुनिश्चितता के मध्य संतुलन स्थापित करने की आवश्यकता है।
- कानून प्रवर्तन एजेंसियों को पर्याप्त रूप से निर्देशित किया जाना चाहिए कि इस अधिनियम को किस संदर्भ में आरोपित किया जाना चाहिए और किसमें नहीं। मानक संचालन प्रक्रिया.को क्रियान्वित किया जाना चाहिए, ताकि यह सुनिश्चित किया जा सके कि NSA का अनुचित प्रयोग न हो।

2.5. राजद्रोह

(Sedition)

सुर्ख़ियों में क्यों?

राजद्रोह कानून (Sedition law) {भारतीय दंड संहिता की धारा 124-A} के संदर्भ में विधि आयोग की एक रिपोर्ट पर केंद्र सरकार द्वारा वैधानिक मत की मांग की गई थी।

पृष्ठभूमि

- भारतीय दंड संहिता की धारा 124-A एक स्वतंत्रता-पूर्व प्रावधान है, जिसमें सरकार के विरुद्ध राजद्रोह से संबंधित आरोपों को शामिल किया गया है।
- भारतीय न्यायपालिका के विभिन्न निर्णयों ने संविधान के अनुच्छेद 19 के आलोक में 'राजद्रोह' कानून का पुनर्परीक्षण एवं पुनर्व्याख्या की है।
- संविधान के अनुच्छेद 19 (2) के तहत वाक् एवं अभिव्यक्ति के अधिकार तथा राज्य द्वारा युक्तियुक्त निर्बंधन आरोपित करने की शक्ति के मध्य संतुलन स्थापित करने का प्रयास किया गया है।
- इन निर्णयों ने 'राजद्रोह' के दायरे को सीमित कर दिया, जिससे इसका अर्थ अधिक स्पष्ट, सटीक और सरल हो गया है।
- इस संबंध में केंद्र सरकार द्वारा राज्य सरकारों सहित विभिन्न हितधारकों से मतों की मांग गई है।
- इसकी समाप्ति की संभावना कम दिख रही है, क्योंकि कानून प्रवर्तन एजेंसियों सहित अधिकांश हितधारकों ने कानून को बिना परिवर्तन के बनाए रखने की आवश्यकता व्यक्त की है। इसलिए वर्तमान में मुख्य लक्ष्य इसके दुरुपयोग को रोकना हो जाता है।

VISION IAS

धारा 124-A के पक्ष में तर्क

- **यह वस्तुतः एक औपनिवेशिक कानून नहीं रह गया है-** उच्चतम न्यायालय के निर्देशों के पश्चात इसके अधिकार क्षेत्र को कम कर दिया गया है। अब इसे केवल न्यायालय द्वारा निर्धारित आधार पर ही आरोपित किया जा सकता है।
- **अनुप्रयोग युक्तियुक्त निर्बंधन का एक भाग है-** इसे अनुच्छेद 19 (2) के तहत प्रदान किया गया है।
- **वास्तविक रूप से वाक् की स्वतंत्रता को बाधित नहीं करता है:** कोई भी व्यक्ति सरकार की आलोचना करने के लिए किसी भी प्रकार की कठोर भाषा का प्रयोग कर सकता है। इसके लिए उस पर राजद्रोह का आरोप नहीं लगाया जा सकता। हालांकि, इस प्रकार के विरोध को देश को तोड़ने वाले किसी आह्वान में परिवर्तित नहीं होना चाहिए।
- **देश की एकता एवं अखंडता को खतरा-** राष्ट्रविरोधी तत्वों और विभाजनकारी बलों, जैसे नक्सलियों, अलगाववादियों की मौजूदगी (जिन्हें देश के अंदर तथा बाहर से समर्थन प्राप्त होता है) के कारण मौजूद खतरे से निपटने के लिए यह आवश्यक है।
- **केवल दुरुपयोग को निरसन का आधार नहीं माना जा सकता -** हालाँकि ऐसे प्रावधानों का निर्माण किया जाना चाहिए जिनके माध्यम से इसके दुरुपयोग को समाप्त किया जा सके।

धारा 124-A

- भारतीय दंड संहिता (Indian Penal Code: IPC) की धारा 124-A के अनुसार, बोले गए या लिखे गए शब्दों द्वारा या संकेतों द्वारा, अथवा दृश्यरुपण या अन्यथा भारत में विधि द्वारा स्थापित सरकार के प्रति घृणा या अवमान उत्पन्न करना, या उत्पन्न करने का प्रयत्न करना, या अप्रीति प्रदीप्त करना अथवा प्रदीप्त करने का प्रयास करना राजद्रोह है।
- इस धारा के अनुसार राजद्रोह के दोषी व्यक्ति को आजीवन कारावास या तीन वर्ष तक के कारावास, जिसमें जुर्माना जोड़ा जाएगा, से दंडित किया जा सकता है।
- हालिया लोकप्रिय मामले जिनमें राजद्रोह कानून का उपयोग किया गया था:
  - डॉ. बिनायक सेन बनाम छत्तीसगढ़ राज्य
  - कन्हैया कुमार बनाम राज्य (राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र दिल्ली)
  - वी.ए. पुगलेंथी बनाम राज्य (तमिलनाडु)

उच्चतम न्यायालय के विचार

- वर्ष 1962 में **केदार नाथ सिंह बनाम बिहार राज्य** वाद में उच्चतम न्यायालय ने धारा 124-A की यथास्थिति को बरकरार रखते हुए कहा कि इसने मूलभूत अधिकारों एवं लोक व्यवस्था के मध्य 'उचित संतुलन' को बनाए रखा है।
- न्यायालय ने राजद्रोह कानून के दायरे को केवल उन्हीं मामलों तक सीमित कर दिया है, जिनमें राज्य के पतन हेतु हिंसक भावनाओं को बढ़ावा देना शामिल है।
- इसके अतिरिक्त न्यायालय ने माना कि राजद्रोह केवल वर्तमान सरकार के विरुद्ध ही नहीं, अपितु संस्थानों (राज्य के प्रतीक के रूप में) के विरुद्ध भी होता है।
- रोमेश थापर, कन्हैया कुमार जैसे विभिन्न वादों में दिए गए निर्णयों के अनुसार एक राजद्रोही कृत्य को पुनः परिभाषित किया गया तथा उसमें निम्नलिखित आवश्यक तत्वों को सम्मिलित किया गया:
  - लोक व्यवस्था का विघटन,
  - कानून का उल्लंघन कर विधिपूर्वक स्थापित सरकार के पतन का प्रयत्न करना,
  - राज्य या जन सामान्य की सुरक्षा को खतरा पहुँचाना

विधि आयोग के विचार

- हालांकि यह राष्ट्रीय अखंडता की रक्षा हेतु अत्यावश्यक है, इसका उपयोग वाक् की स्वतंत्रता को नियंत्रित करने वाले एक उपकरण के रूप में नहीं किया जाना चाहिए। जीवंत लोकतंत्र के भाग के रूप में असहमति एवं आलोचना नीतिगत मुद्दों पर सुदृढ़ सार्वजनिक बहस करने हेतु आवश्यक तत्व हैं।
- अतः धारा 124-A को केवल उन्हीं मामलों में आरोपित किया जाना चाहिए जिनमें किसी कृत्य का उद्देश्य लोक व्यवस्था को बाधित करना अथवा हिंसा एवं अवैध तरीकों के माध्यम से वैधानिक सरकार को पदच्युत करना हो।

धारा 124-A के विपक्ष में तर्क

- **लोकतांत्रिक मानदंडों के विरुद्ध-** यह सरकार की आलोचना करने संबंधी लोगों के लोकतांत्रिक एवं मूलभूत अधिकार को सीमित करता है।
- **राज्य तंत्र की अपर्याप्त क्षमता-** इस प्रकार के "कठोर" प्रावधान को आरोपित करने के परिणामों को समझने के लिए पुलिसकर्मियों को "अपेक्षित" प्रशिक्षण प्राप्त नहीं होता है।

VISION IAS

- **दुरुपयोग की संभावना-** लोगों में व्याप्त असंतोष को रोकने के लिए इसका प्रयोग स्वेच्छाचारिता से किया जा सकता है। कई मामलों में मुख्य रूप से राजनीतिक मत के विरोधियों अथवा ऐसे लेखकों, पत्रकारों या कार्यकर्ताओं को लक्षित किया जाता है।
- **कानून की कठोर प्रकृति-** राजद्रोह अपराध गैर-जमानती, गैर-संज्ञेय है तथा इससे संबंधित दंड आजीवन कारावास तक हो सकता है- इस प्रकार इसका उपयोग न किए जाने पर भी असहमति की अभिव्यक्ति पर इसका कठोर निवारक प्रभाव पड़ सकता है।
- **प्रेस को प्रतिबंधित करने के लिए उपयोग करना-** प्रेस को संरक्षित किया जाना चाहिए ताकि यह सरकार की गोपनीयता को प्रकट कर सके एवं लोगों को जागरुक कर सके। केवल एक स्वतंत्र और दबाव रहित प्रेस ही प्रभावी रूप से सरकार के कपटपूर्ण कृत्यों को उजागर कर सकता है।

आगे की राह

- IPC में संशोधन द्वारा धारा 124-A में उच्चतम न्यायालय के दिशा-निर्देशों को समाविष्ट किया जाना चाहिए ताकि किसी भी प्रकार की अस्पष्टता को समाप्त किया जा सके। इस धारा में संशोधन के लिए 2015 में एक निजी सदस्य विधेयक प्रस्तुत किया गया था। विधेयक में यह सुझाव दिया गया था कि केवल उन्हीं कृत्यों/शब्दों को राजद्रोह के अपराध के अंतर्गत शामिल किया जाना चाहिए जिनके द्वारा प्रत्यक्ष रूप से हिंसक गतिविधि की जा रही हो या हिंसा को बढ़ावा मिल रहा हो।
- राज्य पुलिस को इस संदर्भ में पर्याप्त रूप से निर्देशित किया जाना चाहिए कि इस धारा का उपयोग कहाँ किया जाए और कहाँ नहीं।
- सरकार द्वारा इस धारा के दुरुपयोग की स्थिति में उसे दण्डित करने संबंधी प्रावधान किये जाने की आवश्यकता है। इससे यह सुनिश्चित हो सकेगा कि IPC की धारा 124-A के तहत राज्य की सुरक्षा एवं निर्बाध कार्यप्रणाली तथा वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार के मध्य एक संतुलन बना रहे।

3. संसद/राज्य विधायिका एवं कार्यपालिका की कार्यप्रणाली (Functioning of Parliament/State Legislature and Executive)

3.1. विशेषाधिकारों का उल्लंघन

(Breach of Privilege)

सुर्ख़ियों में क्यों?

- हाल ही में, राफेल लड़ाकू जेट विमान सौदे के संबंध में संसद को गुमराह करने का आरोप लगाते हुए प्रधानमंत्री और रक्षा मंत्री के विरुद्ध विशेषाधिकार उल्लंघन प्रस्ताव प्रस्तुत किया गया।
- इसके साथ ही संसद की वित्त संबंधी स्थायी समिति के अध्यक्ष पर भी समिति के विचार-विमर्श के संबंध में ट्वीट करने के लिए "वित्त समिति की गरिमा और नैतिकता को क्षति पहुँचाने" तथा 'विशेषाधिकार के उल्लंघन' का आरोप लगाया गया था।

विशेषाधिकारों की अवधारणा और विशेषाधिकारों के प्रकार

- विशेषाधिकारों की अवधारणा का **उद्भव ब्रिटिश हाउस ऑफ कॉमन्स** में हुआ था। इसका उद्देश्य नव गठित ब्रिटिश संसद की संप्रभुता को राजतंत्र से सुरक्षित रखना था।
- **वर्तमान में ऐसा कोई कानून प्रचलित नहीं है जो भारत में विधि-निर्माताओं के सभी विशेषाधिकारों को संहिताबद्ध करता हो।** वस्तुतः विशेषाधिकार पांच स्रोतों पर आधारित हैं:

  (i) संवैधानिक प्रावधान (ii) संसद के विभिन्न कानून (iii) दोनों सदनों के नियम (iv) संसदीय परम्पराएं (v) न्यायिक व्याख्याएं
- संविधान द्वारा विधायी संस्थानों और उनके सदस्यों हेतु (**अनुच्छेद 105 के तहत,** संसद, इसके सदस्यों और समितियों के लिए / **अनुच्छेद 194 के तहत** राज्य विधानमंडल, इसके सदस्यों और समितियों के लिए) कुछ विशेषाधिकार प्रदान किए गए हैं। इनके उद्देश्य हैं:
  - सदन में वाक् एवं अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता की रक्षा और सदनों में किए गए व्यवहार के संबंध में न्यायिक मुकदमेबाजी से सुरक्षा।
  - भाषण, मुद्रण या प्रकाशन के माध्यम से किसी भी अपमान के विरुद्ध रक्षा।
  - यह सुनिश्चित करना कि उनका कार्य संचालन अनावश्यक प्रभाव, दबाव या जबरदस्ती के बिना हो।
  - संसद की संप्रभुता को सुनिश्चित करना।

विशेषाधिकारों के प्रकार

सामूहिक विशेषाधिकार

- सदन की कार्यवाही से बाहरी व्यक्तियों को अपवर्जित करना। विधायिका की गुप्त बैठक आयोजित करना।
- प्रेस को संसदीय कार्यवाही की सही रिपोर्ट प्रकाशित करने के लिए स्वतंत्रता प्राप्त है। लेकिन यह गुप्त बैठकों के मामले में उपलब्ध नहीं है।
- केवल संसद ही अपनी कार्यवाही को नियंत्रित करने के लिए नियम बना सकती है।
- सदन की कार्यवाही (भाषण, मतदान इत्यादि) की जांच करने से न्यायालय को प्रतिबंधित किया गया है।

व्यक्तिगत

- सत्र के दौरान तथा सत्र के 40 दिन पूर्व और 40 दिन पश्चात् तक गिरफ्तारी से सुरक्षा। यह सुरक्षा केवल सिविल मामलों में उपलब्ध है,आपराधिक मामलों में नहीं।
- संसद में दिए गए किसी भी वक्तव्य के लिए न्यायालय की कार्यवाही से उन्मुक्ति।
- सदन के सत्र में होने के दौरान साक्षी के रूप में उपस्थिति से उन्मुक्ति।

- जब भी इनमें से किसी भी अधिकार और उन्मुक्ति की उपेक्षा की जाती है तो इसे **विशेषाधिकार के उल्लंघन** के रूप में वर्णित किया जाता है जो संसद के कानून के अंतर्गत दंडनीय अपराध है। हालांकि विशेषाधिकार के उल्लंघन और इसके लिए प्रदत्त दंड के संबंध में कोई वस्तुनिष्ठ दिशानिर्देश निर्धारित नहीं किए गए हैं।
- विशेषाधिकार के उल्लंघन संबंधी मामलों में निम्नलिखित **प्रक्रिया** का अनुपालन किया जाता है:
  - संसद के किसी भी सदन के किसी भी सदस्य द्वारा विशेषाधिकार उल्लंघन करने वाले/वालों के विरुद्ध एक प्रस्ताव के माध्यम से नोटिस दिया जाता है।
  - अध्यक्ष/सभापति विशेषाधिकार प्रस्ताव की प्रथम दृष्टया जांच करते हैं। वे स्वयं निर्णय ले सकते हैं या इसे संसद की विशेषाधिकार समिति को संदर्भित कर सकते हैं। ऐसे मामलों में निर्णय विशेषाधिकार समिति द्वारा लिया जाता है (संसद और राज्य विधानमंडल, दोनों में ही)।

VISION IAS

- समिति द्वारा एक जांच की जाती है और निष्कर्षों के आधार पर विधायिका को सिफारिश की जाती है।
- सदन में रिपोर्ट पर चर्चा की जाती है जिसके आधार पर अध्यक्ष विशेषाधिकार समिति द्वारा निर्धारित दंड का आदेश दे सकता है।

विशेषाधिकार समिति

- संसद / राज्य विधानमंडल के प्रत्येक सदन में विशेषाधिकार संबंधी स्थायी समिति का प्रावधान किया गया है।
- लोकसभा और राज्यसभा की विशेषाधिकार संबंधी स्थायी समिति में क्रमशः 15 और 10 सदस्य शामिल होते हैं जिन्हें क्रमशः अध्यक्ष और सभापति द्वारा नामित किया जाता है।
- इसका कार्य विशेषाधिकारों के उल्लंघन संबंधी मामलों की जांच करना और अध्यक्ष/सभापति को उचित कार्रवाई की सिफारिश करना है।

विशेषाधिकारों के संबंध में चुनौतियां

- यह **'संवैधानिकता'** या सीमित शक्तियों के सिद्धांत के विरुद्ध है। **संहिताबद्ध विशेषाधिकारों की अनुपस्थिति** सदन को विशेषाधिकारों के उल्लंघन को परिभाषित करने के सम्बन्ध में असीमित शक्ति प्रदान करती है।
- विशेषाधिकारों से सम्बंधित मामलों में न्यायिक समीक्षा की अनुमति प्रदान नहीं की गई है। यह **न्यायिक पुनर्विलोकन के सिद्धांत के विरुद्ध** है।
- **यह शक्ति पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन** है ,क्योंकि अध्यक्ष या सभापति शिकायतकर्ता, वकील और न्यायाधीश, तीनों के रूप में कार्य करता है। साथ ही इसे न्यायिक कार्यवाही के लिए एक विकल्प के रूप में प्रयोग किया जाता है।
- विशेषाधिकारों के उल्लंघन के मामलों में जब तक सदन या उसके किसी सदस्य के कार्य को बाधित करने का प्रयास न किया गया हो तब तक कोई **दंडात्मक कार्यवाही किया जाना अनुचित** है।
- **विधायिका द्वारा "इसके कार्य संचालन में वास्तविक बाधा" उत्पन्न होने पर ही ऐसी कार्यवाही की जानी चाहिए**। सदन के सदस्यों की उचित आलोचना करने पर या राजनीतिक प्रतिशोध हेतु विशेषाधिकारों के उल्लंघन का दंड दिया जाना निर्वाचित प्रतिनिधियों की जवाबदेही को कम करता है। साथ ही इससे अभिव्यक्ति और व्यक्तिगत स्वतंत्रता के मूल अधिकारों का उल्लंघन भी होता है।
- **विशेषाधिकार हनन सम्बन्धी प्रस्ताव किसी विशिष्ट सदस्य द्वारा मानहानि के आधार पर** लाया जाता है, जबकि इस सम्बन्ध में मानहानि कानून के अंतर्गत न्यायिक सुरक्षा उपलब्ध है।

विशेषाधिकार उल्लंघन के उदाहरण

- आपातकाल के दौरान की गयी ज़्यादतियों के आधार पर (न्यायमूर्ति शाह समिति की रिपोर्ट) 1978 में इंदिरा गांधी को विशेषाधिकार के उल्लंघन के आरोप में विशेषाधिकार प्रस्ताव का सामना करना पड़ा। परिणामस्वरूप उन्हें सदन से निष्काषित कर दिया गया था।
- 1976 में संसद की गरिमा को ठेस पहुँचाने के आरोप में सुब्रमण्यम स्वामी को राज्यसभा से निष्कासित कर दिया गया था।
- तमिलनाडु विधानसभा द्वारा 2003 में मुख्यमंत्री की आलोचना के आरोप में द हिंदू के पत्रकारों को दंडित किया गया।
- कर्नाटक विधानसभा द्वारा 2017 में पत्रकारों को कारावास देने और उन पर जुर्माना आरोपित करने का प्रस्ताव पारित किया गया।

विशेषाधिकारों के संहिताकरण संबंधी विभिन्न अनुशंसाएं:

- **संविधान के कार्यचालन की समीक्षा हेतु राष्ट्रीय आयोग (NCRWC)** की अनुशंसाएं:
  - संसद एवं राज्य विधायिकाओं के स्वतंत्र एवं निष्पक्ष संचालन हेतु सांसदों और विधायकों के विशेषाधिकारों को परिभाषित एवं सीमांकित किया जाना चाहिए।
  - अनुच्छेद 105 और अनुच्छेद 194 को यह स्पष्ट करने हेतु संशोधित किया जा सकता है कि संसदीय विशेषाधिकारों के तहत सदस्यों को प्राप्त उन्मुक्तियां, सदन के भीतर या अन्यथा उनके कर्तव्यों का निर्वहन के संदर्भ में उनके द्वारा किए गए अनुचित कृत्यों हेतु प्राप्त नहीं है।
  - सदन के भीतर किसी सदस्य की कार्यवाही के परिणामस्वरूप हुए अपराध के संबंध में अध्यक्ष/सभापति की पूर्वानुमति के बिना किसी भी न्यायालय द्वारा जांच नहीं की जाएगी।
- **द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग** ने भी NCRWC की अनुशंसाओं का समर्थन किया है।
- **16वें अखिल भारतीय व्हिप सम्मेलन** द्वारा भी विशेषाधिकारों के संहिताकरण पर विचार करने की सिफारिश की गई थी ताकि इनसे संबंधित अनिश्चितताओं को समाप्त किया जा सके और प्रेस एवं लोगों की चिंताओं को भी दूर किया जा सके।

VISION IAS

आगे की राह

- संविधान सभा द्वारा **ब्रिटिश हाउस ऑफ कॉमन्स के आधार पर असंहिताबद्ध विशेषाधिकारों की प्रणाली को अस्थायी तौर पर परिकल्पित किया गया था।** भारतीय और ब्रिटिश संसद में भिन्न-भिन्न राजनीतिक और विधिक स्थितियाँ व्याप्त हैं (लोकप्रिय संप्रभुता बनाम संसदीय संप्रभुता)। इसलिए विशेषाधिकारों के उचित संहिताकरण की आवश्यकता है। उदाहरणार्थ, **ऑस्ट्रेलिया द्वारा 1987 में संसदीय विशेषाधिकार अधिनियम** पारित करके विशेषाधिकारों, उनके उल्लंघन की स्थिति और दंड को स्पष्टतः परिभाषित किया गया था।
- अध्यक्ष/सभापति के निर्णय उसकी राजनीतिक संबद्धताओं से प्रभावित हो सकते हैं। इसलिए **जाँच एक सक्षम, स्वतंत्र और निष्पक्ष न्यायाधिकरण द्वारा** की जानी चाहिए।
- उच्चतर न्यायपालिका (उच्चतम या उच्च न्यायालय) द्वारा **दण्डात्मक शक्तियों पर सीमा आरोपित** की जानी चाहिए।
- भारत की 'संप्रभु जनता' के स्वतंत्र अभिव्यक्ति के अधिकार पर निर्बंधन आरोपित किए गए हैं जबकि 'उनके प्रतिनिधियों' को सदन में अभिव्यक्ति की पूर्ण स्वतंत्रता प्रदान की गई है। **न्यायालयों द्वारा नागरिकों के मूल अधिकारों और विधायिका के विशेषाधिकारों के मध्य उचित संतुलन स्थापित करने हेतु पूर्व के निर्णयों पर पुनः विचार** किया जाना भी आवश्यक है।

3.2. राज्य सभा की उत्पादकता में ह्रास

(Falling Productivity of Rajya Sabha)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, राज्य सभा के सभापति द्वारा "रिपोर्ट टू द पीपल" प्रस्तुत की गयी। इसके तहत उच्च सदन के सामान्य से भी निम्नस्तरीय प्रदर्शन के साथ-साथ सांसदों का उत्तरदायित्व सुनिश्चित करने की आवश्यकता को चिन्हित किया गया है।

रिपोर्ट के मुख्य बिंदु

- जून, 2014 से अभी तक राज्य सभा के कुल 18 सत्र एवं 329 बैठकें आयोजित की गयीं, जिनमें **154 विधेयक (अर्थात दो बैठकों में एक विधेयक से भी कम) पारित** किए गए।
- राज्य सभा के **विधायी आउटपुट** में गिरावट आयी है। राज्य सभा में 2009 से 2014 के मध्य 188 विधेयक, जबकि 2004 से 2009 तक कुल 251 विधेयक पारित किए गए।
- वर्ष 2014 से उच्च सदन व्यवधानों के कारण कुल **आवंटित समय के 40% भाग का भी उपयोग करने में असमर्थ रहा है**।
- बजट सत्र के कुल 48 घंटों में से सदन में केवल 8 घंटे ही कार्य किया जा सका।

राज्य सभा की निम्न उत्पादकता के कारण:

- सरकार और विपक्ष के मध्य विद्यमान **राजनीतिक संघर्ष** के कारण इसके कार्य संचालन में गतिरोध, स्थगन इत्यादि में वृद्धि हुई है।
- **सर्वसम्मति का अभाव:** निम्न उत्पादकता अनेक मुद्दों पर सर्वसम्मति के अभाव को भी प्रदर्शित करती है। सरकार ऐसे मुद्दों पर विपक्ष को विश्वास में लेने में असमर्थ सिद्ध हुई है।
- **राज्य सभा के राजनीतिकरण** के कारण लोक महत्व के विषयों पर महत्वपूर्ण अंतर्दृष्टि प्रदान करने वाले एक विचारशील निकाय के रूप में इसकी भूमिका बाधित हुई है।

राज्य सभा का औचित्य

- **स्थायी सदन:** राज्य सभा का कभी भी विघटन नहीं किया जा सकता। अतः यह लोक सभा की विघटन अवधि के दौरान भी राष्ट्र को नेतृत्व एवं स्थिरता प्रदान करती है। इसके अतिरिक्त यह निम्न सदन की संरचना में होने वाले आकस्मिक परिवर्तनों को भी नियंत्रित करने का कार्य करती है।
- **लोकलुभावन उपायों के विरुद्ध संरक्षण:** यद्यपि लोकसभा लोकलुभावन घोषणाओं से उत्पन्न बाध्यताओं के तहत कार्य कर सकती है; परंतु राज्य सभा स्थायी एवं न्यून राजनीतिक सदन होने के कारण विभिन्न विधेयकों एवं मुद्दों पर गहन और गैर-लोकलुभावन पद्धति के तहत विचार करती है। यह राष्ट्रीय हित के महत्वपूर्ण मुद्दों के लिए द्वितीय मत भी प्रदान करती है।
- **राज्यों का प्रतिनिधित्व:** राज्य सभा में राज्य के प्रतिनिधि शामिल होते हैं, इसलिए राज्यों के हितों को राज्य सभा द्वारा परिलक्षित और संरक्षित किया जाता है।
- **विशेषज्ञों के लिए अवसर:** राज्यसभा महत्वपूर्ण विधायी मामलों पर अपना मत प्रस्तुत करने के लिए विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों को अवसर प्रदान करती है।
- **विधायी भार को साझा करना:** संपूर्ण विश्व की विधायिकाएं नए विषयों पर विधि-निर्माण की बढ़ती मांगों का सामना कर रही हैं। ऐसे में उच्च सदन निम्न सदन के भार को साझा करने में अत्यधिक उपयोगी हो जाता है।

VISION IAS

संसदीय कार्यप्रणाली से संबंधित अन्य मुद्दे:

- **संसदीय बैठकों की संख्या में कमी:** सदन में उत्पन्न होने वाले व्यवधानों के परिणामस्वरूप सदन के स्थगन होने जैसे विविध कारणों से संसदीय बैठकों की संख्या प्रतिवर्ष 120 दिन से घटकर प्रतिवर्ष 65-70 दिन रह गई है।
- **बिना किसी समीक्षा और चर्चा के विधेयक एवं बजट को पारित किया जाना:** उदाहरण के लिए, 1950 के दशक में बजट पर चर्चा करने हेतु औसतन 123 घंटों का समय लगता था जो विगत दशक में घटकर 39 घंटे ही रह गया है।
- **जवाबदेही का अभाव:** 16वीं लोकसभा में, लोकसभा के लिए निर्धारित प्रश्नकाल की अवधि का 77% ही उपयोग किया गया, जबकि राज्यसभा में यह स्थिति निर्धारित अवधि का 47% रही है। निर्धारित समय में हुई यह कमी, उस अवसर की क्षति को इंगित करती है जहां सरकार को उसके कार्यों के प्रति जवाबदेह बनाए रखा जा सकता था।
- **व्यवधान**: 2012-2016 के मध्य, व्यवधानों के कारण लोकसभा में लगभग 30% तथा राज्यसभा में 35% समय की क्षति हुई जो लोकतंत्र के संचालन के लिए आवश्यक नियंत्रण एवं प्रबंधन की एक संवदेनशील व्यवस्था को कमजोर करता है।

राज्य सभा की आलोचना

- **अल्प महत्व:** धन विधेयक एवं बजट जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों पर राज्य सभा को अपना मत व्यक्त करने हेतु अत्यल्प अधिकार प्राप्त हैं, जो लोकसभा की तुलना में इसके महत्व को कम करता है।
- **राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं वाले व्यक्तियों के सदन के रूप में:** उच्च सदन राजनीतिक पार्टियों के फंड-रेजर (जो चुनाव हार गए हो), क्रोनी पूंजीवादियों, पत्रकारों, सेवानिवृत्त CEOs (मुख्य कार्यकारी अधिकारी) तथा सिविल सेवकों के लिए राजनीतिक महत्वाकांक्षाओं की पूर्ति हेतु एक प्रमुख स्थान बन गया है।
- **त्वरित विधि निर्माण में अवरोध:** वर्तमान समय में मौजूदा प्रतिस्पर्द्धी राजनीति के कारण विपक्षी राजनीतिक दलों द्वारा त्वरित विधि निर्माण में अवरोध उत्पन्न करने हेतु राज्य सभा का उपयोग किया जा सकता है, जो राष्ट्र के विकास के लिए हानिकारक है।
- हाल के दिनों में **निरंतर उत्पन्न होने वाले व्यवधानों** के परिणामस्वरूप उच्च सदन के विमर्श एवं जवाबदेही से सम्बंधित कार्यों में ह्रास हुआ है।

राज्य सभा के संघीय स्वरूप को सुनिश्चित करने हेतु कुछ अनुशंसाएं

- **अमेरिकी सीनेट की तरह राज्य सभा के लिए प्रत्येक राज्यों को एक निश्चित संख्या में सीटें आवंटित करना:** ज्ञातव्य है कि अमेरिका में जनसंख्या के आकार को ध्यान में रखे बिना प्रत्येक राज्य से दो सीनेट निर्वाचित किया जाते हैं। इस प्रकार यह कदम उच्च सदन को एक ऐसे वास्तविक स्थल के रूप में रूपांतरित करेगा जहां राज्य हितों से संबंधित विषयों पर चर्चा की जा सकेगी। साथ ही, यह निम्न सदन में सीटों के पुनर्आवंटन से संबंधित मुद्दे का भी समाधान करेगा।
- राज्य सभा के लिए अप्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली को समाप्त करना तथा प्रत्यक्ष चुनाव की प्रक्रिया को स्थापित करना। इस दृष्टिकोण को संयुक्त राज्य अमेरिका द्वारा अपनाया गया है।
- NCRWC ने संबंधित राज्य से राज्यसभा के चुनाव लड़ने संबंधी पात्रता के लिए निवास की आवश्यकता को बनाये रखने का सुझाव दिया है। हालांकि, वर्ष 2003 में इस निवास संबंधी आवश्यकता को समाप्त कर दिया गया था।

आगे की राह

- **वैधानिक उपाय: संसद (उत्पादकता में वृद्धि) विधेयक, 2017** को पारित किया जाना चाहिए जिसका उद्देश्य संसद के दोनों सदनों के संचालन के दिनों की न्यूनतम संख्या (राज्यसभा के लिए 100 दिनों की अवधि) निर्धारित करना है।
  - संविधान की कार्य पद्धति की समीक्षा करने के लिए राष्ट्रीय आयोग (NCRWC) ने लोक सभा एवं राज्यसभा हेतु कार्य दिवसों की न्यूनतम संख्या क्रमशः 120 और 100 निर्धारित करने की अनुशंसा की है।
- **प्रदर्शन-आधारित वेतन:** राज्यसभा के सदस्यों के वेतन को उनके प्रदर्शन एवं सदन में उनकी उपस्थिति के आधार पर निर्धारित करने की भी मांग की गई है।
- सदन के सदस्यों द्वारा असभ्य एवं अनुशासनहीन व्यवहार (जैसे चिल्लाना, नारेबाजी इत्यादि) से निपटने के लिए कठोर **प्रक्रिया एवं कार्य संचालन नियमों** को लागू किया जाना चाहिए, ताकि राज्यसभा का आवंटित समय व्यर्थ न हो सके।
- **दल-बदल विरोधी कानून की समीक्षा करना**, क्योंकि यह राजनीतिक दलों को व्यापक अधिकार प्रदान करता है। यदि कोई राजनीतिक दल संसदीय कार्यवाही में व्यवधान उत्पन्न करने का निर्णय लेता है, तो उस परिस्थिति में सांसद अपने दल के निर्णय के विरुद्ध नहीं जा सकते, भले ही उनका मत भिन्न हो।
- नागरिकों के दबाव समूहों को नियमित अंतराल पर **संसद एवं सांसदों के प्रदर्शन का सतत मूल्यांकन करना** चाहिए जिससे सांसदों पर स्वयं बेहतर प्रदर्शन करने और संसद पर अपने निर्दिष्ट कार्यों को सुचारू रूप से करने देने हेतु दबाव बनाया जा सके।

VISION IAS

3.3. मंत्रिमंडलीय समितियाँ

(Cabinet Committees)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, केंद्र सरकार द्वारा **दो नई समितियों** (निवेश और विकास पर मंत्रिमंडलीय समिति तथा रोजगार और कौशल विकास पर मंत्रिमंडलीय समिति) के गठन सहित आठ प्रमुख मंत्रिमंडलीय समितियों का पुनर्गठन किया गया है।

मंत्रिमंडलीय समितियों (Cabinet Committees) के बारे में

- ये **संविधानेत्तर** निकाय हैं, जिनकी स्थापना से संबंधित प्रावधान **भारत सरकार (कार्य संचालन) नियम, 1961** में उपबंधित किए गए हैं।
- **प्रधानमंत्री द्वारा** इन्हें समय की अनिवार्यता और परिस्थितियों की मांग के अनुसार गठित किया जाता है। इसलिए इनकी संख्या, नामकरण और संरचना समय के साथ परिवर्तित होते रहते हैं।
- **वर्गीकरण:** ये दो प्रकार की होती हैं: **स्थायी** और **तदर्थ।** स्थायी समितियां स्थायी प्रकृति की जबकि तदर्थ समिति अस्थायी प्रकृति की होती हैं।
- **संरचना:** सामान्यतः इनमें **केवल कैबिनेट मंत्री** शामिल होते हैं। हालांकि, **कैबिनेट मंत्रियों के अतिरिक्त अन्य मंत्रियों को भी इनका सदस्य बनाया जा सकता है**। इनमें न केवल संबंधित मामलों के प्रभारी मंत्री शामिल होते हैं बल्कि अन्य वरिष्ठ मंत्री भी शामिल होते हैं। इनके सदस्यों की संख्या **तीन से लेकर आठ** तक हो सकती है।
- **समितियों के प्रमुख:** अधिकांश समितियों का अध्यक्ष **प्रधानमंत्री** होता है। कभी-कभी अन्य कैबिनेट मंत्री भी अध्यक्ष के रुप में कार्य करते हैं। किन्तु, यदि प्रधानमंत्री किसी समिति का सदस्य होता है, तो उसके द्वारा ही उस समिति की अध्यक्षता की जाती है।
- आवास संबंधी मंत्रिमंडलीय समिति और संसदीय कार्य संबंधी मंत्रिमंडलीय समिति को छोड़कर, **प्रधानमंत्री** उपर्युक्त **छह समितियों का अध्यक्ष** होता है।

पुनर्गठित समितियां निम्नलिखित हैं:

- **नियुक्ति संबंधी मंत्रिमंडलीय समिति (ACC):** इसके द्वारा केंद्रीय सचिवालय, सार्वजनिक उद्यम, बैंक, तीनों सेवाओं के प्रमुखों आदि से संबंधित सभी उच्च-स्तरीय नियुक्तियों के संबंध में निर्णय लिया जाता है। इसके द्वारा केंद्रीय स्तर पर प्रति-नियुक्त (Central deputation) होने वाले अधिकारियों के स्थानान्तरण के संबंध में भी निर्णय किया जाता है।
- **आर्थिक मामलों संबंधी मंत्रिमंडलीय समिति (CCEA):** इसके द्वारा एक सुसंगत और एकीकृत आर्थिक नीति विकसित करने हेतु आर्थिक प्रवृतियों, समस्याओं तथा संभावनाओं की समीक्षा की जाती है।
    - यह कृषि उपज की कीमतों और आवश्यक वस्तुओं की कीमतों का भी निर्धारण करती है।
    - यह औद्योगिक लाइसेंसिंग नीतियों तथा ग्रामीण विकास और सार्वजनिक वितरण प्रणाली की समीक्षा करती है।
    - यह 1,000 करोड़ रुपये से अधिक के निवेश के प्रस्तावों पर भी विचार करती है।
- **संसदीय कार्य संबंधी मंत्रिमंडलीय समिति:** यह संसदीय सत्रों के लिए समय-सारणी (schedule) तैयार करती है और संसद में सरकारी कार्यों की प्रगति की निगरानी भी करती है।
    - यह **गैर-सरकारी कार्यों की संवीक्षा** करती है तथा यह भी निर्धारित करती है कि किन सरकारी विधेयकों और प्रस्तावों को प्रस्तुत किया जाना है।
- **राजनीतिक मामलों की मंत्रिमंडलीय समिति (CCPA) :** इसके द्वारा घरेलू और विदेशी मामलों से संबंधित सभी नीतिगत निर्णय लिए जाते हैं।
- **सुरक्षा मामलों पर मंत्रिमंडलीय समिति:** इसके द्वारा **कानून और व्यवस्था, आंतरिक सुरक्षा और आंतरिक अथवा बाह्य सुरक्षा निहितार्थों** से संबंधित विदेशी मामलों पर नीतिगत कार्यवाहियों की निगरानी की जाती है।
    - यह राष्ट्रीय सुरक्षा से संबंधित आर्थिक और राजनीतिक मुद्दों पर भी निगरानी रखती है। साथ ही रक्षा क्षेत्र में किए गए 1,000 करोड़ रुपये से अधिक के पूंजीगत व्यय से संबंधित सभी मामलों पर विचार करती है।
    - यह **रक्षा उत्पादन विभाग (DDP)** तथा **रक्षा अनुसंधान और विकास विभाग, सर्विस कैपिटल एक्विजिशन प्लान (SCAP)** और सुरक्षा-संबंधी उपकरणों की खरीद योजनाओं से संबंधित मुद्दों पर विचार करती है।
- **आवास संबंधी मंत्रिमंडलीय समिति:** यह सरकारी आवासों के आवंटन के संबंध में दिशा-निर्देश अथवा नियम निर्धारित करती है जिसके अंतर्गत संसद सदस्यों के लिए आवंटित किए जाने वाले आवास भी शामिल हैं।

VISION IAS

मंत्रिमंडलीय समितियों का महत्व:

- **कार्यभार में कमी:** ये मंत्रिमंडल के अत्यधिक कार्यभार को कम करने हेतु एक संगठनात्मक उपकरण के तौर पर कार्य करते हैं। साथ ही, ये समितियां नीतिगत मुद्दों का गहन परीक्षण एवं प्रभावी समन्वय स्थापित करने की सुविधा भी प्रदान करती हैं। उल्लेखनीय है कि, मंत्रिमंडल इनके निर्णयों की समीक्षा कर सकता है।
- **महत्वपूर्ण नीतिगत निर्णय-निर्माण:** उदाहरण के लिए, राजनीतिक मामलों संबंधी मंत्रिमंडलीय समिति (CCPA) द्वारा केंद्र-राज्य संबंधों या राजनीतिक निहितार्थों से संबंधित आर्थिक मुद्दों या विदेश मामलों से संबंधित नीतिगत मामलों पर निर्णयन किया जाता है। इस कारण से, CCPA को **सुपर कैबिनेट (Super Cabinet)** के रूप में जाना जाता है।
- **संकटकालीन परिस्थितियों में जब प्रधानमंत्री से संपर्क स्थापित न हो पाए तो ऐसी स्थिति में निर्णय लेना:** यदि कुछ कारणों से प्रधानमंत्री से संपर्क स्थापित न हो पाए तो उस स्थिति में CCPA द्वारा निर्णय किया जा सकता है, उदाहरणार्थ- जब प्रधानमंत्री विदेश यात्रा पर गए हों और उनसे संपर्क स्थापित नहीं हो पा रहा हो। ऐसी परिस्थितियों में, संवेदनशील मामले पर इस समिति द्वारा निर्णय किया जा सकता है।
- इसका निर्णय पूर्णतया अंतिम होता है और इस पर पूर्ण मंत्रिमंडल के अनुमोदन की आवश्यकता नहीं होती है। यह ग्रुप ऑफ़ मिनिस्टर्स (मंत्रियों के समूह) से भिन्न है, जिसे अपने निर्णयों की स्वीकृति हेतु कैबिनेट के समक्ष प्रस्तुत करना होता है।

दो नई समितियां हैं:

- **निवेश और विकास पर मंत्रिमंडलीय समिति:**
    - इसके द्वारा एक **निश्चित समयसीमा के अंतर्गत कार्यान्वित की जाने वाली** 1,000 करोड़ रुपये या इससे अधिक के निवेश की अवसंरचना और विनिर्माण संबंधित परियोजनाओं अथवा इसके द्वारा निर्दिष्ट किसी **अन्य महत्वपूर्ण परियोजनाओं की पहचान की जाएगी।**
    - इसके द्वारा चिन्हित क्षेत्रों में संबंधित मंत्रालयों द्वारा अपेक्षित अनुमोदन और स्वीकृति प्रदान करने हेतु समय-सीमा का निर्धारण किया जाएगा। साथ ही, इसके द्वारा इस प्रकार की परियोजनाओं की प्रगति की निगरानी भी की जाएगी।
- **रोजगार और कौशल विकास पर मंत्रिमंडलीय समिति:**
    - इसके द्वारा कौशल विकास के लिए सभी **नीतियों, कार्यक्रमों, योजनाओं और पहलों को दिशा प्रदान** की जाएगी, जिसका उद्देश्य वृद्धिशील अर्थव्यवस्था की उभरती आवश्यकताओं को प्रभावी ढंग से पूरा करने और **जनसांख्यिकीय लाभांश** के लाभों को प्राप्त करने हेतु **कार्यबल की रोजगार क्षमता** को बढ़ाना है।
    - उल्लेखनीय है कि **कार्यबल में भागीदारी को बढ़ाना**, रोजगार वृद्धि को बढ़ावा देना और संबंधित कारणों की पहचान करना तथा विभिन्न क्षेत्रों में कौशल की आवश्यकता और उपलब्धता के मध्य विद्यमान अंतराल को समाप्त करने की दिशा में कार्य करना आवश्यक है।
    - मंत्रालयों द्वारा संचालित सभी कौशल विकास पहलों के त्वरित कार्यान्वयन के लिए इन समितियों द्वारा लक्ष्य निर्धारित किया जाएगा और समय-समय पर इस संबंध में इसकी प्रगति की समीक्षा भी की जाएगी।

सीमाएं:

- **कार्यप्रणालियों का अतिव्यापन:** उदाहरणार्थ, आर्थिक मामलों संबंधी मंत्रिमंडलीय समिति (CCEA) और निवेश संबंधी मंत्रिमंडलीय समिति दोनों की कार्यप्रणालियों में अतिव्यापन हो सकता है। दोनों निकायों के तहत मंत्रियों के भिन्न समूह सम्मिलित होते हैं और समान मुद्दों पर भिन्न-भिन्न विचार व्यक्त कर सकते हैं।
- **वृहत एवं अव्यवस्थित:** इन समितियों में सहयोगी दलों के प्रतिनिधि भी शामिल होते हैं, जिससे ये वृहत एवं अव्यवस्थित हो जाती हैं और कभी-कभी इनके द्वारा किसी विषय पर अनावश्यक असहमति भी व्यक्त की जा सकती है।

VISION IAS

4. संवैधानिक विनियामक एवं अन्य निकाय (Constitutional Regulatory and other Bodies)

4.1. भारत का नियंत्रक-महालेखापरीक्षक

(Comptroller and Auditor General of India)

पृष्ठभूमि

- भारतीय संविधान के **अनुच्छेद 148** के अंतर्गत भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक (CAG) की व्यवस्था की गयी है। यह लोक वित्त का संरक्षक होने के साथ-साथ केंद्र और राज्य, दोनों स्तरों पर देश की संपूर्ण वित्तीय प्रणाली को नियंत्रित करता है।
- **अनुच्छेद 149** के तहत, संविधान संसद को CAG के कर्तव्यों और शक्तियों को निर्धारित करने का अधिकार प्रदान करता है। संसद द्वारा इसके लिए **नियंत्रक-महालेखापरीक्षक (कर्तव्य, शक्तियां और सेवा की शर्तें) अधिनियम, 1971** अधिनियमित किया गया था।

CAG की स्वतंत्रता सुनिश्चित करने हेतु उपबंधित प्रावधान:

- **कार्यकाल की सुरक्षा:** CAG को राष्ट्रपति द्वारा उन्ही आधारों पर एवं उसी प्रक्रिया से हटाया जा सकता है जो उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को हटाए जाने के लिए निर्धारित किए गए हैं।
- **सेवानिवृत्ति के पश्चात् कोई अन्य पद ग्रहण करने पर रोक:** वह अपना पद छोड़ने के पश्चात् भारत सरकार या किसी भी राज्य सरकार के अधीन किसी भी अन्य पद को ग्रहण करने हेतु पात्र नहीं होगा।
- **वेतन एवं अन्य सेवा शर्तों का निर्धारण** संसद द्वारा किया जाता है और इनमें CAG की नियुक्ति के पश्चात् कोई भी अलाभकारी परिवर्तन नहीं किया जा सकता है।
- **इसके व्यय भारत सरकार की संचित निधि पर भारित होते हैं:** CAG कार्यालय के प्रशासनिक व्यय, जिसमें उस कार्यालय में सेवारत कर्मचारियों के वेतन, भत्ते, पेंशन आदि सभी शामिल हैं, भारत की संचित निधि पर भारित होते हैं।
- **प्रशासनिक शक्तियां:** भारतीय लेखा परीक्षा और लेखा विभाग में सेवारत कर्मचारियों की सेवा शर्तें और CAG की प्रशासनिक शक्तियां राष्ट्रपति द्वारा CAG के परामर्श के बाद निर्धारित की जाती हैं।

CAG की भूमिका

- **वित्तीय प्रशासन** के क्षेत्र में संसद के प्रति कार्यपालिका की जवाबदेही CAG की लेखापरीक्षा रिपोर्टों के माध्यम से निर्धारित होती है।
- CAG निम्नलिखित से संबंधित सभी व्यय खातों की लेखा परीक्षा करता है:
  - भारत की **संचित निधि**, भारत की **आकस्मिकता निधि** और भारत की **लोक लेखा**।
  - प्रत्येक राज्य की **संचित निधि** और प्रत्येक संघ शासित प्रदेश (जिसमें विधान सभा हो) की **संचित निधि**।
  - प्रत्येक राज्य की **आकस्मिकता निधि** और प्रत्येक राज्य की **लोक लेखा**।
- CAG **केंद्र सरकार और राज्य सरकारों के किसी भी विभाग के व्यापार, विनिर्माण, लाभ और हानि खातों,** तुलन पत्रों **और अन्य अनुषंगी खातों** की लेखा परीक्षा करता है।
- CAG निम्नलिखित से संबंधित प्राप्तियों और व्यय की लेखा परीक्षा करता है:
  - केंद्र या राज्यों से उल्लेखनीय मात्रा में **अनुदान प्राप्त करने वाले** सभी निकाय और प्राधिकरण;
  - **सरकारी कंपनियाँ**; तथा
  - **जब सम्बद्ध नियमों द्वारा आवश्यक हो**, अन्य निगमों या निकायों की लेखा परीक्षा।
- CAG द्वारा राष्ट्रपति को **तीन लेखा परीक्षा रिपोर्टें** सौंपी जाती हैं:
  - विनियोग खातों पर लेखा परीक्षा रिपोर्ट,
  - वित्त खातों पर लेखा परीक्षा रिपोर्ट,
  - सार्वजनिक उपक्रमों की लेखा परीक्षा रिपोर्ट।

राष्ट्रपति इन रिपोर्टों को संसद के दोनों सदनों के समक्ष रखता है। इसके पश्चात्, लोक लेखा समिति उनकी जांच करती है और संसद को अपने निष्कर्षों के संबंध में रिपोर्ट प्रदान करती है।

- CAG संसद की **लोक लेखा समिति** के मार्गदर्शक, मित्र और दार्शनिक के रूप में कार्य करता है।

VISION IAS

CAG द्वारा की जाने वाली लेखा परीक्षाओं के प्रकार

- **अनुपालन लेखा परीक्षा:** इसके तहत यह आकलित किया जाता है कि गतिविधियाँ, वित्तीय लेन-देन और सूचनाएं प्रचलित विधियों, नियमों और विनियमों आदि का अनुपालन करती हैं या नहीं।
- **वित्तीय लेखा परीक्षा:** इसमें इस विषय पर ध्यान केंद्रित किया जाता है कि किसी इकाई द्वारा प्रदत्त वित्तीय सूचनाएं विद्यमान वित्तीय रिपोर्टिंग और नियामक ढांचे के अनुरूप हैं या नहीं।
- **निष्पादन लेखा परीक्षा:** इसमें इस विषय पर ध्यान केंद्रित किया जाता है कि क्या संस्थाएं **मितव्ययिता, दक्षता एवं प्रभावशीलता** के सिद्धांतों के अनुरूप कार्य निष्पादन कर रही हैं और क्या इसमें सुधार का अवसर है?

हालांकि, **पहले दो प्रकार के लेखा परीक्षाएं अनिवार्य हैं, जबकि निष्पादन लेखा परीक्षा विवेकाधीन या ऐच्छिक है।**

CAG की आलोचना

- **नियुक्ति:** CAG के लिए वर्तमान चयन प्रक्रिया पूर्णतः सरकारी मशीनरी द्वारा आंतरिक रूप से संचालित की जाती है। यह कार्यकारी जवाबदेही सुनिश्चित करने संबंधी इसकी भूमिका के विरुद्ध है।
- **व्यय-पश्चात् लेखा परीक्षा:** ब्रिटेन के विपरीत, भारत में CAG की रिपोर्ट पोस्ट फैक्टो (व्यय किए जाने के पश्चात्) प्रकृति की होती है। ब्रिटेन में राजकोष से कोई धन CAG की स्वीकृति के बिना नहीं निकाला जा सकता है। इस प्रकार, भारत में CAG को केवल एक ऑडिटर जनरल की भूमिका प्रदान की गयी है (नियंत्रक महालेखाकार की नहीं) जबकि ब्रिटेन में इसे नियंत्रक और महालेखा परीक्षक दोनों की शक्तियां प्रदान की गयी हैं।
- भारत में CAG **संसद का सदस्य नहीं है** जबकि ब्रिटेन में यह हाउस ऑफ़ कॉमन्स का एक सदस्य होता है।
- **अधिदेश से बाहर जाकर कार्य करना:** कुछ वर्गों द्वारा CAG की 2G और कोल ब्लॉक आवंटन से संबंधित रिपोर्ट्स की आलोचना की गयी थी। इनके द्वारा तर्क दिया गया कि ये क्षेत्र CAG के अधिकार क्षेत्र और अधिदेश से बाहर हैं।
- **जोखिम से बचने की प्रवृत्ति को बढ़ावा देना:** लेखा परीक्षकों द्वारा प्रशासन की व्यावहारिक समस्याओं का ध्यान न रख पाने की संभावना होती है। ऐसे में जब CAG नीति की 'तार्किकता, निष्ठा, मितव्ययिता' पर विचार करता है तो प्रशासक जोखिम उठाने का साहस नहीं करते हैं और केवल साधारण नीति का निर्माण करते हैं।
- **हितों का टकराव:** जब पूर्व सचिवों को CAG के रूप में नियुक्त किया जाता है, तो कथित हितों के टकराव के कारण संस्थान की स्वतंत्रता से समझौता हो सकता है। जैसे पूर्व रक्षा सचिव शशिकांत शर्मा की CAG के रूप में नियुक्ति।
- **गुप्त सेवाओं पर किया गया व्यय**: CAG की लेखा परीक्षा संबंधी भूमिका पर एक सीमा आरोपित करता है। इस संबंध में CAG कार्यकारी एजेंसियों द्वारा किए गए व्यय के विवरण की मांग नहीं कर सकता है और उसे सक्षम प्रशासनिक प्राधिकारी के प्रमाण पत्र को स्वीकार करना होता है कि इस प्रकार का व्यय उसके प्राधिकार के अंतर्गत किया गया है।
- **दस्तावेजों की आपूर्ति में विलंब:** सामान्यतः ऑडिट प्रक्रिया में लेखा परीक्षकों को महत्वपूर्ण दस्तावेज की आपूर्ति में विलंब किया जाता है या अधिकांशतः उन्हें प्रक्रिया के अंतिम समय में ये दस्तावेज उपलब्ध कराए जाते हैं। यह महत्वपूर्ण दस्तावेजों की सार्थक लेखा परीक्षा को बाधित करने के उद्देश्य से किया जाता है।

आगे की राह

- 2015 में संसद और राज्य/संघ शासित प्रदेशों की विधानसभाओं की लोक लेखा समितियों (PACs) के अखिल भारतीय सम्मेलन में CAG को **PAC का हिस्सा बनाते हुए,** ब्रिटेन और ऑस्ट्रेलिया की भांति इसकी पूर्ण स्वतंत्रता की आवश्यकता पर चर्चा की गयी।
- केन्द्रीय सतर्कता आयुक्त (CVC) की तर्ज पर CAG की नियुक्ति एक **बहु-सदस्यीय निकाय द्वारा** की जानी चाहिए।
- जलवायु परिवर्तन, PPPs और अन्य नवीन मुद्दों के कारण लेखा परीक्षा की जटिलता में वृद्धि हो गयी है। 2016 में CAG द्वारा नई चुनौतियों का सामना करने के लिए **बिग डेटा मैनेजमेंट पॉलिसी** प्रस्तावित की गयी थी, जो कि एक स्वागत योग्य कदम है।
- लेखा परीक्षकों को सीमित समय में **प्राथमिकता के आधार पर दस्तावेजों तक पहुंच** प्रदान की जानी चाहिए। ऐसा करने में विफलता के मामले में, विलंब के लिए विभाग प्रमुखों द्वारा स्पष्टीकरण दिए जाने की अनिवार्यता होनी चाहिए।

VISION IAS

4.1.1. रिडैक्टिव प्राइसिंग ऑडिट

(Redactive Pricing Audit)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, उच्चतम न्यायालय द्वारा राफेल लड़ाकू विमान सौदे के संदर्भ में **रिडैक्टिव प्राइसिंग** पर भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक (CAG) की रिपोर्ट का उद्धरण देते हुए टिप्पणी की गयी। इस टिप्पणी के कारण देश की सर्वोच्च लेखांकन संस्था की भूमिका पुनः सुर्ख़ियों में आ गयी है।

पृष्ठभूमि

- कुछ समय पूर्व, CAG ने **"भारतीय वायु सेना में पूँजीगत अधिग्रहण पर भारत के नियंत्रक-महालेखापरीक्षक की प्रदर्शन लेखा-परीक्षा रिपोर्ट"** नामक एक रिपोर्ट प्रस्तुत की थी। इस रिपोर्ट के प्राक्कथन में CAG ने यह उल्लेख किया था कि यहाँ प्रयुक्त रिडैक्टिव प्राइसिंग की अवधारणा अभूतपूर्व कदम था, क्योंकि इसे **मंत्रालय द्वारा सुरक्षा चिंताओं को हवाला देने** के कारण स्वीकार किया गया था।
- किसी दस्तावेज़ के प्रकाशन से पूर्व उस दस्तावेज से **संवेदनशील सूचना** को **गुप्त रखने या उसे हटाने** की प्रक्रिया को **रिडेक्शन** कहा जाता है। इसे अपनाने के कारण ही उक्त रिपोर्ट में पूर्ण वाणिज्यिक विवरणों को शामिल **नहीं** किया गया। साथ ही, खरीद समझौते पर **आंकड़ों को हटा (blackened)** दिया गया।
- इस प्रकार यह एक अभूतपूर्व कदम था, क्योंकि यहाँ संविधान के **अनुच्छेद 151** के तहत CAG द्वारा राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत की गई एक लेखा परीक्षा रिपोर्ट में प्रासंगिक सूचनाओं का प्रकटीकरण नहीं किया गया। इसने CAG के संवैधानिक अधिदेश तथा क्या रिडैक्टिव प्राइसिंग को इसमें शामिल किया जा सकता है, के मुद्दे पर चर्चा की आवश्यकता को उत्पन्न कर दिया है।

लेखापरीक्षा में रिडैक्टिव प्राइसिंग के निहितार्थ:

- **यह लेखापरीक्षा के मूल औचित्य को निष्फल करता है:** "प्रदर्शन लेखापरीक्षा" (परफॉरमेंस ऑडिट) यह निर्धारित करने के लिए की जाती है कि क्या सरकार द्वारा खरीद गतिविधियों के दौरान अर्थव्यवस्था, दक्षता, प्रभावशीलता, नैतिकता और इक्विटी को ध्यान में रखा गया था या नहीं। उल्लेखनीय है कि, केवल एक संपूर्ण प्राइसिंग ऑडिट ही खरीद संबंधी निर्णय की विश्वसनीयता और सत्यनिष्ठा को प्रदर्शित कर सकता है।
    - जबकि, रिडैक्टिव प्राइसिंग के तहत, **संवेदनशील विवरणों को हटा दिया जाता है।** जैसे कि राफेल सौदे में विभिन्न विवरणों, यथा- **विमानों की मूल आवश्यकता में कटौती कर इसे 36 विमान तक सीमित किया जाना;** लेखांकन संबंधी निष्कर्ष पर पहुंचने से पूर्व बैंक गारंटी और परफॉरमेंस गारंटी के समावेशन के कारण हुए लागत संवर्धन के लिए **उपयुक्त तुलनात्मक परीक्षण नहीं किया जाना** आदि को इससे बाहर रखा गया।
- **जवाबदेही सुनिश्चितता हेतु उत्तरवर्ती परीक्षण का अभाव:** उदाहरण के लिए, राफेल सौदे में संसद, इसकी समितियों, मीडिया और CAG की रिपोर्ट से संबंधित अन्य हितधारकों को रिडैक्टिव प्राइसिंग के कारण पूर्ण, सटीक और विश्वसनीय जानकारी प्राप्त नहीं हो सकती।
- **यह भ्रष्टाचार-रोधी प्रयासों में एक अवरोध बन सकता है:** क्योंकि CAG की रिपोर्टें प्रायः केंद्रीय सतर्कता आयोग, केंद्रीय जांच ब्यूरो जैसे भ्रष्टाचार-रोधी निकायों द्वारा भविष्य में की जाने वाली जाँच हेतु आधार प्रदान करती हैं।

आगे की राह

- रिडैक्टिव प्राइसिंग ऑडिट किए बिना **मूल्य निर्धारण संबंधी निर्णयों का विस्तृत विश्लेषण किया** जाना चाहिए। संसद को संवैधानिक रूप से यह जानने का विशेषाधिकार प्राप्त है कि कार्यपालिका द्वारा क्या और किस प्रकार कार्य किया गया है तथा किन शर्तों के अधीन खरीद हेतु निर्णय लिया गया है।
- CAG भ्रष्टाचार निवारण, इसका पता लगाने एवं इसके विरुद्ध उपचारात्मक तथा निवारक कार्रवाई के माध्यम से सुशासन प्रदान करने में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करता है। अपने अधिदेशित कर्तव्यों का अनुपालन करते हुए CAG आंतरिक नियंत्रणों, शक्तियों के पृथक्करण, दोषपूर्ण नियोजन, कार्यान्वयन और अपर्याप्त निगरानी से संबंधित त्रुटियों को प्रस्तुत करता है।

VISION IAS

4.2. लोकपाल

(Lokpal)

सुर्खियों में क्यों?

हाल ही में, प्रधानमंत्री के नेतृत्व वाली चयन समिति ने सर्वोच्च न्यायालय के पूर्व न्यायाधीश **पिनाकी चंद्र घोष** को भारत के **प्रथम लोकपाल** के रूप में नियुक्त किया है।

पृष्ठभूमि

- वर्ष 2011 में जन लोकपाल विधेयक को लेकर हुए विरोध प्रदर्शनों की श्रृंखला के साथ-साथ भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन के बाद लोकपाल और लोकायुक्त अधिनियम, 2013 को अधिनियमित किया गया था।
- हालांकि, **विपक्ष के नेता की अनुपस्थिति के कारण** लोकपाल की नियुक्ति में विलंब हुआ है। उल्लेखनीय है कि विपक्ष का नेता, लोकपाल की अनुशंसा करने वाली चयन समिति का सदस्य होता है।
- इसके पश्चात् सर्वोच्च न्यायालय द्वारा हस्तक्षेप किया गया और लोकपाल की शीघ्र नियुक्त हेतु समय सीमा निर्धारित की गई।

लोकपाल और लोकायुक्त अधिनियम, 2013 की मुख्य विशेषताएं

- **संस्थागत तंत्र:** कुछ लोक पदाधिकारियों के विरुद्ध भ्रष्टाचार के आरोपों की जांच करने हेतु संघ में लोकपाल और राज्यों में लोकायुक्त की स्थापना का प्रावधान किया गया।
- **संरचना:** लोकपाल में **एक अध्यक्ष** और **अधिकतम आठ सदस्य होंगे,** जिनमें से 50% सदस्यों का चयन न्यायिक सेवा और 50% अनुसूचित जाति/अनुसूचित जनजाति/अन्य पिछड़ा वर्ग, अल्पसंख्यक और महिलाओं के मध्य से किया जाएगा।
- **नियुक्ति प्रक्रिया:** यह दो चरणों वाली प्रक्रिया है।
    - **खोज समिति (search committee),** जो उच्च-अधिकार प्राप्त चयन समिति को नामों के एक पैनल की अनुशंसा करती है।
    - **चयन समिति (selection committee)** में प्रधानमंत्री, लोकसभा अध्यक्ष, लोकसभा में विपक्ष का नेता, भारत का मुख्य न्यायाधीश (या उनके द्वारा नामित न्यायाधीश) और एक प्रख्यात न्यायविद (पैनल के अन्य सदस्यों की अनुशंसा पर राष्ट्रपति द्वारा नामित) शामिल हैं।
    - राष्ट्रपति अनुशंसित नामों की नियुक्ति करेगा।
- **अधिकारिता (क्षेत्राधिकार):** लोकपाल का क्षेत्राधिकार निम्नलिखित तक विस्तारित है:
    - **वर्तमान या भूतपूर्व प्रधानमंत्री, केंद्र सरकार के मंत्रियों और संसद सदस्यों के साथ-साथ ग्रुप A, B, C और D सेवाओं में कार्यरत केंद्र सरकार के अधिकारी।**
    - किसी भी बोर्ड, निगम, सोसाइटी, न्यास (ट्रस्ट) या स्वायत्त निकाय **(संसद के अधिनियम द्वारा स्थापित अथवा केंद्र द्वारा पूर्णतः या आंशिक रूप से वित्त पोषित)** के अध्यक्ष, सदस्य, अधिकारी और निदेशक।
    - **कोई भी सोसाइटी या न्यास या निकाय जो 10 लाख से अधिक का विदेशी अनुदान प्राप्त करता है।**
- **प्रधानमंत्री के लिए अपवाद**
    - यदि प्रधानमंत्री के विरुद्ध आरोप अंतर्राष्ट्रीय संबंधों, बाह्य और आंतरिक सुरक्षा, लोक व्यवस्था, परमाणु ऊर्जा तथा अंतरिक्ष से संबंधित हैं तो इस अधिनियम के तहत जांच नहीं की जाएगी।
    - प्रधानमंत्री के विरुद्ध शिकायतों की जांच तब तक नहीं की जा सकती है, जब तक कि लोकपाल की संपूर्ण पीठ जांच प्रारंभ करने पर विचार नहीं करती है और कम से कम 2/3 सदस्य इसे अनुमोदित नहीं कर देते हैं।
    - प्रधानमंत्री के विरुद्ध की जाने वाली जांच (यदि संचालित की गई हो) का संचालन बंद कमरे में किया जाएगा और यदि लोकपाल इस निष्कर्ष पर पहुंचता है कि शिकायत को निरस्त किया जाना चाहिए, तो जांच से संबंधित रिकॉर्ड को प्रकाशित नहीं किया जाएगा अथवा किसी को भी उपलब्ध नहीं कराया जाएगा।
- लोकपाल अध्यक्ष से संबंधित **वेतन, भत्ते और सेवा शर्तें** भारत के मुख्य न्यायाधीश के समान होंगी तथा अन्य सदस्यों हेतु ये सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश के समान होंगी।
- **जांच खंड और अभियोजन खंड:** इस अधिनियम के तहत लोकपाल, किसी शिकायत के प्राप्त होने पर प्रारंभिक जांच के लिए जांच खंड और लोक सेवकों के अभियोजन के उद्देश्य से अभियोजन खंड के गठन का आदेश करेगा।
- **CBI के संबंध में शक्ति:** लोकपाल द्वारा संदर्भित मामलों के लिए इसे CBI सहित किसी भी जांच एजेंसी पर अधीक्षण करने और उन्हें निदेश देने की शक्ति प्राप्त होगी। लोकपाल द्वारा प्रेषित मामलों की जांच करने वाले CBI के अधिकारियों का स्थानांतरण लोकपाल की सहमति से ही किया जाएगा।

VISION IAS

- **जाँच एवं अन्वेषण की समय-सीमा:** इस अधिनियम के अंतर्गत, **जाँच पूरी करने के लिए 60 दिनों की समय-सीमा और CBI द्वारा जाँच पूरी करने के लिए 6 माह का समय निर्धारित है।** 6 माह की इस अवधि को लोकपाल द्वारा CBI के एक लिखित अनुरोध पर ही बढ़ाया जा सकता है।
- **संपत्ति की जब्ती:** अधिनियम में अभियोजन के लंबित होने पर भी लोक सेवकों द्वारा भ्रष्ट साधनों के माध्यम से अर्जित संपत्ति की कुर्की और जब्ती के प्रावधान शामिल हैं।
- लोकपाल के प्रशासनिक व्यय, जिनके अंतर्गत **लोकपाल के अध्यक्ष, सदस्य या सचिव या लोकपाल के अन्य अधिकारियों या कर्मचारियों को देय सभी वेतन, भत्ते और पेंशन** शामिल हैं, भारत की संचित निधि पर भारित होंगे और लोकपाल द्वारा लिया गया कोई शुल्क या अन्य धनराशियां उस निधि का ही भाग होंगी।
- **लोकपाल के अध्यक्ष और सदस्यों को हटाना या निलंबन:** अध्यक्ष या किसी भी सदस्य को कदाचार के आधार पर सर्वोच्च न्यायालय की रिपोर्ट के बाद राष्ट्रपति के आदेश से पदमुक्त किया जाएगा। इससे संबंधित याचिका को कम से कम 100 संसद सदस्यों द्वारा हस्ताक्षरित होना चाहिए।
- लोकपाल द्वारा निर्दिष्ट मामलों की सुनवाई और निर्णय के लिए **विशेष न्यायालय** की स्थापना की जाएगी।

अधिनियम की सकारात्मक विशेषताएं

- **इसकी अधिकारिता काफी विस्तृत है। देश के प्रधानमंत्री को भी इसके अधिकारिता के अंतर्गत रखा गया है।**
- **यह नागरिकों को लोक अधिकारियों** द्वारा किए गए भ्रष्टाचार के विरुद्ध लोकपाल में शिकायत करने का **अधिकार प्रदान करता है।** इस प्रकार लोकपाल नागरिकों के प्रति अधिकारियों को जवाबदेह बनाए रखने का एक शक्तिशाली साधन है।
- यह देश के भीतर और देश के बाहर दोनों स्थानों पर स्थित लोक सेवकों पर लागू है। यह इंगित करता है कि इस अधिनियम का संचालन **राज्यक्षेत्रातीत (extraterritorial)** है।
- प्रत्येक चरण में **विशेष न्यायालय** और **स्पष्ट समय-सीमा** यह सुनिश्चित करती है कि जांच समयबद्ध तरीके से पूर्ण हो।
- **मिथ्या और तुच्छ या तंग करने वाली शिकायत दर्ज करने के लिए अभियोजन और दंड के प्रावधान यह सुनिश्चित करेंगे** कि लोकपाल का राजनीतिक लाभ हेतु या विद्वेष की भावना से दुरुपयोग नहीं किया जा सकेगा।
- लोकपाल के निर्देशन में मुकदमा चलाने के दौरान, लोकपाल भारत में **CBI, CVC जैसी एजेंसियों** को निर्देश जारी कर सकता है। यह सरकारी हस्तक्षेप से स्वतंत्र कार्यप्रणाली को सुनिश्चित करता है।

अधिनियम से संबंधित मुद्दे

- **सरकारी अनुमोदन की आवश्यकता:** इस अधिनियम के अनुसार सरकारी अधिकारियों के मामलों की जांच एवं अन्वेषण हेतु लोकपाल को सरकार की पूर्व अनुमति की आवश्यकता होती है।
- **समय-सीमा संबंधी बाध्यता:** अधिनियम में परिकल्पना की गई है कि जिस तिथि को अपराध हुआ है, **उसके सात वर्ष पश्चात् की गई किसी भी शिकायत की जांच लोकपाल द्वारा नहीं की जाएगी।** यह प्रावधान विशेष रूप से समय-समय पर उजागर किए जाने वाले कुछ बड़े और जटिल घोटालों के संबंध में इसकी भूमिका को सीमित करता है।
- **लोकपाल को कोई स्वतः संज्ञान की शक्ति प्राप्त नहीं है:** लोकपाल को भ्रष्टाचार और कदाचार के मामलों पर स्वत: संज्ञान के आधार पर कार्यवाही करने का अधिकार नहीं है।
- **लोकायुक्त का गठन:** यह अधिनियम इस अधिनियम के लागू होने की तिथि से एक वर्ष की अवधि के भीतर प्रत्येक राज्य में लोकायुक्त की स्थापना को अनिवार्य बनाता है। हालांकि, विभिन्न राज्यों द्वारा इस संबंध में अब तक कोई कार्रवाई नहीं की गई है।
- **राज्यों में लोकायुक्तों की शक्ति और अधिकारिता:** राज्य विधानसभाएं लोकायुक्त की शक्तियां और अधिकारिता निर्धारित करने हेतु स्वतंत्र हैं। अत: इसके द्वारा शक्तिहीन लोकायुक्त की स्थापना की जा सकती है।

आगे की राह

- लोकपाल को राजनीतिक हस्तक्षेप से सही अर्थों में स्वतंत्र बनाने हेतु **संवैधानिक दर्जा** प्रदान किया जा सकता है।
- भविष्य में **विपक्ष के नेता** के मुद्दे का समाधान करने हेतु, सबसे बड़े विपक्षी दल के नेता को इस उद्देश्य के लिए विपक्ष के नेता के रूप में मान्यता प्रदान करने हेतु एक संशोधन प्रस्तावित किया जा सकता है, जैसा कि CBI निदेशक और केंद्रीय सतर्कता आयुक्त की नियुक्तियों के संबंध में प्रावधान है।
- लोकपाल संस्था को दिन-प्रतिदिन आने वाली प्रशासनिक अक्षमता, भ्रष्टाचार आदि से संबंधित शिकायतों से बचाने हेतु **कठोर दिशा-निर्देशों और मानदंडों को निर्धारित करने की** आवश्यकता है।
- **व्हिसलब्लोअर के संरक्षण के प्रावधान** को अधिनियम में शामिल किया जाना चाहिए जिसकी मांग जन लोकपाल विधेयक में की गई थी।

VISION IAS

4.3. केन्द्रीय अन्वेषण ब्यूरो

(Central Bureau of Investigation: CBI)

सुर्खियों में क्यों?

आंध्र प्रदेश और पश्चिम बंगाल ने केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो (CBI) को दी गई **"सामान्य सहमति"** को वापस ले लिया है। यह कदम इन दोनों राज्यों में एजेंसी द्वारा पूर्व अनुमति के बिना की जाने वाली कार्यवाही की शक्ति को प्रभावी रूप से कम करेगा।

अन्य संबंधित तथ्य

- CBI {जिसे दिल्ली विशेष पुलिस स्थापना (Delhi Special Police Establishment: DSPE) अधिनियम,1946 के तहत स्थापित किया गया था} को अब जांच के लिए प्रत्येक मामले के लिए हर बार **राज्य सरकार से एक अलग अनुमति प्राप्त करनी होगी।**
- यह पहली बार नहीं है। विगत कुछ वर्षों में विभिन्न राज्यों ने कुछ समय के लिए सामान्य सहमति वापस लेने सम्बन्धी कदम उठाये हैं।

सामान्य सहमति (General Consent)

- चूंकि यह निर्दिष्ट है कि CBI के अधिकार क्षेत्र में केवल केंद्र सरकार के विभागों और कर्मचारियों से संबंधित मामले आते हैं, अतः यह केवल राज्य सरकार की सहमति के पश्चात ही ऐसे मामलों की जाँच कर सकती है जो उस राज्य के कर्मचारियों से संबद्ध हों या उस राज्य में हिंसक अपराधों से जुड़े हों। इस प्रकार **हर बार अनुमति लेने से बचने के लिए** मामला-विशिष्ट (case-specific) सहमति के बजाय यह सामान्य सहमति प्राप्त कर लेती है।
- सामान्य सहमति आम तौर पर छह महीने से लेकर एक वर्ष तक की अवधि के लिए दी जाती है।

- **CBI अब क्या कर सकती है?**
  - CBI अभी भी उन पंजीकृत **पुराने मामलों** के संदर्भ में जांच करने की शक्ति रखती है जो तब पंजीकृत हुए थे जब उसे सामान्य सहमति की शक्ति प्राप्त थी। (1994 के **काजी लेन्डुप दोर्जी वाद** में उच्चतम न्यायालय द्वारा इस प्रकार का निर्णय दिया गया था।)
  - सहमति की वापसी CBI को केवल आंध्र प्रदेश और बंगाल के क्षेत्राधिकार में अपराधों को पंजीकृत करने से रोकेगी। इस प्रकार **नए मामलों** के संदर्भ में CBI अभी भी दिल्ली में मामलों को दर्ज कर सकती है और दोनों राज्यों के भीतर लोगों की जांच कर सकती है।
  - इसके अतिरिक्त, देश में कहीं और पंजीकृत मामलों के सन्दर्भ में यदि संलिप्त व्यक्ति आंध्र प्रदेश और पश्चिम बंगाल में रह रहा है तो CBI का अधिकार क्षेत्र इन राज्यों तक विस्तारित हो सकता है।
  - साथ ही यदि उच्चतम न्यायालय या उच्च न्यायालय द्वारा किसी विशेष जांच को CBI को सौंपा जाए तो DSPE अधिनियम के तहत किसी भी सहमति की आवश्यकता नहीं होगी।

केंद्रीय अन्वेषण ब्यूरो

- यह भ्रष्टाचार और प्रमुख आपराधिक जांच से संबंधित मामलों के लिए केंद्र सरकार की मुख्य जांच एजेंसी है।
- यह एक सांविधिक निकाय **नहीं** है।
- लोकपाल अधिनियम 2013 द्वारा यह निर्धारित किया गया कि CBI के निदेशक को एक समिति की अनुशंसा पर नियुक्त किया जाएगा। इस समिति के सदस्यों में **प्रधानमंत्री, लोकसभा में विपक्ष के नेता और भारत के मुख्य न्यायाधीश या उनके द्वारा नामित उच्चतम न्यायालय के एक न्यायाधीश** सम्मिलित होंगे।
- केंद्र सरकार केवल संबंधित राज्य सरकार की **सहमति से ही** राज्य के किसी अपराध की जांच करने के लिए CBI को अधिकृत कर सकती है। हालांकि उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालय **राज्य की सहमति के बिना** भी देश में कहीं भी ऐसे अपराध की जांच करने के लिए CBI को आदेश दे सकते हैं।

VISION IAS

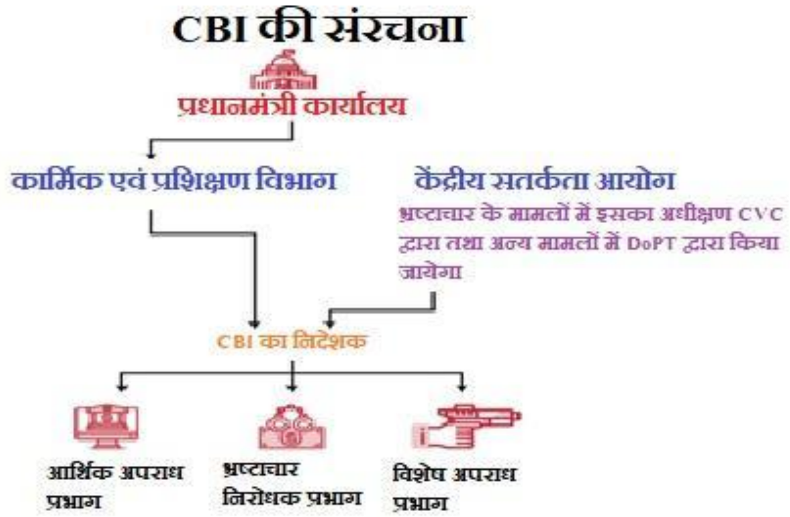

CBI की कार्यप्रणाली से संबंधित अन्य मुद्दे

समस्याएं	उपाय
विधायी कमियां • इसके कार्य केवल सरकारी संकल्प पर आधारित होते हैं। ऐसा संकल्प अपनी शक्तियों को DPSE अधिनियम 1946 से ग्रहण करता है। • कुछ मामलों में जांच के लिए राज्य सरकारों की अनुमति पर निर्भरता भी एक चिंता का विषय है।	**समिति के सुझाव** • **द्वितीय प्रशासनिक सुधार** आयोग (2007) ने यह भी सुझाव दिया कि "CBI" के कामकाज को नियंत्रित करने हेतु एक नयी विधि पारित की जानी चाहिए"। • **संसदीय स्थायी समितियों** (2007 और 2008) ने अनुशंसा की कि "विधिक अधिदेश, अवसंरचना और संसाधनों के संदर्भ में CBI को सुदृढ़ बनाना समय की मांग है"। • CBI के पास **आवश्यक विधिक अधिदेश और अखिल भारतीय क्षेत्राधिकार** की शक्ति होनी चाहिए और इसे किसी भी राज्य में कार्यरत अखिल भारतीय सेवाओं के अधिकारियों के विरुद्ध भ्रष्टाचार के मामलों की जांच करने की शक्ति भी प्राप्त होनी चाहिए।
प्रशासनिक बाधाएं: • CBI का अपना स्वयं का कैडर नहीं है और इसका काम-काज प्रतिनियुक्त अधिकारियों द्वारा देखा जाता है। इस प्रकार इन अधिकारियों की तत्कालीन सरकार द्वारा प्रभावित होने की आशंका बनी रहती है। • इसके अतिरिक्त, पर्याप्त कार्मिकों की कमी भी प्रायः मामलों का समाधान करने में विलम्ब करती है। • आंतरिक विवाद, जैसे हाल ही में निदेशक और विशेष निदेशक के मध्य विवाद तथा उनके द्वारा एक दूसरे के विरुद्ध लगाए गए सार्वजनिक आरोप एक गंभीर चिंता का विषय हैं।	**श्रमबल को सशक्त बनाना** • CBI को अधिकारियों का **अपना स्वयं का कैडर** विकसित करना चाहिए। इससे इसके अधिकारी प्रतिनियुक्तियों और अचानक स्थानांतरण जैसे मुद्दों से बाधित नहीं होंगे। • CBI द्वारा प्रभावी और समयबद्ध जाँच के लिए कार्मिकों की संख्या को बढ़ाया जाना चाहिए। • एक वृहत् प्रतिभा पूल को आकर्षित करने के लिए CBI में सीधी भर्ती के लिए सेवा की शर्तों में सुधार किया जा सकता है। संघ लोक सेवा आयोग के माध्यम से सीधी भर्ती की प्रक्रिया (जिसे 2000 में रोक दिया गया था) को पुनः शुरू किया जा सकता है।
• **अतिव्यापी क्षेत्राधिकार:** कुछ मामलों में केंद्रीय सतर्कता आयोग (CVC), CBI और लोकपाल के क्षेत्राधिकार अतिव्यापी होते हैं जिससे समस्याएं उत्पन्न होती हैं। भ्रष्टाचार के मामलों में अभियोजन की दर केवल 3% है।	• CBI और CVC के **भ्रष्टाचार विरोधी प्रभागों** को **लोकपाल के दायरे में** लाया जा सकता है। इससे दोनों संगठनों को जांच और अभियोजन पक्ष के लिए प्रयुक्त किया जा सकेगा। इस प्रकार की एक एकीकृत व्यवस्था एक अधिक सशक्त निकाय का सृजन करेगी।

• **राजनीतिक दबाव:** CBI की प्रायः सरकार के आदेश के अनुसार कार्य करने के लिए आलोचना की जाती है। 2013 में, उच्चतम न्यायालय ने इसे "अपने मालिक की आवाज में बोलने वाला पिंजड़े में बंद तोता" कहा था।	• इसको CAG के पद की तरह केवल संसद के प्रति उत्तरदायी बनाकर **अधिक स्वायत्तता प्रदान** की जानी चाहिए।
• **पारदर्शिता का अभाव**: CBI को सूचना का अधिकार अधिनियम (RTI)-2005 के प्रावधानों से छूट दी गई है।	• एक सूचना आयुक्त के द्वारा यह सुझाव दिया गया है कि NIA, CBI, IB और अर्द्धसैनिक बलों जैसी एजेंसियां RTI के दायरे में आनी चाहिए, क्योंकि इस अधिनियम में संवेदनशील सूचनाओं को पब्लिक डोमेन से बाहर रखने हेतु पर्याप्त सुरक्षा उपाय विद्यमान हैं।

4.4. RBI की स्वतंत्रता बनाम जवाबदेहिता

(Independence vs Accountability of RBI)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में भारतीय रिज़र्व बैंक (RBI) के डिप्टी गवर्नर विरल आचार्य ने **केंद्रीय बैंक की स्वतंत्रता को बाधित करने** के विरुद्ध सरकार को चेतावनी दी है।

पृष्ठभूमि

- एक के बाद एक गवर्नरों द्वारा इस मुद्दे को उठाए जाने के बाद RBI अधिक स्वायत्तता प्राप्त करने के पक्ष में था।
- सरकार **RBI अधिनियम, 1934 की अब तक कभी भी प्रयोग न की गयी धारा 7** का इस्तेमाल कर सकती है। इस धारा के अंतर्गत RBI को सरकार द्वारा यह आदेश जारी किया जाएगा कि वह सार्वजनिक हित के मामलों में सरकार के निर्देशों को ध्यान में रखकर निर्णय ले, जो **RBI की स्वायत्तता को प्रभावित कर सकता है।**

RBI की स्वतंत्रता क्यों महत्वपूर्ण है?

- **नीतियों का कार्यान्वयन:** RBI के अनेक नीतिगत उद्देश्य होते हैं जो सार्वजनिक हितों को साधते हैं। इनमें मूल्य स्थिरता, संवृद्धि, विकास से लेकर वित्तीय स्थिरता जैसे उद्देश्य निहित होते हैं जिनके राजनीतिक निहितार्थ भी होते हैं। केंद्रीय बैंक को अपने उद्देश्यों को पूरा करने के लिए एक स्पष्ट अधिदेश तथा साथ ही इसके लिए आवश्यक परिचालन स्वतंत्रता भी प्राप्त होनी चाहिए।
- **राजनीतिक हस्तक्षेप से मुक्त:** RBI की कार्यात्मक स्वायत्तता के लिए यह महत्वपूर्ण है। साख अनुज्ञा संबंधी नीतियों (credit authorization policies) जैसी निर्णायक भूमिका को देखते हुए यह अत्यावश्यक हो जाता है।
- **विनियमन:** यह इसलिए महत्वपूर्ण हो जाता है क्योंकि सार्वजनिक क्षेत्रक के बैंकों (PSBs) के विरुद्ध पूर्ण कार्रवाई करने में RBI का सांविधिक दायरा सीमित है। जैसा कि PNB धोखाधड़ी के मामले में देखने को मिला, जिसने RBI की विश्वसनीयता को कम किया है।
- **एक अलग संस्थान:** केंद्रीय बैंक को सरकार से एक पृथक संस्थान के रूप में स्थापित किया गया है। यह सरकार की कार्यपालिका संबंधी प्रकार्य का कोई एक विभाग नहीं है। इसकी शक्तियां एक प्रासंगिक कानून के माध्यम से पृथक तौर पर प्रतिष्ठापित की गयी हैं।
- **सतत आर्थिक वृद्धि सुनिश्चित करना:** केंद्रीय बैंक की स्वायत्तता मूल्य और वित्तीय क्षेत्र की स्थिरता को बढ़ावा देती है जो सतत आर्थिक वृद्धि के लिए सहायक है।

RBI की जवाबदेही महत्वपूर्ण क्यों है?

- **लोकतंत्र:** लोकतंत्र में संप्रभुता जनता में निहित होती है। इसमें केंद्रीय बैंक नहीं अपितु सरकार जनता के प्रति उत्तरदायी होती है। उदाहरण के लिए, यदि रिज़र्व बैंक मुद्रास्फीति को कम कर पाने में विफल रहता है तो सरकार को इसकी कीमत चुकानी पड़ती है न कि RBI को।
- **विफलता की स्थिति में उत्तरदायित्व:** स्वायत्तता का दूसरा पक्ष जबाबदेहिता है, और यदि RBI अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में विफल रहता है तो उसे इसके लिए उत्तरदायी होना चाहिए। अर्थव्यवस्था के विभिन्न क्षेत्रों में RBI की गतिविधियों में हुआ विस्तार लाखों लोगों के जीवन को प्रभावित करता है। इसलिए किसी भी प्रकार की विफलता की स्थिति में RBI द्वारा उसका औचित्य सिद्ध किया जाना चाहिए।

VISION IAS

- **अधिक पारदर्शिता:** केंद्रीय बैंक भी गलतियां कर सकता है और सामान्यत: संसदीय जांच एवं पारदर्शिता मानदंडों के माध्यम से सार्वजनिक रूप से इसे जवाबदेह ठहराया जाता है। यह स्पष्ट रूप से परिभाषित भूमिकाओं के साथ व्यवस्था में और अधिक पारदर्शिता को सुनिश्चित करता है।
- **सरकार के माध्यम से जवाबदेह:** RBI स्वायत्त तो है किन्तु केवल RBI अधिनियम के ढांचे के भीतर। अत: केंद्रीय बैंक पूर्ण स्वायत्तता का दावा नहीं कर सकता है। यह सरकार द्वारा निर्धारित सीमाओं के भीतर स्वायत्त है तथा इसकी सीमाएं विषय और संदर्भ पर निर्भर करती हैं।

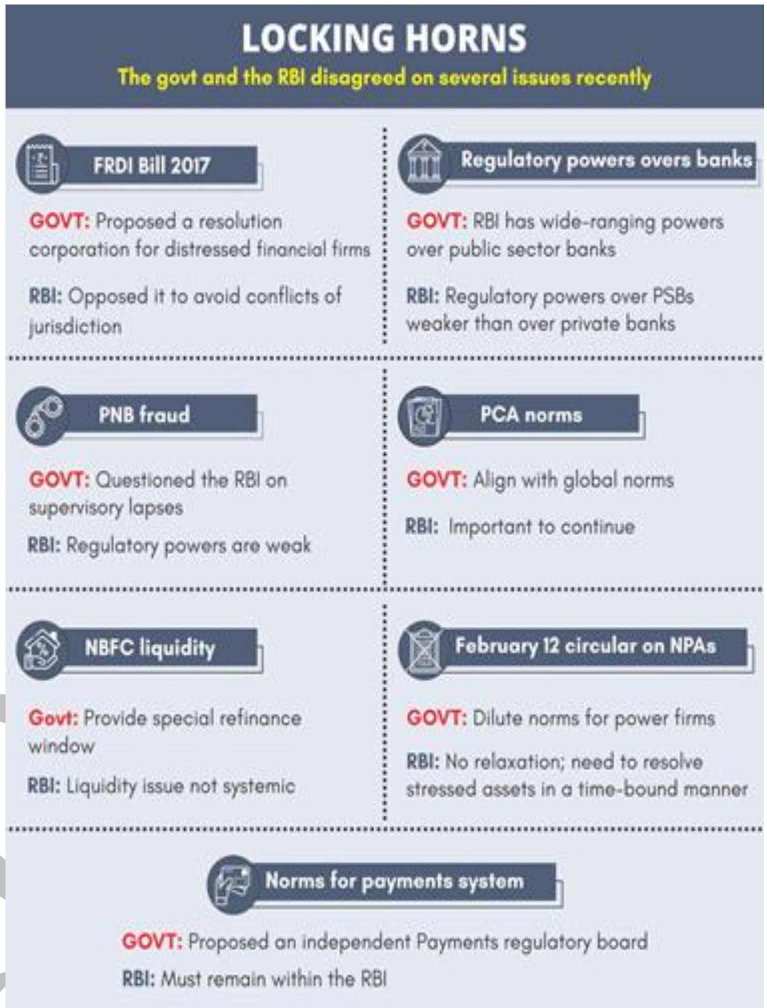

आगे की राह

- **स्वायत्तता और जवाबदेही दोनों के संबंध में उचित संतुलन:** RBI की संस्थागत स्वायत्तता का सम्मान किया जाना चाहिए और सभी संस्थानों को समान लक्ष्य प्राप्त करने के लिए मिलकर काम करना चाहिए।
  - हमारी लोकतांत्रिक संरचना के भीतर एक ऐसा मंच होना चाहिए जहां RBI अपने मत के संबंध में स्पष्टीकरण देने और बचाव करने हेतु बाध्य हो।
  - स्वायत्तता और जवाबदेहिता के मध्य संतुलन होना चाहिए। उदाहरण के लिए, अब हमारे पास मुद्रास्फीति लक्ष्यीकरण का एक मॉडल विद्यमान है और अब केंद्रीय बैंक मुद्रास्फीति लक्ष्यीकरण के लिए उत्तरदायी है। इसी प्रकार के कुछ अन्य वांछनीय उद्देश्यों को निर्धारित कर वित्तीय क्षेत्र के विनियमन हेतु ऐसी स्वायत्तता और जवाबदेहिता सुनिश्चित की जा सकती है।
- **वित्तीय क्षेत्रक विधायी सुधार आयोग (Financial Sector Legislative Reforms Commission: FSLRC) की अनुसंशाओं का क्रियान्वयन:** FSLRC ने गवर्नेंस का आधुनिकीकरण करने और नियामकों को अधिक स्वतंत्र एवं साथ ही अधिक जवाबदेह बनाने की मांग की है।
  - उदाहरण के लिए, इसने सरकार की निर्देश देने की शक्तियों का प्रस्ताव रखा, जबकि विनियामकों के बोर्डों को अपने एजेंडे और सार्वजनिक बैठकों के कार्य विवरणों को जनता के सामने रखकर अधिक जवाबदेह और पारदर्शी बनाने का प्रस्ताव रखा था।
- **कार्यक्षेत्र को पृथक करना:** चूंकि सरकार और RBI के लक्ष्यों में समानता के कारण दोनों को एक-दूसरे के परिचालन क्षेत्रों का सम्मान करना पड़ता है। जबकि पर्याप्त साख की उपलब्धता सुनिश्चित किये बिना आर्थिक संवृद्धि असंभव है, अत: RBI को यह सुनिश्चित करना होगा कि इसकी नीतियां क्रेडिट और निवेश की वृद्धि में बाधक न बनें।
- **विनियामक शक्तियों की समीक्षा:** यदि नियामक शक्तियों की समीक्षा की आवश्यकता है तो संसद को उसके अनुसार ही कानून बनाना चाहिए। RBI के साथ-साथ सरकार की नियामक शक्तियों पर भी स्पष्टता होनी चाहिए।

5. भारत में चुनाव (Elections in India)

5.1. चुनाव सुधार

(Electoral Reforms)

एक स्वतंत्र, न्यायसंगत और निष्पक्ष चुनावी प्रक्रिया के साथ-साथ अधिकाधिक नागरिक सहभागिता किसी लोकतंत्र के मूल्यों की सुरक्षा के लिए मूलभूत तत्व है। दुर्भाग्य से, भारतीय चुनावी प्रणाली कुछ ऐसे मुद्दों- जैसे काले धन की भूमिका, भारत के चुनाव आयोग (ECI) की शक्ति से जुड़े मुद्दे, किसी पार्टी के विरुद्ध वोट देने पर मतदाताओं का उत्पीड़न आदि से ग्रसित है, जिन्होंने चुनाव प्रणाली में देश के लोगों के विश्वास को कम किया है। इस प्रकार चुनावी प्रक्रिया की निष्पक्षता सुनिश्चित करने हेतु अनेक सुधार किए गए हैं या प्रस्तावित किए गए हैं:

- **'उपर्युक्त में से कोई नहीं' (NoTA) का प्रावधान: पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज बनाम भारत संघ वाद, 2013** में उच्चतम न्यायालय ने NOTA की शुरुआत का मार्ग प्रशस्त किया।
- **राजनीति का निरपराधीकरण-** विभिन्न न्यायिक घोषणाओं के तहत, आपराधिक रिकॉर्ड की घोषणा, चुनाव लड़ने से अयोग्य घोषित करने सम्बन्धी उपबंध आदि सहित विभिन्न उपाय सुनिश्चित किए गए हैं।
- **चुनावी बॉन्ड जारी किया जाना-** चुनावी वित्तपोषण में पारदर्शिता लाने और चुनावों में काले धन के प्रयोग में कमी लाने हेतु।
- **पेड न्यूज की चुनौती से निपटने के लिए-** ECI ने पेड न्यूज के मामलों की जांच, पहचान और रिपोर्ट करने के लिए अनेक कदम उठाए हैं।
- **टोटलाइजर मशीनों का प्रस्ताव:** इनके माध्यम से किसी प्रत्याशी को मतदान केंद्र के अनुसार प्राप्त वोटों का खुलासा किए बिना EVMs के समूह के समेकित परिणाम को प्राप्त किया जा सकता है। इसके माध्यम से चुनावों से पूर्व एवं पश्चात् मतदाताओं के उत्पीड़न और उन पर किए जाने वाले अत्याचार को रोका जा सकता है।
- **वोटर वेरिफायबल पेपर ऑडिट ट्रेल (VVPAT) मशीनों का प्रयोग:** इनके माध्यम से एक पेपर ऑडिट द्वारा EVM परिणामों को क्रॉस-चेक करके स्वदेशी रूप से निर्मित मशीनों के प्रति जवाबदेही के एक अन्य मानदंड को पूर्ण किया गया है।
- **उच्चतम न्यायालय द्वारा चुनाव लड़ने वाले उम्मीदवारों के लिए अतिरिक्त मानदंडों का निर्धारण:** लोक प्रहरी मामले में SC ने केंद्र को नियमों के साथ-साथ उम्मीदवारों द्वारा नामांकन पत्र के साथ दाखिल किए जाने वाले प्रकटीकरण फॉर्म में संशोधन कर उसमें उम्मीदवार, उसके जीवनसाथी और आश्रितों की आय के स्रोतों को भी शामिल करने का निर्देश दिया है। संपत्ति और उनके स्रोतों का गैर-प्रकटीकरण जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 123 के तहत एक "भ्रष्ट आचरण" के रूप में माना जाएगा।
- **अन्य प्रमुख सुधार:** इनमें चुनाव चक्र के पुनर्गठन और एक 'हाइब्रिड इलेक्शन सिस्टम' स्थापित करने संबंधी प्रस्ताव शामिल हैं।

5.1.1. निर्वाचन आयोग की भूमिका

(Role of Election Commission)

सुर्ख़ियों में क्यों?

17वीं लोकसभा हेतु संपन्न हालिया आम चुनाव में, भारत निर्वाचन आयोग (ECI) की भूमिका इसके विभिन्न कार्यों के कारण विवाद का विषय बनी रही।

पृष्ठभूमि

- हाल ही में, सेवानिवृत्त सिविल सेवकों के एक समूह **कॉन्स्टिट्यूशनल कंडक्ट ग्रुप** द्वारा राष्ट्रपति को एक पत्र लिखा गया था। इस पत्र में **निर्वाचन आयोग की विश्वसनीयता** और सत्तारूढ़ दल द्वारा जिस सीमा तक **आदर्श आचार संहिता (MCC)** का अनुपालन किया जा रहा है, उस पर संदेह व्यक्त किया गया था।
- MCC के उल्लंघन के विभिन्न मामलों, जैसे- राजनीतिक रैलियों में भारतीय सेना के नाम का उपयोग (यद्यपि ECI द्वारा इसके विरुद्ध चेतावनी दी गई थी), राजस्थान के राज्यपाल द्वारा MCC का उल्लंघन आदि के प्रति ECI की अनुक्रिया को आलोचनाओं का सामना करना पड़ा।

VISION IAS

निर्वाचन आयोग के समक्ष व्याप्त मुद्दे और चुनौतियां

- **पक्षपातपूर्ण भूमिका का आरोप:** विपक्ष द्वारा यह आरोप लगाया गया है कि ECI ने प्रधानमंत्री द्वारा किए गए आदर्श आचार संहिता के उल्लंघनों को क्लीन चिट देकर सत्तारूढ़ सरकार के पक्ष में पक्षपातपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है।
- **क्षमता का अभाव:** अनुच्छेद 324 के अंतर्गत निर्वाचन आयोग को पूर्ण (निरपेक्ष) शक्तियां प्राप्त हैं, परन्तु अभी भी यह संसद द्वारा निर्मित विधानों के अनुसार कार्य करता है और इसके द्वारा इन विधानों से परे जाकर कार्य नहीं किया जा सकता है। उदाहरणार्थ जनप्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 29A के तहत राजनीतिक दलों हेतु पंजीकरण प्राधिकारी होने के बावजूद, इसे गंभीरतम उल्लंघनों के आधार पर भी उनके पंजीकरण को रद्द करने की शक्ति प्राप्त नहीं है।
- **प्राधिकार के अग्रसक्रिय उपयोग का अभाव:** निर्वाचन आयोग ने उच्चतम न्यायालय में यह कहा कि जाति या धर्म के नाम पर वोट मांगने वाले राजनेताओं को अनुशासित करने की इसकी शक्तियाँ **"अत्यंत सीमित"** हैं।
- **राजनीतिक दलों पर अप्रभावी नियंत्रण:** ECI राजनीतिक दलों को विनियमित करने के लिए पर्याप्त रूप से सशक्त नहीं है। आंतरिक-दलीय लोकतंत्र को लागू करने और दलों के वित्त के विनियमन में निर्वाचन आयोग की कोई भूमिका नहीं है।

निहितार्थ

- **लोकतांत्रिक सिद्धांतों के अनुपालन में विफलता:** स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव तथा सामान्य आदर्श आचार संहिता का अनुपालन जैसे लोकतांत्रिक सिद्धांतों के अनुसरण में विफलता।
- **संस्थागत सत्यनिष्ठा का क्षरण:** इसके कारण आयोग की विश्वसनीयता और प्राधिकार का ह्रास होता है।
- **चुनावों में जन-सामान्य के विश्वास में कमी:** यदि लोकतंत्र की संस्थाओं के प्रति लोगों के विश्वास में कमी आती है तो चुनावी निर्णय के माध्यम से प्राप्त सहमति की विश्वसनीयता ही संदेह में पड़ जाएगी।
- **राजनीतिक संवाद का ह्रास:** राजनेताओं द्वारा शिष्टाचार एवं शालीनता की सीमाओं की उपेक्षा कर दी जाती है और सत्ता का दुरुपयोग करना एक मानदंड बन जाता है। साथ ही इसके परिणामस्वरूप राष्ट्रीय एवं स्थानीय महत्व के मुद्दे गौण हो जाते हैं तथा प्रत्याशियों के मध्य व्यक्तिगत शत्रुता को वरीयता प्राप्त हो जाती है।
- **निर्वाचन आयोग का राजनीतिकरण:** चूंकि मुख्य निर्वाचन आयुक्त (CEC) को उसकी पदावधि की समाप्ति के पश्चात् अन्य पदों पर नियुक्त किया जा सकता है, इसलिए आलोचकों द्वारा यह आरोप लगाया जाता है कि CEC की स्वतंत्रता से समझौता होने का खतरा बना रहता है।

भारत निर्वाचन आयोग (ECI)

- भारत के संविधान का **अनुच्छेद 324** एक स्वतंत्र निर्वाचन आयोग का प्रावधान करता है। इसे संविधान के अनुसरण में 25 जनवरी 1950 को स्थापित किया गया था।
- इसमें संसद और राज्य विधानमंडलों के साथ-साथ राष्ट्रपति एवं उप-राष्ट्रपति के पद के निर्वाचनों के संचालन हेतु अधीक्षण, निदेशन व नियंत्रण की शक्तियाँ निहित हैं।
- मूल रूप से आयोग में केवल एक मुख्य निर्वाचन आयुक्त के पद का प्रावधान किया गया था। वर्तमान में इसमें एक मुख्य निर्वाचन आयुक्त और दो अन्य निर्वाचन आयुक्त शामिल हैं।
- संसद को निर्वाचन से संबंधित सभी मामलों के संबंध में प्रावधान करने का अधिकार प्रदान किया गया है। तथापि, ECI भी स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने हेतु अनुच्छेद 324 के तहत आवश्यक उपाय कर सकता है।

ECI की सफलताएँ

- **मतदाता शिक्षा और भागीदारी:** 2019 के चुनाव की मुख्य विशेषता यह रही कि इस आम चुनाव में भाग लेने वाले मतदाताओं की संख्या सर्वाधिक रही (67.11%), जो यह सिद्ध करती है कि निर्वाचन आयोग का मतदाता शिक्षा कार्यक्रम **SVEEP (सुव्यवस्थित मतदाता शिक्षा एवं निर्वाचक सहभागिता) प्रभावी** है।
- **मतदान की विश्वसनीयता:** मतगणना समाप्त होने के पश्चात् VVPAT पर्ची और EVM की गणना के मध्य असंगतता का एक भी मामला ज्ञात नहीं हुआ।
- **राजनेताओं के विरुद्ध कार्यवाही:** ECI द्वारा हालिया आम चुनावों में कुछ राजनेताओं के विरुद्ध सख्त और अभूतपूर्व कार्रवाई की गई। अनुच्छेद 324 के तहत प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग करते हुए निर्वाचन आयोग ने उन्हें तीन दिनों तक चुनाव प्रचार करने से प्रतिबंधित कर दिया था।
- **धन बल के विरुद्ध कार्यवाही:** ECI ने तमिलनाडु में आयकर छापे के दौरान अत्यधिक अघोषित नकदी के प्रकटीकरण के पश्चात् वेल्लोर संसदीय क्षेत्र का चुनाव रद्द कर दिया था।

VISION IAS

आगे की राह

- चुनाव लोकतंत्र का मूल आधार है। निर्वाचन आयोग की विश्वसनीयता इसे लोकतांत्रिक वैधता प्रदान करने में केंद्रीय भूमिका का निर्वहन करती है। इसलिए, चुनाव के संरक्षक ECI को स्वयं की स्वायत्तता की रक्षा हेतु तत्काल संस्थागत सुरक्षा उपायों की आवश्यकता है।
- **विधि आयोग ने अपनी 255वीं रिपोर्ट में निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्ति** के लिए प्रधानमंत्री, विपक्ष के नेता और भारत के मुख्य न्यायाधीश से मिलकर बने एक कॉलेजियम की अनुशंसा की है।
- **ECI को सुदृढ़ बनाने हेतु सुझाव:**
  - सभी **तीन निर्वाचन आयुक्तों को संवैधानिक संरक्षण** प्रदान किया जाना चाहिए; वर्तमान में केवल मुख्य निर्वाचन आयुक्त (CEC) को ही संवैधानिक संरक्षण प्राप्त है।
  - निर्वाचन आयुक्तों (ECs) में सुरक्षा की भावना उत्पन्न करने हेतु उस **प्रक्रिया को संस्थागत** बनाया जाना चाहिए जिसके तहत वरिष्ठतम EC की स्वतः CEC के रूप में पदोन्नति हो जाए तथा CEC के समान ही ECs को कार्यकारी हस्तक्षेप से मुक्त किया जाना चाहिए।
  - DoPT, विधि और न्याय मंत्रालय व गृह मंत्रालय पर **ECI की निर्भरता को कम** किया जाना चाहिए। ECI का स्वयं का एक स्वतंत्र सचिवालय होना चाहिए और आयोग के भर्ती संबंधी नियम भी ECI द्वारा स्वत: ही तैयार किए जाने चाहिए। अपने अधिकारियों का चयन एवं नियुक्ति भी ECI द्वारा ही की जानी चाहिए।
  - इसके व्यय UPSC जैसे अन्य **संवैधानिक निकायों के समान भारत की संचित निधि पर भारित** होने चाहिए।

5.1.2. उपर्युक्त में से कोई भी नहीं (NOTA)

(None of the above: NOTA)

सुर्ख़ियों में क्यों?

- महाराष्ट्र राज्य निर्वाचन आयोग (MSEC) ने हाल ही में स्थानीय निकायों के चुनावों हेतु एक आदेश जारी किया है जिसके अनुसार किसी सीट पर नोटा को सर्वाधिक मत प्राप्त होने की स्थिति में वहाँ पर पुनर्मतदान कराये जाएंगे।

NOTA वोटिंग पैटर्न: विश्लेषण क्या दर्शाते हैं?

- **आरक्षित सीटों पर NOTA का प्रयोग सबसे अधिक दर्ज:** 2019 के लोकसभा चुनावों में, ST के लिए आरक्षित सीटों पर 1.76% और SC सीटों पर 1.16% मतदाताओं ने NOTA का विकल्प चुना। जबकि सामान्य सीटों पर NOTA का विकल्प चुनने वालों का प्रतिशत 0.98% था। इसका कारण जाति-आधारित आरक्षण का विरोध हो सकता है।
- **वामपंथी उग्रवाद प्रभावित (Left Wing Extremism: LWE) क्षेत्रों में NOTA वोट-शेयर:** LWE क्षेत्रों में देश के अन्य हिस्सों की तुलना में औसतन उच्च NOTA वोट शेयर दर्ज किया गया। यह राज्य मशीनरी के खिलाफ विरोध प्रकट करने एवं आपत्ति दर्ज करने के साधन के रूप में NOTA के संभावित उपयोग की ओर इशारा करता है।
- **NOTA वोट शेयर पर राजनीतिक प्रतिस्पर्धा का प्रभाव:** जिन राज्यों में मतदाताओं के पास तीसरा विकल्प उपस्थित था, उनकी तुलना में वैसे राज्य जहाँ केवल दो प्रमुख दलों के मध्य प्रत्यक्ष द्वि-ध्रुवीय प्रतियोगिता देखने को मिली, वहाँ उच्च NOTA वोट-शेयर देखा गया।
- NOTA ने देश के उन 26 निर्वाचन क्षेत्रों में विजेता उम्मीदवार का फैसला करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई, जहां जीतने का अंतर NOTA के वोटों से कम था।

NOTA से संबंधित तथ्य

- 2013 के **पीपुल्स यूनियन फॉर सिविल लिबर्टीज बनाम यूनियन ऑफ़ इंडिया मामले** में उच्चतम न्यायालय द्वारा दिए गए निर्देश का अनुसरण करते हुए भारत में NOTA विकल्प को लागू किया गया था।
- NOTA विकल्प का उद्देश्य मतदाताओं को, मतदान के दौरान सभी उम्मीदवारों को अस्वीकार करने की अनुमति प्रदान करना है। उच्चतम न्यायालय द्वारा यह टिप्पणी की गई थी कि NOTA वास्तव में एक उपयुक्त उम्मीदवार को नामित करने के लिए राजनीतिक दलों को विवश करेगा।

VISION IAS

NOTA बनाम अस्वीकार करने का अधिकार (NOTA vs Right to Reject)

- हालांकि, भारत में नोटा के तहत **'अस्वीकार करने का अधिकार'** प्राप्त **नहीं** है। वर्तमान में, किसी उम्मीदवार को सर्वाधिक NOTA प्राप्त होने की स्थिति में भी निर्वाचन आयोग के पास पुनर्निर्वाचन कराए जाने के संबंध में कोई अधिकार प्राप्त नहीं हैं।
- सामान्यतः अधिकतम मत प्राप्त करने वाले उम्मीदवार को चुनाव में विजयी घोषित किया जाता है और इस पर NOTA को प्राप्त हुए मतों का कोई प्रभाव नहीं होता है।
- जबकि "अस्वीकार करने का अधिकार" प्रणाली में, यदि अधिकांश मतदाता "उपर्युक्त में से कोई नहीं (NOTA)" विकल्प का चुनाव करते हैं, तो किसी भी उम्मीदवार को विजेता घोषित नहीं किया जाता है तथा नए चुनाव कराने की मांग की जाती है।
- प्रत्याशियों द्वारा उनकी जमानत राशि वापस प्राप्त करने हेतु आवश्यक मतों (वैध मतों का 1/6 वां भाग) की गणना करते समय NOTA के पक्ष में डाले गए मतों की संख्या को शामिल नहीं किया जाता है।

पुनर्निर्वाचन का महत्व

- **अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता:** NOTA 'स्वतंत्रता के अधिकार' और 'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता' के मूल अधिकार से उत्पन्न होता है क्योंकि यह मतदाता को राजनीतिक दलों द्वारा चयनित प्रत्याशियों के संबंध में अपनी सहमति या असहमति प्रकट करने का एक विकल्प प्रदान करता है।
- **लोकतंत्र के संचालन में सहायक:** जनभागीदारी लोकतंत्र के महत्वपूर्ण स्तंभों में से एक है। NOTA का प्रयोग करते समय मतदाता स्वयं को निर्वाचन प्रक्रिया से पूर्णतया दूर न रखते हुए इसमें भाग ले रहे होते हैं। इस प्रकार NOTA वास्तव में लोकतंत्र में सहभागिता को प्रदर्शित करता है।
- **अंतःदलीय लोकतंत्र को बढ़ावा:** राजनीतिक दलों द्वारा उनके प्रत्याशियों का चयन किये जाने की प्रक्रिया में अपारदर्शिता विद्यमान है। इस प्रक्रिया में भाई-भतीजावाद, पक्षपात और धनबल प्रमुख निर्णायक शक्तियों के रूप में कार्य करते हैं। यह मतदाताओं को उनकी असहमति व्यक्त करने का अवसर प्रदान करता है और दलों को सत्यनिष्ठ प्रत्याशियों का चयन करने के लिए बाध्य कर सकता है।

राज्यसभा चुनाव में NOTA

- उच्चतम न्यायालय ने राज्यसभा चुनावों में NOTA विकल्प के प्रयोग को समाप्त कर दिया है।
- उच्चतम न्यायालय का यह मानना है कि NOTA का विकल्प केवल सार्वभौमिक वयस्क मताधिकार और प्रत्यक्ष चुनाव के लिए ही है।
- इसलिए, यह व्यवस्था आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली के अनुसार एकल संक्रमणीय मत के माध्यम से राज्यसभा के लिए आयोजित चुनावों के लिए नहीं है।
- NOTA वैसी चुनावी प्रक्रिया को नुकसान पहुँचा सकता है जहाँ खुले मतदान की अनुमति प्रदान की गयी है और पार्टी अनुशासन को महत्व प्राप्त है।
- NOTA वस्तुतः एक मत के मूल्य व प्रतिनिधित्व संबंधी अवधारणा को नष्ट कर देगा। पुनः, यह उस दल-बदल की अवधारणा को प्रोत्साहित करेगा जो अंततः भ्रष्टाचार को बढ़ावा देगा।

पुनः चुनाव कराने में विद्यमान चुनौतियां

- **वित्तीय दबाव:** पुनः चुनाव आयोजित करने में सरकार को बड़े पैमाने पर व्यय करना पड़ता है जो सार्वजनिक कोष पर अतिरिक्त दबाव डालता है।
- **लोकतंत्र में व्यवधान उत्पन्न करना:** यह चुनावों की बारम्बारता में वृद्धि करता है जिसके परिणामस्वरूप सामान्य जन जीवन में व्यवधान उत्पन्न होता है और आवश्यक सेवाएँ नकारात्मक रूप से प्रभावित होती हैं।
- **प्रशासनिक दबाव:** सुचारु, शांतिपूर्ण और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने के लिए भारतीय निर्वाचन आयोग को बड़ी संख्या में मतदान अधिकारियों और सशस्त्र बलों की सहायता लेने की आवश्यकता होती है।
- **गवर्नेंस संबंधी मुद्दे:** निर्वाचन आयोग द्वारा आचार संहिता लागू करने के कारण नए चुनावों का आयोजन विकास कार्यक्रमों और गवर्नेंस को प्रभावित करता है।

आगे की राह

- NOTA को अधिकाधिक शुचिता प्रदान करने और नए चुनाव कराने संबंधी आदेश देने के लिए, 'चुनाव आचार संहिता नियमावली' के नियम 64 में संशोधन करना होगा। उल्लेखनीय है कि विधि मंत्रालय यह संशोधन कर सकता है। इसके लिए संसद की मंजूरी की आवश्यकता नहीं होगी।

VISION IAS

- हरियाणा और मध्यप्रदेश में राज्य निर्वाचन आयोग द्वारा स्थानीय निकाय के चुनावों में NOTA से कम वोट प्राप्त करने वाले उम्मीदवारों को अयोग्य घोषित करना आरंभ कर दिया गया है। यह सही दिशा में उठाया गया एक अग्रणी कदम है।

5.2. स्वतंत्र एवं निष्पक्ष चुनाव संबंधी मुद्दे

(Issues Related to Free and Fair Elections)

5.2.1. आदर्श आचार संहिता

(Model Code of Conduct)

सुर्खियों में क्यों?

17वीं लोकसभा हेतु आयोजित भारतीय आम चुनाव के दौरान आदर्श आचार संहिता के उल्लंघन की अनेक घटनाएं घटित हुई हैं।

आदर्श आचार संहिता (MCC) के बारे में

- MCC वस्तुतः चुनाव के दौरान **राजनीतिक दलों और उम्मीदवारों के आचरण को नियंत्रित** करने के लिए निर्वाचन आयोग द्वारा निर्धारित दिशा-निर्देशों की एक व्यवस्था है। यह संविधान के **अनुच्छेद 324** के अनुरूप है, जो भारत निर्वाचन आयोग (ECI) को संसद और राज्य विधानसभाओं के चुनावों के निरीक्षण की शक्ति प्रदान करता है।
- **चुनाव के कार्यक्रम की घोषणा होने के साथ ही MCC लागू हो जाती है** तथा परिणाम घोषित होने तक प्रभावी रहती है। इसे **भारत संघ बनाम हरबंस सिंह जलाल एवं अन्य** से संबंधित वाद में उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित किया गया था।
- इसे चुनाव में सभी राजनीतिक दलों को **समान अवसर** प्रदान करने, चुनाव प्रक्रिया की निष्पक्षता एवं शुचिता सुनिश्चित करने, दलों के मध्य झड़पों एवं विवादों से बचाव तथा शांति एवं व्यवस्था सुनिश्चित करने हेतु लक्षित किया गया है। इस प्रकार, इसके तहत सामान्य आचरण, बैठकों, जुलूसों, मतदान केंद्रों, पर्यवेक्षकों, राजनीतिक दलों के चुनावी घोषणा-पत्रों आदि से संबंधित दिशा-निर्देश जारी किए जाते हैं।
- इसका मुख्य उद्देश्य यह सुनिश्चित करना है कि केंद्र या राज्यों में सत्तारूढ़ दल, चुनाव में अनुचित लाभ प्राप्त करने हेतु अपनी **आधिकारिक स्थिति का दुरुपयोग न कर पाएं।** MCC के अंतर्गत नई योजनाओं की घोषणा करने, विज्ञापनों हेतु सरकारी कोष का उपयोग करने आदि के संबंध में मंत्रियों और अन्य अधिकारियों के आचरण के संदर्भ में दिशा-निर्देश जारी किए जाते हैं।

आदर्श आचार संहिता का विकास

- MCC के उद्भव को **1960 के केरल विधानसभा चुनावों** से संबद्ध किया जाता है, जहाँ राज्य प्रशासन द्वारा राजनीतिक नेताओं के लिए एक **'आचार संहिता'** का निर्माण किया गया था।
- इसके पश्चात्, 1962 के लोकसभा चुनावों में ECI ने सभी मान्यता प्राप्त राजनीतिक दलों और राज्य सरकारों को इस आचार संहिता का वितरण किया।
- वर्ष 1991 तक MCC का क्रियान्वयन सुव्यवस्थित नहीं था, क्योंकि इसकी उन राजनीतिक दलों द्वारा व्यापक रूप से अवहेलना की जाती थी जो प्रायः उग्र राजनीतिक प्रतिस्पर्द्धा के स्थान पर लोकलुभावन घोषणाओं और अक्षम अधिकारियों के परिनियोजन जैसी भ्रष्ट निर्वाचक प्रथाओं का आश्रय लेते थे।
- **वर्ष 1991 के पश्चात् MCC का क्रियान्वयन:**
    - तत्कालीन मुख्य चुनाव आयुक्त (CEC) टी. एन. शेषन के नेतृत्व में भारत निर्वाचन आयोग ने MCC के क्रियान्वयन हेतु नवीन साधनों का प्रयोग किया। ECI ने प्रमुख राजनीतिक अभिकर्ताओं की सार्वजनिक रूप से निंदा की तथा निर्वाचनों को स्थगित भी किया; इस प्रकार निर्वाचन तिथि निर्धारित करने हेतु ECI की शक्तियों की पुनर्व्याख्या हुई।
    - उस समय तीव्रता से प्रसारित होते मीडिया ने उत्साह के साथ इन पहलों की रिपोर्टिंग की। साथ ही प्रत्याशी अपने प्रतिद्वंद्वियों द्वारा की जाने वाली त्रुटियों का लाभ उठाकर प्रसन्नता का अनुभव कर रहे थे। इसके परिणामस्वरूप राजनीतिक अभिकर्ताओं ने MCC का गंभीरतापूर्वक अनुपालन करना आरंभ कर दिया।

आचार संहिता की विधिक स्थिति

- MCC विधि द्वारा प्रवर्तनीय नहीं है। हालाँकि, **भारतीय दंड संहिता, 1860; दंड प्रक्रिया संहिता, 1973 और जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951** जैसी अन्य विधियों में संबंधित प्रावधानों के माध्यम से MCC को लागू किया जा सकता है।
- निर्वाचन आयोग MCC को विधिक रूप से बाध्यकारी बनाए जाने के विरुद्ध तर्क प्रस्तुत करता रहा है। निर्वाचन आयोग का मत है कि निर्वाचन अपेक्षाकृत अल्पावधि (लगभग 45 दिन) के भीतर पूर्ण हो जाने चाहिए जबकि न्यायिक प्रक्रियाएं सामान्यतया

Mains 365 - राजव्यवस्था

VISION IAS

दीर्घावधि तक चलती रहती हैं।

- दूसरी ओर वर्ष 2013 में कार्मिक, लोक शिकायत, विधि और न्याय संबंधी स्थायी समिति ने MCC को विधिक रूप से बाध्यकारी बनाए जाने तथा इसे जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम,1951 का एक अनिवार्य भाग बनाए जाने के संदर्भ में अनुशंसा की थी।

विकास और गवर्नेंस (अभिशासन) पर आदर्श आचार संहिता (MCC) का प्रभाव

- जब MCC को लागू किया जाता है तो उस स्थिति में सत्तारूढ़ सरकारों के कार्यों पर प्रतिबंध आरोपित हो जाता है। इस प्रकार यह बहस का मुद्दा बना हुआ है कि क्या यह राज्य के अभिशासन को बाधित करता है, क्योंकि -
  - सरकार किसी भी नई परियोजना, योजना या नीति की घोषणा नहीं कर सकती है।
  - पोर्टफोलियो धारित राजनेताओं द्वारा अभियानों एवं आधिकारिक यात्राओं का निष्पादन एकसाथ नहीं किया जा सकता है।
  - सरकार द्वारा कोई भी अभियान सार्वजनिक कोष की लागत पर नहीं किया जा सकता है।
  - सत्तारूढ़ सरकार किसी भी सरकारी, सार्वजनिक उपक्रमों आदि में कोई तदर्थ (एडहॉक) नियुक्तियाँ नहीं कर सकती है।
- हाल ही में, विधि आयोग द्वारा इस प्रकार के मुद्दों (प्रेक्षणों) को उठाया गया है, किन्तु ECI द्वारा उन तर्कों को अस्वीकृत कर दिया गया कि चुनावों के दौरान आदर्श आचार संहिता अभिशासन को बाधित करती है।
- इसके अतिरिक्त, ECI द्वारा यह भी रेखांकित किया गया कि चुनाव के दौरान जब सरकारी विभाग 'संदर्भ' के साथ प्रस्तावों और योजनाओं के संबंध में अनुमोदन प्राप्त करने हेतु संपर्क करते हैं, तो ECI द्वारा स्थिति के महत्व को समझते हुए त्वरित निर्णय लिया जाता है।

आदर्श आचार संहिता के क्रियान्वयन के समक्ष व्याप्त समकालीन चुनौतियाँ

- **चुनावी कदाचारों के नवीन स्वरूपों का उदय:**
  - **मीडिया के माध्यम से हेर-फेर करना-** राजनीतिक दलों और प्रत्याशियों द्वारा मीडिया के दुरुपयोग का पता लगाना कठिन होता है।
- **MCC के उल्लंघन के प्रति प्रतिक्रिया हेतु ECI की दुर्बल क्षमता:**
  - सक्षम राजनीतिक अभिकर्ताओं के अनुचित कथनों के प्रति **दुर्बल या विलंबित प्रतिक्रिया**। इसके परिणामस्वरूप राजनीतिक अभिकर्ता प्रतिफलों के भय के बिना MCC के उल्लंघन का साहस कर पा रहे हैं।
  - **डिजिटल सामग्री-** अधिकांश सूचना (निर्वाचन संबंधी) का प्रवाह राजनीतिक दलों के सूचना प्रौद्योगिकी प्रकोष्ठ के माध्यम से नहीं बल्कि तृतीय पक्ष अनुबंधों के माध्यम से होता है। यद्यपि, ECI ने प्रमुख अभिकर्ताओं हेतु एक स्व-विनियामक सोशल मीडिया संहिता विकसित की है तथापि टेलीग्राम और वीचैट (WeChat) जैसे अनेक मंच राजनीतिक लामबंदी हेतु तेजी से प्रासंगिक बनते जा रहे हैं।
  - **कुछ मुद्दों पर वाद-विवाद-** जैसे कि राष्ट्रीय सुरक्षा, आपदा प्रबंधन आदि। कुछ राजनीतिक दलों ने यह आरोप लगाया है कि सत्तारूढ़ दल ने ऐसे मुद्दों का दुरुपयोग किया है। परन्तु निर्वाचन आयोग ने कहा है कि ये मुद्दे MCC के दायरे में नहीं आते।

निर्वाचन संहिता के उल्लंघन के निहितार्थ

- **यह निर्वाचन आयोग की स्थिति को कमजोर करता है-** क्योंकि आयोग की विश्वसनीयता और प्राधिकार का ह्रास होता है।
- **स्वतंत्र एवं निष्पक्ष निर्वाचनों के सिद्धांत की अवहेलना-** क्योंकि धनबल अथवा बाहुबल के प्रयोग जैसे प्रकरण सभी भागीदारों के मध्य समान प्रतिस्पर्धा को बाधित करते हैं।
- **विमर्श का निष्पादन से पहचान की ओर स्थानांतरण-** क्योंकि राजनीतिक दल मत सुनिश्चित करने हेतु जाति और सामुदायिक भावनाओं का प्रयोग करते हुए MCC दिशा-निर्देशों की अवहेलना करते हैं।
- **भारतीय लोकतंत्र में जन विश्वास का ह्रास-** क्योंकि स्वतंत्र और निष्पक्ष निर्वाचनों का वायदा कदाचित अप्रभावी हो गया है।

आगे की राह

- **MCC में लोगों को शामिल करने की आवश्यकता-** चुनाव आचार संहिता के उल्लंघन पर सूचना प्रदान करने हेतु नागरिकों को सक्षम बनाने हेतु **'सी-विजिल' (cVIGIL)** जैसे मोबाइल ऐप के माध्यम से जन भागीदारी को बढ़ावा देना। यदि लोग MCC का उल्लंघन करने वाले प्रत्याशियों और दलों को अस्वीकृत कर देते हैं तो यह MCC का पालन करने हेतु प्रत्याशियों पर अंतर्निहित दबाव का सृजन करेगा।

VISION IAS

- **निर्वाचन विवादों के समाधान हेतु फ़ास्ट ट्रैक न्यायालय की स्थापना-** ताकि जब कभी ECI कोई दंडात्मक कार्यवाही सम्पादित करे तब इस पर अंतिम निर्णय को शीघ्रातिशीघ्र प्राप्त किया जा सके।
- **भारत के निर्वाचन आयोग को सुदृढ़ बनाना-** निर्वाचन आयुक्तों की नियुक्तियों एवं निष्कासन में व्यापक पारदर्शिता सुनिश्चित की जानी चाहिए तथा अर्द्धसैनिक बलों एवं अन्य सुविधाओं हेतु केंद्र सरकार पर ECI की निर्भरता को भी कम किया जाना चाहिए।

5.2.2. इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन

(Electronic Voting Machine)

सुर्खियों में क्यों?

हाल ही में, EVMs की सुरक्षा को लेकर कई विवाद उत्पन्न हुए हैं।

EVMs में शामिल सुरक्षा संबंधी विशेषताएं

- **नॉन-रीप्रोग्रामेबल:** इसमें एक वन टाइम प्रोग्रामेबल (विनिर्माण के समय सॉफ्टवेयर बर्न किया जाता है) इंटीग्रेटेड सर्किट (IC) चिप लगी होती है जिसे रिप्रोग्राम नहीं किया जा सकता है।
- **कोई बाह्य संचार हस्तक्षेप नहीं :** EVM के नेटवर्क का निर्माण किसी तार या बेतार प्रणाली द्वारा नहीं किया जाता है, और न ही ये किसी फ्रीक्वेंसी रिसीवर और डेटा डिकोडर से संबद्ध होती हैं, इसलिए इनमें कोई बाह्य संचार हस्तक्षेप नहीं हो सकता है। कंट्रोल यूनिट (CU), बैलट यूनिट (BU) से केवल विशेष रूप से इन्क्रिप्टेड और डायनामिकली कोडेड डेटा ही स्वीकार करती है।
    - नीदरलैंड और जर्मनी जैसे अन्य देश (जिन्होंने EVM का प्रयोग करना बंद कर दिया है) कंप्यूटर आधारित EVM का उपयोग करते हैं जो हैकिंग के प्रति सुभेद्य होती हैं, जबकि भारतीय **EVM स्वतंत्र रूप से संचालित मशीनें** हैं।
- **सुरक्षित सोर्स कोड**: BEL और ECIL में इंजीनियरों के चयनित समूह द्वारा सॉफ्टवेयर और सोर्स कोड को देश में विकसित किया जाता है।
- यह मतदाता को **केवल एक बार मतदान** करने की अनुमति देती है। पीठासीन अधिकारी द्वारा कंट्रोल यूनिट (CU) के मतपत्र को सक्षम बनाने पर ही अगला मत दर्ज किया जा सकता है।
- **मतदान का समय मुद्रांकन**: EVM को रियल टाइम वाच, फुल डिस्प्ले सिस्टम और प्रत्येक बार बटन दबाने की प्रत्येक गतिविधि की टाइम-स्टैंपिंग की जाती है, अतः सिस्टम जनरेटेड /अप्रत्यक्ष मतदान की कोई संभावना नहीं होती है।
- **निर्माण के पश्चात टेम्परिंग (छेड़छाड़) के विरुद्ध सुरक्षा**: टेम्परिंग के मामले में मशीन स्वतः सुरक्षात्मक उपाय अपनाते हुए स्वचालित रूप से बंद हो जाती है।
- स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनाव सुनिश्चित करने हेतु कार्यात्मक जाँच, ट्रायल रन, यादृच्छिक आवंटन, बहु-चरणीय परीक्षण, ड्राई रन और मतदान पश्चात सुरक्षित भंडारण जैसे विभिन्न **प्रक्रियात्मक नियंत्रण और संतुलन** (मानक संचालन प्रक्रिया) भी सम्मिलित हैं।

इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग मशीन (EVM) के संबंध में

- EVM में एक **"कंट्रोल यूनिट"** और एक **"बैलेटिंग यूनिट"** संलग्न होता है। कंट्रोल यूनिट, चुनाव आयोग द्वारा नियुक्त मतदान अधिकारी के पास तथा **बैलेटिंग यूनिट** मतदान कक्ष, जहां मतदाता गुप्त रूप से मतदान करता है, में रखी जाती है।
- यह कंट्रोल यूनिट में लगी **सिंगल एल्कलाइन बैटरी** से संचालित होती है और उन क्षेत्रों में भी इसका प्रयोग किया जा सकता है, जहाँ विद्युत् नहीं है।
- इनका निर्माण **इलेक्ट्रॉनिक्स कॉरपोरेशन ऑफ इंडिया लिमिटेड (ECIL) और भारत इलेक्ट्रॉनिक्स लिमिटेड (BEL)** द्वारा किया गया है।

भारतीय चुनावों में EVM का इतिहास

- EVM का **प्रथम प्रयोग 1982 के केरल विधानसभा चुनाव (उपचुनाव)** में किया गया था।
- हालांकि, उच्चतम न्यायालय ने जन प्रतिनिधित्व अधिनियम,1951 और चुनाव नियम 1961 के तहत EVM के प्रयोग की अनुमति नहीं होने के कारण इस चुनाव को रद्द घोषित कर दिया था।
- EVM के प्रयोग की अनुमति देने के लिए **1988 में जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951** को संशोधित किया गया।
- सम्पूर्ण राज्य के लिए इसका **सर्वप्रथम प्रयोग 1999 में, गोवा विधान सभा चुनाव** में किया गया था।
- **लोकसभा** के लिए EVM का सर्वप्रथम प्रयोग **2004** के लोकसभा चुनावों में किया गया था।

VISION IAS

मतपत्र व्यवस्था को पुनः अपनाने के पक्ष में तर्क

- स्वतंत्र और निष्पक्ष चुनावों के तीन स्तंभों **(पारदर्शिता, सत्यापन और गोपनीयता)** के संदर्भ में EVMs द्वारा निम्नलिखित मुद्दों का सामना किया जाता है-
    - **पारदर्शी नहीं**: मतदाता द्वारा चयनित विकल्प का इलेक्ट्रॉनिक डिस्प्ले मशीन में इलेक्ट्रॉनिक रूप से संग्रहित मत से भिन्न हो सकता है। इस अंतर को समाप्त करने के लिए, VVPAT को लागू किया गया था।
    - **सत्यापन योग्य नहीं**: केवल मत संख्या को सत्यापित किया जा सकता है और मतदान के चयनित विकल्प को नहीं।
    - **गोपनीय नहीं:** EVMs के माध्यम से गणना, मतदान केंद्रों के अनुसार गणना के समतुल्य है, जो उस केंद्र की मतदान पद्धति को उद्घाटित करने और समुदाय विशेष के लिए समस्या उत्पन्न होने की संभावनाओं को प्रस्तुत करता है।
    - **हैकिंग की संभावना:** EVMs के हैक होने का आरोप या यहां तक कि उनके हैक होने की संभावना जनता के मन में चुनावी प्रक्रियाओं के संबंध में अविश्वास उत्पन्न करती है।
    - **EVMs का दोषपूर्ण कार्य संचालन:** यद्यपि EVMs के उचित प्रयोग हेतु विशिष्ट प्रशिक्षण प्रदान किया जाता है, फिर भी अधिकारियों द्वारा कभी-कभी ध्यान नहीं दिया जाता है और वह मशीनों को गलत क्रम में जोड़ देते हैं।

वोटर वैरीफिएबल पेपर ऑडिट ट्रेल (Voter Verifiable Paper Audit Trail: VVPAT)

- VVPAT एक स्वतंत्र सत्यापन प्रणाली है जो मतदाताओं को यह सत्यापित करने की कि उनका मत सही रूप से दर्ज हुआ है, की अनुमति प्रदान करती है। साथ ही विवादों के मामले में यह संभावित चुनाव धोखाधड़ी/दोषपूर्ण कार्यप्रणाली को ज्ञात करने और संग्रहीत परिणामों का ऑडिट करने के लिए एक साधन प्रदान करती है।
- **VVPAT** से, कंट्रोल यूनिट (CU) में मत की रिकॉर्डिंग के साथ उम्मीदवार के नाम और चुनाव चिन्ह के साथ एक कागज की पर्ची दी जाती है। मतदान केंद्र में बैलट यूनिट (BU) से जुड़ी एक पारदर्शी विंडो में प्रिंटेड पर्ची प्रदर्शित होती है (7 सेकंड के लिए)।
- **सुब्रमण्यम स्वामी बनाम भारत निर्वाचन आयोग** (2014) वाद में, उच्चतम न्यायालय द्वारा वर्णित किया गया कि VVPAT मतदान में पारदर्शिता सुनिश्चित करने के लिए आवश्यक है और ECI द्वारा इसे लागू किया जाना चाहिए। आम चुनाव 2019 में, सभी निर्वाचन क्षेत्रों में VVPAT का प्रयोग किया जाएगा।

हालिया परिवर्तन

- हाल ही में, उच्चतम न्यायालय द्वारा प्रत्येक विधान सभा क्षेत्र/निर्वाचन क्षेत्र में पांच यादृच्छिक EVM के लिए VVPAT सत्यापन का विस्तार किया गया था, ताकि निर्वाचन प्रक्रिया में उच्च सटीकता व संतुष्टि को सुनिश्चित किया जा सकें।
- पूर्व में ECI के दिशानिर्देशों के तहत, प्रत्येक विधान सभा क्षेत्र/निर्वाचन क्षेत्र में केवल एक ही EVM मशीन की VVPAT पर्ची का भौतिक सत्यापन किया जाता था।
- चुनाव आचार संहिता नियमावली (The Conduct of Election Rules) में यह उल्लेख किया गया है कि यदि कोई मतदाता यह शिकायत करता है कि उसका मत किसी गलत दल के पक्ष में गया है तो उसे एक परीक्षण मत देने की अनुमति प्रदान की जा सकती है। हालांकि, यदि VVPAT द्वारा किसी भी प्रकार की त्रुटि को प्रदर्शित नहीं किया जाता है तो इस स्थिति में मतदाता को अर्थदंड एवं 6 माह के कारावास की सजा हो सकती है।
- VVPAT पर्ची की गणना विशेष रुप से स्थापित VVPAT गणना बूथों पर ही की जाती हैं जो रिटर्निंग ऑफिसर (पीठासीन अधिकारी) की गहन निगरानी तथा पर्यवेक्षक के प्रत्यक्ष निरीक्षण के अधीन होते हैं।

EVM के प्रयोग को जारी रखने के पक्ष में तर्क

- **प्रयोग और पहुँच में सुगमता**: EVM का प्रयोग सुगम है, यहां तक कि दलों के चुनाव-चिन्हों की पहचान करके मतदान करने वाले निरक्षर मतदाताओं के लिए भी यह अत्यधिक सहायक है। साथ ही यह इलेक्ट्रॉनिक मतदान को अधिक सुगम बनाता है, इसका अर्थ है कि यह दिव्यांग व्यक्तियों को स्वावलंबित रूप से मतदान करने में सक्षम बनाता है।
- **विश्वसनीय और सुरक्षित**: EVM के प्रयोग से बूथ कैप्चरिंग, धांधली और स्याही द्वारा मतपत्रों को विकृत करने की घटनाओं पर रोक लगी है।
    - इसके अतिरिक्त, EVM स्वयं में एक सुरक्षित मशीन है जिसे हैक किया जाना संभव नहीं है।
- **त्वरित परिणाम के साथ विश्वास बहाली**: विभिन्न लोकतांत्रिक देशों, विशेष रूप से ब्राजील, भारत और फिलीपींस जैसे बड़े देशों में इलेक्ट्रॉनिक मतदान और इलेक्ट्रॉनिक गणना के माध्यम से आधिकारिक चुनाव परिणाम सप्ताह (मतपत्र व्यवस्था में) के बजाय घंटों में प्राप्त किए जा सकते हैं।

VISION IAS

- **पूर्णतः ऑडिट योग्य**: भारतीय इलेक्ट्रॉनिक वोटिंग सिस्टम की अधिक सराहना हेतु निहित कारणों में से एक यह है कि यह सभी दलों, नागरिकों और निर्वाचन आयोग द्वारा चुनावी प्रक्रिया को इसके प्रत्येक चरण में (जिसमें एक चुनाव शुरू होने से पूर्व का समय भी शामिल है) ऑडिट करने में सक्षम बनाती है।
- अन्य लाभों में सम्मिलित है,
  - अवैध और संदिग्ध मतों की संभावना को समाप्त करना जो कई मामलों में, विवादों और चुनावी प्रतिस्पर्धाओं के मूल कारण हैं।
  - साथ ही, यह चुनाव के दौरान कागज के उपयोग को भी कम करता है।

आगे की राह

- यद्यपि "दोषपूर्ण संचलन" (जो एक तकनीकी कमी को प्रदर्शित करता है) के मामले भी परिलक्षित हुए हैं, किन्तु अभी तक "टैम्परिंग" (धोखाधड़ी के उद्देश्य से छेड़छाड़ करना) के किसी मामले की पुष्टि नहीं हुई है। 2017 में, निर्वाचन आयोग (EC) ने एक '**EVM चैलेंज**' का भी आयोजन किया था, जहां इसने राजनीतिक दलों को टेम्परिंग के किसी भी आरोप को प्रदर्शित करने/ साक्ष्य प्रस्तुत करने हेतु आमंत्रित किया।
- हालांकि, चुनाव की निष्पक्षता के लिए लागत और दक्षता संबंधी चिंताएं गौण हैं। निर्वाचन आयोग को यह सुनिश्चित करना चाहिए कि जनसामान्य किसी भी प्रकार के अनुचित संदेह से मुक्त हो, इसके लिए निम्नलिखित उपाय अपनाए जा सकते हैं:
  - सभी **चुनावों और उपचुनावों में VVPAT के 100% परिनियोजन** और किसी निर्वाचन क्षेत्र में किसी भी दोषपूर्ण EVM का पता लगाने हेतु उस निर्वाचन क्षेत्र की सभी EVM से प्राप्त VVPAT की मैन्युअली गणना करना आवश्यक है।
  - निर्वाचन आयोग द्वारा मतगणना के लिए **टोटलाइज़र मशीनों** का प्रयोग किया जाना चाहिए। मतदान केंद्र-आधारित परिणामों की घोषणा करने की वर्तमान प्रक्रिया की तुलना में 14 मतदान केंद्रों के मतों की एक साथ गणना करके मतदान की गोपनीयता में वृद्धि की जा सकती है।
  - निर्वाचन आयोग द्वारा EVM संबंधी सूचना अंतराल को कम करने हेतु सभी चुनावी राज्यों में **नियमित प्रदर्शन** आयोजित किए जाने चाहिए।
  - निर्वाचन आयोग द्वारा अधिकारियों को छोटे बैचों में प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए और सीखने पर ध्यान केंद्रित करना चाहिए। दीर्घकालिक संरचनात्मक सुधार के रूप में, EC को **एक स्वतंत्र सचिवालय** प्रदान किया जाना चाहिए जिससे कि इसके पास अधिकारियों का एक समर्पित कैडर उपलब्ध हो सके।

5.3. जन प्रतिनिधित्व अधिनियम से संबंधित मुद्दे

(Issues Related to RPA)

5.3.1. चुनावों के दौरान पेड न्यूज़

(Paid News in Elections)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, भारत निर्वाचन आयोग ने चुनावों के दौरान पेड न्यूज़ जैसे दुष्प्रचार के साधनों से निपटने हेतु उच्चतम न्यायालय में याचिका दायर की है।

पेड न्यूज क्या है?

भारतीय प्रेस परिषद (PCI) **"नकद या किसी प्रतिफल के एवज में किसी भी मीडिया (प्रिंट तथा इलेक्ट्रॉनिक) में प्रकाशित सूचना अथवा विश्लेषण"** को पेड न्यूज़ के तौर पर परिभाषित करता है। उल्लेखनीय है कि, प्रत्याशियों द्वारा व्यय सीमाओं के अतिक्रमण के कारण इसे "गंभीर निर्वाचन कदाचार" माना जाता है। हालांकि, पेड न्यूज को अभी तक चुनावी अपराध घोषित नहीं किया गया है।

पेड न्यूज के प्रयोग में वृद्धि के कारण

सूचना प्रौद्योगिकी संबंधी संसदीय स्थायी समिति ने **"पेड न्यूज से संबंधित मुद्दे"** नामक शीर्षक से प्रकाशित अपनी एक रिपोर्ट में पेड न्यूज के प्रयोग में वृद्धि हेतु उत्तरदायी निम्नलिखित कारणों की पहचान की है:

- **मीडिया से संबंधित कारण:** मीडिया का निगमीकरण, स्वामित्व और संपादकीय भूमिकाओं का विपृथक्करण, अनुबंध प्रणाली के उभरने के कारण संपादकों/पत्रकारों की स्वायत्तता में कमी तथा पत्रकारों के अल्प वेतनमान से संबंधित मुद्दे।
- **नियामकों से संबंधित मुद्दे:**
  - उपर्युक्त समिति ने न्यूज़ ब्राडकास्टिंग स्टैंडर्ड्स अथॉरिटी और ब्रॉडकास्टिंग कंटेंट कम्प्लेंट्स काउंसिल जैसे स्वैच्छिक स्व-विनियामक उद्योग निकायों को निरर्थक एवं अनुपयोगी निकाय के रूप में वर्णित किया है।

VISIONIAS

- PCI और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया मॉनिटरिंग सेंटर (EMMC) जैसे वैधानिक नियामकों की अपर्याप्त दंडात्मक शक्तियाँ।
- PCI या स्व-विनियामक निकायों के सदस्यों के रूप में मीडिया-मालिकों की नियुक्ति से उत्पन्न हित संघर्ष।

- **सरकार की निष्क्रियता:** PCI और भारत निर्वाचन आयोग (ECI) की विभिन्न अनुशंसाओं पर सरकार की अकर्मण्यता की स्थिति।
- **स्पष्टता का अभाव:** सूचना एवं प्रसारण मंत्रालय (MoIB), PCI, EMMC और ECI जैसे बहुविध निकायों के अस्तित्व के कारण दंडात्मक प्रावधानों और अधिकार क्षेत्र के मामलों में स्पष्टता का अभाव।
- **मीडिया स्वामित्व का संकेद्रण:** सभी मीडिया खंडों (प्रिंट, टी.वी. या इंटरनेट) के स्वामित्व या विषय-वस्तु और वितरण पर प्रतिबंध का अभाव एकाधिकारवादी प्रथाओं का सृजन करता है।
- **सरकारी विज्ञापनों का वितरण:** विज्ञापन और दृश्य प्रचार निदेशालय (Directorate of Advertising and Visual Publicity: DAVP) सरकारी अभिकरणों की ओर से विज्ञापनों के संपादन हेतु उत्तरदायी है। यह आरोप लगाया जाता है कि सरकार विज्ञापनों का उपयोग मीडिया घरानों से अपने पक्ष में कवरेज करवाने हेतु करती है।

पेड न्यूज के परिणाम

- पेड न्यूज स्वतंत्र और निष्पक्ष निर्वाचनों के संदर्भ में अत्यंत नकारात्मक भूमिका निभाती हैं, क्योंकि मतदाता स्पष्ट रूप से निर्दिष्ट विज्ञापनों की तुलना में समाचार रिपोर्ट्स को अधिक महत्व प्रदान करते हैं तथा उन पर अधिक विश्वास करते हैं।
- पेड न्यूज जनता को गुमराह करती हैं और सही राय निर्मित करने की उनकी क्षमता को प्रभावित करती है।
- पेड न्यूज मतदाताओं पर अनुचित प्रभाव डालती है और उनके सूचना के अधिकार को भी नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है।
- पेड न्यूज निर्वाचन व्यय कानूनों / व्यय की अधिकतम सीमा के अतिक्रमण को प्रेरित करती है।
- यह प्रत्याशियों के मध्य समान अवसर के सिद्धांत को भी नकारात्मक रूप से प्रभावित करती है।

पेड न्यूज से निपटने में चुनौतियाँ

- पेड न्यूज के संबंध में परिस्थितिजन्य साक्ष्य उपलब्ध होने के बावजूद पर्याप्त प्रमाणों का अभाव होता है। नकदी या अन्य प्रतिफल के रूप में हुए लेन-देन को प्रमाणित करना एक कठिन कार्य है, क्योंकि इसे सामान्यतया बिना किसी रिकॉर्ड के निष्पादित किया जाता है और जांच के दौरान दोनों पक्षों द्वारा तुरंत ही अस्वीकार कर दिया जाता है।
- मीडिया प्रमाणन एवं निगरानी समिति (Media Certification and Monitoring Committee: MCMC) द्वारा प्रायः मीडिया संबंधी नियमों के उल्लंघन, छद्म विज्ञापनों (surrogate advertisement) और असूचित विज्ञापनों को त्रुटिवश पेड न्यूज मान लिया जाता है।
- इस हेतु निर्धारित समय सीमा अत्यंत कम होती है। हालांकि, यदि इनका पालन नहीं किया जाए, तो किसी विशेष चुनाव प्रक्रिया में पेड न्यूज पर होने वाले व्यय का अनुमान लगाना संभव नहीं हो पाएगा।

भारत निर्वाचन आयोग (ECI) द्वारा उठाए गए कदम

- वर्ष 2010 से, ECI ने राज्य और जिला अधिकारियों को पेड न्यूज के मामलों की जांच, पहचान और रिपोर्ट करने हेतु निर्देश जारी किए हैं।
- आयोग ने पेड न्यूज की जाँच के लिए जिला और राज्य स्तर पर एक मीडिया प्रमाणन एवं निगरानी समिति (MCMC) की नियुक्ति की है।
  - यह समाचारों के रूप में राजनीतिक विज्ञापन की पहचान करने हेतु अपने अधिकार क्षेत्र में सभी प्रकार के मीडिया की जांच करेगा।
  - MCMC व्यय निरीक्षकों द्वारा इसे संदर्भित पेड न्यूज़ मामलों पर भी सक्रिय रूप से विचार करेगी।

आगे की राह

- **विधि आयोग की अनुशंसाएं: "चुनावी सुधार" पर रिपोर्ट (2015)**
  - "समाचार के लिए भुगतान करना", "समाचार के लिए भुगतान प्राप्त करना" और "राजनीतिक विज्ञापन" की परिभाषाएं **जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951** के दायरे में सम्मिलित की जानी चाहिए।
  - पेड न्यूज को **चुनावी अपराध** घोषित किए जाने से प्रत्याशियों को निरर्ह घोषित किया जा सकेगा।
  - **मीडिया के सभी रूपों के लिए प्रकटीकरण प्रावधान:** यह निम्नलिखित में सहायक होगा-
    - किसी समाचार सामग्री की प्रकृति (भुगतान की गई सामग्री या संपादकीय सामग्री) की पहचान करने में जनता के लिए सहायक,
    - प्रत्याशियों और मीडिया के बीच लेनदेनों की निगरानी रखने में।

राजनीतिक विज्ञापन में हितों के गैर-प्रकटीकरण से निपटने के लिए जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम में एक नया उपबंध समाविष्ट किया जाना चाहिए।

VISION IAS

- **सूचना प्रौद्योगिकी संबंधी स्थायी संसदीय समिति द्वारा "पेड न्यूज से संबंधित मुद्दे" नामक शीर्षक से जारी अपनी रिपोर्ट में की गई अनुशंसाएं:**
    - मीडिया घरानों के वित्तीय खातों की जांच, विशेष रूप से ऐसे वित्तीय स्रोतों की जिनका संबंध किसी संदिग्ध पेड न्यूज मामले से हो।
    - 'निजी संधियों' का प्रकटीकरण और मीडिया घरानों द्वारा प्राप्त विज्ञापन राजस्व का विवरण।
    - प्रिंट और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया दोनों के लिए एकल नियामक निकाय की स्थापना या PCI की दंडात्मक शक्तियों में वृद्धि करना और इलेक्ट्रॉनिक मीडिया के लिए एक समान वैधानिक निकाय की स्थापना करना।
    - नियामकों में सदस्यों के रूप में मीडिया के मालिक / इच्छुक पक्ष शामिल नहीं होने चाहिए।
    - जांच के प्रावधानों के साथ केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा विज्ञापनों के वितरण हेतु पारदर्शी एवं निष्पक्ष नीति। इसके अतिरिक्त, DAVP को अपनी वेबसाइट पर विज्ञापनों के व्यय के संवितरण के बारे में विवरण को उद्घाटित करना चाहिए।
- PCI ने प्रेस परिषद अधिनियम, 1978 में संशोधन करने की मांग की है, ताकि सरकारी प्राधिकरणों पर इसके निर्देश बाध्यकारी हो सकें तथा इलेक्ट्रॉनिक मीडिया को इसके दायरे में लाया जा सके।
- ECI ने पेड न्यूज़ को बढ़ावा देने और प्रकाशित करने पर दो वर्ष के कारावास के न्यूनतम दंड के साथ इसे चुनावी अपराध के रूप में घोषित करने की अनुशंसा की है।
- राजनीतिक दलों, प्रत्याशियों और मीडिया घरानों द्वारा स्व-विनियमन सुनिश्चित करने के उपाय। दंडात्मक की बजाय निवारक उपाय जैसे कि राजनीतिक दलों, मीडिया घरानों और अन्य हितधारकों को शामिल करते हुए पेड न्यूज पर शैक्षिक अभियान का संचालन।
- **सर्वोत्तम अंतर्राष्ट्रीय प्रथाओं को अपनाना:** यूनाइटेड किंगडम में प्रेस पर जस्टिस लेवसन रिपोर्ट तथा वहां मौजूदा नियामक संरचना का अनुसरण करना।

5.3.2. राजनीति का अपराधीकरण

(Criminalization of Politics)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, **पब्लिक इंटरेस्ट फाउंडेशन वाद** में मुख्य न्यायाधीश की अध्यक्षता वाले पांच न्यायाधीशों की एक संविधान पीठ ने राजनीति का गैर-अपराधीकरण सुनिश्चित करने के लिए विधायिका से कानून बनाने पर विचार करने को कहा।

पृष्ठभूमि

- प्रचलित विधि के अनुसार, विधि निर्माताओं और प्रत्याशियों को जन प्रतिनिधित्व अधिनियम (RPA) के तहत आपराधिक मामले में दोषसिद्धि के पश्चात् ही चुनाव लड़ने से प्रतिबंधित किया जाता है।
- वर्तमान निर्णय इस प्रश्न के आधार पर दिया गया था कि क्या जिन विधि निर्माताओं पर आपराधिक मुकदमे चल रहे हैं उन्हें उनके विरुद्ध आरोप सिद्ध होने की प्रक्रिया के दौरान चुनाव लड़ने से निरर्ह घोषित किया जा सकता है।

विधिक एवं न्यायिक प्रावधान

- **अनुच्छेद 102(1) और 191(1)** कुछ आधारों पर क्रमशः सांसद और विधायक को निरर्ह घोषित करते हैं।
- **जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 8**, दोषी राजनेताओं पर प्रतिबंध आरोपित करती है। परंतु अत्यधिक गंभीर आरोपों में भी अभियोजन का सामना करने वाले व्यक्ति चुनाव लड़ने के लिए स्वतंत्र हैं।
- **लिली थॉमस वाद (2013)** में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि ऐसे सांसदों और विधायकों जिनके विरुद्ध आरोप-पत्र (चार्जशीट) दायर किया गया है, उन्हें दोषसिद्धि की स्थिति में अपील के लिए तीन माह का समय दिए बिना ही (जैसे कि पूर्व में व्यवस्था थी) सदन की सदस्यता से तत्काल प्रभाव से निरर्ह घोषित कर दिया जाएगा।
- **मार्च 2014** में उच्चतम न्यायालय ने अपने एक निर्णय के माध्यम से सभी अधीनस्थ न्यायालयों को एक वर्ष के भीतर विधायकों (legislators) से संबंधित मामलों पर निर्णय देने हेतु निर्देश दिया था। साथ ही, इसमें विफल रहने की स्थिति में उन्हें संबंधित उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश को ऐसा न करने के लिए उत्तरदायी कारणों का उल्लेख करने का भी निर्देश दिया गया था। हालाँकि, इस मामले में हुई प्रगति की समीक्षा अभी तक नहीं की गई है।

VISION IAS

2014 के लोक सभा चुनाव के आंकड़े (एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स: ADR) -

- इसके तहत कुल 542 निर्वाचित सांसदों का विश्लेषण किया गया, जिससे यह ज्ञात हुआ कि कुल 185 (34%) सांसदों ने स्वयं अपने विरुद्ध दर्ज आपराधिक मामलों की घोषणा की है।
- निर्वाचित सांसदों में से 112 (21%) द्वारा अपने विरुद्ध गंभीर आपराधिक मामलों की घोषणा की गई है जिनमे हत्या, हत्या का प्रयास, सांप्रदायिक दंगे, अपहरण, महिलाओं के विरुद्ध अपराध आदि शामिल हैं।
- आंकड़ों के अनुसार चुनाव में ऐसे प्रत्याशियों के जीतने की संभावना 13% होती है जिन पर आपराधिक मामले दर्ज हैं जबकि एक स्वच्छ छवि वाले उम्मीदवार के जीतने की संभावना मात्र 5% ही होती है।

राजनीति के अपराधीकरण के लिए उत्तरदायी कारण

- **वोट बैंक:** उच्चतम न्यायालय ने यह टिप्पणी की है कि हम एक मतदाता के रूप में अभी तक संगठित रूप से विकसित नहीं हो पाए हैं, इसलिए अधिकांश मतदाताओं के मतों को छलपूर्वक प्राप्त किया जा सकता है या उन्हें खरीदा जा सकता है। अपराधियों द्वारा मत खरीदने और अन्य गैर-कानूनी उद्देश्यों हेतु किया गया व्यय राजनेताओं और अपराधियों के मध्य गठजोड़ को प्रोत्साहित करता है।
- **भ्रष्टाचार:** विगत तीन लोकसभाओं में आपराधिक पृष्ठभूमि वाले या जिन सांसदों के विरुद्ध मुकदमे लंबित हैं, उनकी संख्या में वृद्धि हुई है जो कि वर्ष 2004 में 124, वर्ष 2009 में 162 और वर्ष 2014 में 182 थी।
- **निर्वाचन आयोग की कार्यप्रणाली में विद्यमान त्रुटियाँ:** विगत कई आम चुनावों से निर्वाचन आयोग और मतदाताओं के मध्य निरंतर एक अंतराल बना हुआ है। जन सामान्य को आयोग द्वारा निर्मित नियमों के संबंध में पर्याप्त जानकारी प्राप्त नहीं होती। इसके अतिरिक्त, प्रत्याशियों द्वारा आदर्श आचार संहिता (MCC) का स्पष्ट रूप से उल्लंघन किया जाता है।
- **न्याय और विधि के शासन की अवज्ञा:** चुनाव लड़ने वाले अपराधियों के विरुद्ध प्रभावी कानूनों का अभाव, इस प्रक्रिया को अधिक प्रोत्साहित करता है। लंबित मामलों में से 40 प्रतिशत को विशेष न्यायालयों में स्थानांतरित कर दिया गया है, **जिनमें से केवल 136 मामलों (11%) में ही निर्णय दिए गए हैं।**
- यद्यपि, जन प्रतिनिधित्व अधिनियम (RPA) के तहत मौजूदा विधायक (legislator) या किसी प्रत्याशी को कुछ आधारों पर निरर्ह घोषित किया गया है, तथापि राजनीतिक दलों की आंतरिक नियुक्तियों को विनियमित करने के लिए कोई प्रावधान नहीं किया गया है। एक राजनेता को विधायिका के सदस्य होने से निरर्ह घोषित किया जा सकता है, किन्तु वह आरोप सिद्ध होने के बाद भी अपने दल के भीतर उच्च पदों को धारण कर सकता है। इस प्रकार, एक राजनेता को विधायक होने से अयोग्य घोषित किया जा सकता है, लेकिन वह अपनी पार्टी के भीतर उच्च पदों पर बने रह सकते हैं।

उच्चतम न्यायालय के पर्यवेक्षण/सिफारिशें

- राजनीति के अपराधीकरण की समस्या "असाध्य नहीं" है, परंतु लोकतंत्र के समक्ष "घातक" बनने से पूर्व ही इस समस्या पर **तत्काल ध्यान** दिए जाने की आवश्यकता है।
- उच्चतम न्यायालय ने निर्देश दिया है कि संसद को यह सुनिश्चित करने के लिए कानून बनाना चाहिए कि गंभीर आपराधिक मुकदमों का सामना कर रहे व्यक्ति राजनीतिक व्यवस्था में प्रवेश न कर सकें।
- न्यायालय द्वारा किसी प्रत्याशी के विरुद्ध लंबित **आपराधिक मामलों की जानकारी** निर्वाचन आयोग और उसके राजनीतिक दल के माध्यम से प्रस्तुत करने के निर्देश गया है।
- इसके अतिरिक्त, प्रत्याशियों के पूर्ववर्ती आपराधिक मामलों को संबंधित राजनीतिक दलों की वेबसाइटों के साथ-साथ मीडिया के विभिन्न माध्यमों द्वारा **व्यापक रूप से प्रचारित** किया जाना चाहिए।
- न्यायालय द्वारा **राजनीतिक दलों का भी पर्यवेक्षण** किया गया। पुनः, न्यायालय ने कहा कि राजनीतिक दल देश की सरकार का गठन करते हैं तथा संसद के लिए प्रतिनिधियों को चुनते हैं और देश के शासन को संचालित करते हैं। इसलिए, राजनीतिक दलों की कार्यप्रणाली में आंतरिक लोकतंत्र, वित्तीय पारदर्शिता और उत्तरदायित्व को सुनिश्चित करना आवश्यक है।

अपराधीकरण का प्रभाव

- **कानून का उल्लंघन करने वालों का कानून निर्माताओं के रूप में निर्वाचन-** विभिन्न अपराधों में संलिप्त आरोपी व्यक्ति को संपूर्ण देश के लिए विधि निर्माण का अवसर प्रदान किया जाता है, जिसके कारण संसद की शुचिता में कमी आती है।
- **न्यायिक व्यवस्था के प्रति जन विश्वास में कमी-** यह स्पष्ट है कि राजनीतिक प्रभाव वाले लोग सुनवाई में विलंब कर, बार-बार स्थगन और किसी भी अर्थपूर्ण प्रगति को रोकने के लिए असंख्य इंटरलॉक्यूटरी (वादकालीन) याचिकाएं दायर करके अपने प्रभाव का लाभ उठाते हैं। यह न्यायपालिका की विश्वसनीयता पर प्रश्नचिन्ह आरोपित करता है।

VISION IAS

- **लोकतांत्रिक व्यवस्था में गिरावट:** जहां विधि का शासन अप्रभावी होता है और व्यापक स्तर पर सामाजिक विभाजन विद्यमान होता है, वहां प्रत्याशी की आपराधिक प्रतिष्ठा को एक गुण के रूप में माना जा सकता है। यह राजनीति में बाहुबल और धनबल की संस्कृति को बढ़ावा देता है।
- **दीर्घकालिक स्थायित्व प्राप्त करना (Self-perpetuating):** चूंकि राजनीतिक दलों द्वारा प्रत्याशी के जीतने की क्षमता (यह दलों के आंतरिक लोकतंत्र को भी बाधित करता है) पर अधिक ध्यान केन्द्रित किया जाता है, इसलिए वे अधिक से अधिक प्रभावशाली व्यक्तियों को दल में शामिल करते हैं। इस प्रकार, राजनीति का अपराधीकरण स्वयं को दीर्घ स्थायी बनाए रखता है और समग्र चुनावी संस्कृति को दूषित करता है।

राजनीति के अपराधीकरण से संबंधित विभिन्न समितियों के पर्यवेक्षण

संथानम समिति रिपोर्ट, 1963

- इसने राजनीतिक भ्रष्टाचार को अधिकारियों के भ्रष्टाचार से अधिक खतरनाक प्रवृत्ति के रूप में वर्णित किया और केंद्र एवं राज्य स्तर पर सतर्कता आयोग के गठन की अनुशंसा की।

वोहरा समिति रिपोर्ट (1993)

- इसने भारत में अपराधियों, राजनेताओं और नौकरशाहों के मध्य गठजोड़ और राजनीति के अपराधीकरण की समस्या का अध्ययन किया। हालांकि 25 वर्ष पूर्व रिपोर्ट प्रस्तुत करने के बाद भी सरकार द्वारा अभी तक इस रिपोर्ट को सार्वजनिक नहीं किया गया है।

पुलिस सुधारों पर पद्मनाभैया समिति (2000)

- इसने यह पाया कि भ्रष्टाचार पुलिस के राजनीतिकरण और अपराधीकरण दोनों का मूल कारण है।
- पुलिस के अपराधीकरण को राजनीति के अपराधीकरण से पृथक नहीं किया जा सकता है। राजनीति के अपराधीकरण के कारण दण्ड से मुक्ति की संस्कृति का विकास एवं प्रसार हुआ है जो भ्रष्ट पुलिसकर्मी को उनके द्वारा किए गए कृत्य और अकृत्य (commission and omission) अपराधों से बचने की अनुमति प्रदान करता है।

आगे की राह

- चुनाव लड़ने के लिए सभी प्रत्याशियों को समान अवसर प्रदान करने हेतु **चुनाव प्रचार अभियान की उच्च लागत को नियंत्रित** करना आवश्यक है।
- **चुनावी अयोग्यता पर भारतीय विधि आयोग की रिपोर्ट की अनुशंसाओं** के अनुसार, पर्याप्त रक्षापायों के साथ आरोप निर्धारित करने के चरण में भ्रष्ट राजनेताओं की अयोग्यता संबंधी प्रावधानों को प्रभावित करके राजनीति के अपराधीकरण के प्रसार को रोका जा सकता है।
- किसी प्रत्याशी द्वारा गलत हलफनामा दाखिल करना, अधिनियम के तहत 'भ्रष्ट आचरण' के रूप में निर्धारित किया जाना चाहिए। विधि आयोग द्वारा की गई अनुशंसा के आधार पर गलत हलफनामा दाखिल करने वाले व्यक्ति को दोषी मानते हुए उसे अयोग्य घोषित किया जाना चाहिए।
- निर्वाचन आयोग द्वारा अपराधियों और राजनेताओं के मध्य गठजोड़ को समाप्त करने के लिए प्रभावी उपाय किए जाने चाहिए।

5.4. चुनावी वित्तपोषण संबंधी सुधार

(Electoral Funding Reforms)

भारत में राजनीतिक भ्रष्टाचार से संबंधित मुद्दे में धन एक प्रमुख केंद्रीय विषय है और राजनीतिक दलों के सबसे बड़े लाभार्थी होने तथा उन्हें सर्वाधिक प्रत्यक्ष लाभ पहुंचने की संभावना सदैव बनी रहती है। चुनाव में भ्रष्टाचार जवाबदेही को कम करता है, प्रतिनिधित्व को विकृत करता है और नीति निर्धारण एवं शासन में विषमता का समावेश करता है। यह चुनावी वित्तपोषण में पारदर्शिता को अनिवार्य बनाता है। भारत में चुनावी वित्तपोषण से संबंधित मुद्दे निम्नलिखित हैं:

- **चंदा देने की अपारदर्शी प्रक्रिया:** राजनीतिक दल अपने वित्तपोषण का अधिकांश भाग गुप्त रूप से प्रदान किए गए चंदे (लगभग 70%) के माध्यम से नकद रूप में प्राप्त करते हैं। इसके अतिरिक्त, राजनीतिक दलों को आयकर से छूट भी प्राप्त होती है, जो काले धन की जमाखोरी हेतु एक माध्यम उपलब्ध करवाता है।
- **रिश्वत के विरुद्ध कार्रवाई का अभाव:** निर्वाचन आयोग ने जन प्रतिनिधित्व अधिनियम (RPA), 1951 में एक नए खंड 58B के समावेशन की मांग की है, ताकि यदि कोई दल एक निर्वाचन क्षेत्र के मतदाताओं को प्रलोभन (रिश्वत के रूप में) देता है (जो प्रकट नहीं हुआ है) तो वह उस दल के विरुद्ध कार्रवाई करने में सक्षम हो सके।
- **कॉरपोरेट क्षेत्र द्वारा असीमित चंदा प्रदान करना:** एक कंपनी द्वारा किसी राजनीतिक दल को कंपनी के निवल लाभ के अनुपात के रूप में दिए जाने वाले चंदे का 7.5% की अधिकतम सीमा को समाप्त कर दिया गया है। इस प्रकार इससे विशेषतया राजनीतिक दलों के लिए चंदा की व्यवस्था करने हेतु शेल कंपनियों की स्थापित करने की संभावना में वृद्धि हो सकती है।

VISION IAS

- **विदेशी वित्त पोषण की अनुमति:** विदेशी अंशदान (विनियमन) अधिनियम (FCRA) में संशोधन ने राजनीतिक दलों को प्राप्त होने वाले विदेशी धन को सुगम बना दिया है, जिससे शासन में संभावित व्यवधान उत्पन्न हो सकता है।
- **पारदर्शिता का अभाव:** RPA, 1951 की धारा 29 के तहत प्रावधानों के बावजूद, राजनीतिक दलों द्वारा अपनी वार्षिक लेखा-परीक्षा रिपोर्ट को निर्वाचन आयोग के समक्ष प्रस्तुत नहीं किया जाता है। राजनीतिक दलों द्वारा यह तर्क प्रस्तुत किया जाता है कि वे RTI अधिनियम के दायरे अंतर्गत नहीं आते हैं।

चुनावी वित्तपोषण में पारदर्शिता की कमी के निम्नलिखित परिणाम दृष्टिगत होते हैं यथा-

- **प्रति-लाभ प्राप्त करना (Quid pro quo):** राजनीतिक अभियानों के दानकर्ताओं द्वारा अपने द्वारा किए गए दान पर प्रतिफल के रूप में अनुकूल कानूनों एवं नीतियों, अनुकूल सरकारी अनुबंधों और कानून प्रवर्तन में स्वयं के लिए छूट की मांग की जा सकती है।
- **राजनीतिक समानता बाधित होती है:** लाभकारी कानूनों हेतु लोब्बिंग करने से कानून के लाभों को अधिक निष्पक्ष और लाभकारी ढंग से आवंटित करने की बजाय विशेष समूहों के पक्ष में सरलता से पुनर्वितरित किया जा सकता है। यह राजनीतिक समानता को बाधित करता है क्योंकि धनबल द्वारा कानूनी नियमों का निर्धारण किया जाता है जिन्हें अन्यथा निर्वाचन-क्षेत्र के सभी सदस्यों के व्यापक सरोकारों के माध्यम से निर्मित किया जा सकता है।
- **राजनीति का अपराधीकरण:** जब वित्तपोषण का स्रोत काला धन होता है, तब राजनीति में आपराधिक तत्वों का प्रवेश होता है।
- यदि राजनीतिक परिणाम प्रत्याशियों की वित्तीय क्षमता द्वारा निर्धारित होते हैं तो **स्वतंत्र और निष्पक्ष** चुनाव सम्पन्न नहीं हो सकते हैं। यह ईमानदार प्रत्याशियों को चुनाव लड़ने और जीतने से हतोत्साहित करता है।

निर्वाचनों के राज्य द्वारा वित्तपोषण के मामलें

विभिन्न समितियों द्वारा निर्वाचनों में धन की भूमिका को कम करने के एक तरीके के रूप में निर्वाचनों के राज्य द्वारा वित्तपोषण किए जाने के संदर्भ में सुझाव दिए गए हैं। हाल ही में, एक गैर-सरकारी सदस्य द्वारा विधेयक भी प्रस्तुत किया गया है जिसमें निर्वाचनों के राज्य वित्तपोषण के कार्यान्वयन का प्रावधान किया गया है।

चुनावों के राज्य वित्तपोषण के पक्ष में तर्क

- राज्य वित्तपोषण के परिणामस्वरूप **दल के भीतर** और प्रत्याशियों द्वारा की जाने वाले वित्तपोषण में पारदर्शिता में वृद्धि होगी, क्योंकि राज्य वित्तपोषण के साथ कुछ प्रतिबंध भी आरोपित किए जा सकते हैं।
- राज्य वित्त पोषण **समृद्ध लोगों** और धनी माफियाओं के **प्रभाव को सीमित कर सकता है,** जिससे चुनाव प्रक्रिया को स्वच्छ बनाया जा सकता है।
- यह **प्रतिलाभ** की जाँच करेगा और भ्रष्टाचार पर अंकुश लगाने में सहायक होगा।
- राज्य वित्तपोषण के माध्यम से दल में आंतरिक लोकतंत्र, महिलाओं के प्रतिनिधित्व और कमजोर वर्ग के प्रतिनिधित्व की मांग को प्रोत्साहित किया जा सकता है, क्योंकि यह सभी को **एक समान अवसर उपलब्ध** कराता है।
- भारत में निर्धनता के उच्च स्तर के साथ, सामान्य नागरिकों से राजनीतिक दलों के लिए बहुत अधिक योगदान की अपेक्षा नहीं की जा सकती है। इसलिए, राजनीतिक दल कॉर्पोरेट और समृद्ध व्यक्तियों से प्राप्त वित्तपोषण पर निर्भर रहते हैं।
- **इंद्रजीत गुप्ता समिति 1998, भारत के विधि आयोग, द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग, संविधान के कार्यचालन की समीक्षा हेतु राष्ट्रीय आयोग (National Commission to Review the Working of the Constitution: NCRWC)** सहित विभिन्न समितियों ने राज्य वित्तपोषण का समर्थन किया है।

निर्वाचनों के राज्य वित्तपोषण के विपक्ष में तर्क

- निर्वाचनों के राज्य वित्तपोषण के माध्यम से, **करदाताओं को उन राजनीतिक दलों या प्रत्याशियों का समर्थन** करने हेतु बाध्य किया जा सकता है, जिनकी विचारधारा से वे सहमत नहीं हैं।
- राज्य वित्तपोषण **यथास्थिति को प्रोत्साहित करता है** जो स्थापित दलों या प्रत्याशियों को सत्ता में बनाए रखती है और नए दलों एवं स्वतंत्र प्रत्याशियों के लिए सत्ता में आना कठिन बना देती है।
- राज्य वित्तपोषण **राजनीतिक नेताओं और सामान्य नागरिकों के मध्य अंतराल** में वृद्धि करता है, क्योंकि विभिन्न दल पार्टी फंड जुटाने हेतु नागरिकों पर निर्भर नहीं होते हैं।
- राजनीतिक दल नागरिक समाज के अंग होने के बजाय **राज्य के अंग बन** जाते हैं।
- यह प्रत्याशियों को केवल **मौद्रिक लाभ प्राप्त करने हेतु चुनाव लड़ने के लिए प्रोत्साहित कर सकता है।**
- राज्य वित्तपोषण के **प्रत्याशी द्वारा स्वयं के व्यय के पूरक** के रूप में न कि **विकल्प के रूप** में उपयोग किए जाने की संभावना बढ़ जाती है।

VISION IAS

5.4.1. चुनावी बॉण्ड

(Electoral Bonds)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, भारत के उच्चतम न्यायालय ने अपने एक **अंतरिम आदेश** में सभी राजनीतिक दलों को उनके द्वारा **बेनामी चुनावी बॉण्ड्स** के माध्यम से प्राप्त किए गए **चंदे का विवरण** भारत निर्वाचन आयोग को सौंपने का निर्देश दिया है।

पृष्ठभूमि

- चुनावी बॉण्ड योजना की घोषणा **केंद्रीय बजट 2017-18 में "देश में राजनीतिक वित्त-पोषण की प्रणाली को पारदर्शी बनाने"** के उद्देश्य से गई थी।
- चुनावी बॉण्ड्स वस्तुतः वित्त अधिनियम, 2017 के माध्यम से **भारतीय रिज़र्व बैंक अधिनियम, 1934; जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951; आयकर अधिनियम, 1961** और **कंपनी अधिनियम** में किए गए संशोधनों द्वारा प्रस्तावित किए गए थे।
- हालांकि, इस योजना के कुछ ऐसे प्रावधान हैं, जो **राजनीतिक वित्त-पोषण की पारदर्शिता** पर प्रश्न-चिन्ह लगाते हैं।
- कुछ याचिकाकर्ताओं ने चुनावी बॉण्ड योजना पर रोक लगाने हेतु उच्चतम न्यायालय में याचिका दायर की थी।
- निर्वाचन आयोग ने भी योजना में उन प्रावधानों के सम्बन्ध में उच्चतम न्यायालय में एक शपथ-पत्र दायर किया है, जो देश में राजनीतिक वित्त-पोषण पर गंभीर प्रतिप्रभाव उत्पन्न कर सकते हैं।

चुनावी बॉण्ड योजना के विपक्ष में याचिकाकर्ताओं के तर्क

- **राजनीतिक वित्त-पोषण में अपारदर्शिता का समावेश:** सामान्य नागरिक यह जानने में सक्षम नहीं हैं कि कौन व्यक्ति किस राजनीतिक दल को कितना चंदा दे रहा है? साथ ही बॉण्ड राजनीतिक दानदाताओं की अनामिकता में भी वृद्धि करता है-
    - राजनीतिक दलों के लिए वित्त-पोषण के स्रोतों को घोषित करने हेतु नियमों को **जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 29C** में उल्लिखित किया गया है। 2017 से पूर्व, सभी पंजीकृत दलों के लिए इस अधिनियम के तहत 20,000 रुपये से अधिक के स्वीकृत सभी चंदों (डोनेशन) को घोषित करना अनिवार्य था। हालांकि, वित्त अधिनियम में किए गए एक संशोधन के द्वारा चुनावी बॉण्ड को इस धारा के दायरे से बाहर रखा गया है। इसलिए, दलों को संवीक्षा के लिए निर्वाचन आयोग को चुनावी बॉण्ड के रिकॉर्ड प्रस्तुत करने की आवश्यकता नहीं होगी।
    - इसके अतिरिक्त, राजनीतिक दल आयकर अधिनियम, 1961 की **धारा 13A** के तहत वार्षिक तौर पर अपना आयकर रिटर्न जमा करने के लिए विधिक रूप से बाध्य हैं। हालाँकि, चुनावी बॉण्ड को आयकर अधिनियम से भी छूट प्रदान की गई है। इस प्रकार, सभी दाताओं के नाम, पते आदि के रिकॉर्ड को बनाए रखने की आवश्यकता को समाप्त कर दिया गया है।
- **कॉर्पोरेट दुरुपयोग की संभावनाओं का बढ़ना:** उल्लेखनीय है कि अब एक कंपनी के लिए विगत तीन वर्षों के उसके निवल लाभ पर आरोपित 7.5% की उच्चतम सीमा को समाप्त कर दिया गया है। इसके कारण कॉर्पोरेट वित्तीयन में कई गुना वृद्धि हुई है, क्योंकि कोई भी कंपनी (घाटे में चल रही कंपनी भी) असीमित चंदा दे सकती है और इस पर अब कोई भी सीमा नहीं है। इस प्रकार, चुनावी बॉण्ड जैसे अस्पष्ट और अपारदर्शी साधनों के माध्यम से मुख्यतया राजनीतिक दलों हेतु वित्तीयन का अनुमार्गण करने के लिए अनैतिक तत्वों द्वारा कंपनियों का गठन किया जा सकता है।
- **सत्तारूढ़ दल का पक्ष-पोषण करती है:** सरकार के स्वामित्वाधीन बैंक होने के कारण भारतीय स्टेट बैंक (SBI) दानकर्ताओं की समग्र सूचना को संगृहीत करेगा। यह सत्तारूढ़ दल हेतु तो अनुकूल हो सकता है परन्तु दंड दिए जाने के भय के कारण विपक्षी दल को दान देने से कुछ संस्थाओं को निरुद्ध भी कर सकता है। उदाहरणार्थ- सूचना के अधिकार के माध्यम से प्राप्त किए गए आंकड़ों के अनुसार भारतीय स्टेट बैंक ने **2019 के केवल दो महीनों में 1,716 करोड़** रुपये की विशाल राशि के चुनावी बॉण्ड निर्गमित किए हैं तथा **वर्ष 2017-18 में** सत्तारूढ़ दल ने **विक्रय किए गए सभी चुनावी बॉण्ड्स का 94.6%** प्राप्त किया था।

चुनावी बॉण्ड योजना के विपक्ष में निर्वाचन आयोग के तर्क

- **यह योजना भारत निर्वाचन आयोग (ECI) को जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम के कुछ प्रावधानों के उल्लंघन को नियंत्रित करने की अनुमति प्रदान नहीं करती,** क्योंकि किसी राजनीतिक दल को एक चुनावी बॉण्ड के माध्यम से प्राप्त हुए चंदे को योगदान रिपोर्ट के तहत की जाने वाली रिपोर्टिंग के दायरे से बाहर रखा गया है। उदाहरणार्थ- जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 राजनीतिक दलों को सरकारी कंपनियों से अनुदान ग्रहण करने से प्रतिबंधित करता है।

VISION IAS

- **यह अनियंत्रित विदेशी फंडिंग की अनुमति देती है:** विदेशी अभिदाय (विनियमन) अधिनियम (Foreign Contribution Regulation Act: FCRA) में किया गया एक संशोधन राजनीतिक दलों को भारतीय कंपनियों में बहुलांश हिस्सेदारी (मेजॉरिटी स्टेक) वाली विदेशी कंपनियों से वित्त-पोषण प्राप्त करने की अनुमति देता है। इसके कारण विदेशी कंपनियां भारतीय नीतियों को व्यापक रूप से प्रभावित कर सकती हैं।

चुनावी बॉण्ड के पक्ष में सरकार के तर्क

- **यह राजनीतिक वित्त-पोषण में नकदी के प्रयोग को सीमित करता है:** जैसा कि पूर्व में व्यक्तियों/कॉर्पोरेट्स द्वारा वित्त-पोषण के अवैध साधनों का प्रयोग करते हुए राजनीतिक चंदे के रूप में बड़े पैमाने पर नगद में राशि दी जाती थी तथा ऐसे चंदे देने वाले व्यक्ति अज्ञात होते थे। इस प्रकार विगत प्रणाली पूर्णतया अपारदर्शी थी तथा पूर्ण अनामिकता सुनिश्चित करती थी।
- **निम्नलिखित युक्तियों के माध्यम से काले धन पर नियंत्रण:**
  - चुनावी बॉण्ड के निर्गमन हेतु भुगतान केवल डिमांड ड्राफ्ट या चेक के द्वारा अथवा इलेक्ट्रॉनिक समाशोधन प्रणाली या क्रेता के 'खाते' से प्रत्यक्ष निकासी (डेबिट) के माध्यम से स्वीकार किए जाते हैं। इस प्रकार इन बॉण्ड्स की खरीद हेतु काला धन प्रयुक्त नहीं हो सकता।
  - इन बॉण्ड्स के क्रेताओं के लिए KYC अनिवार्यताओं का अनुपालन करना आवश्यक है। साथ ही लाभार्थी राजनीतिक दल को प्राप्त धन की रसीद का प्रकटीकरण करना होता है और प्राप्त धन का लेखा प्रस्तुत करना भी अनिवार्य होता है।
  - बॉण्ड की वैधता हेतु समय सीमा निर्धारित की गई है ताकि बॉण्ड एक समानांतर मुद्रा न बन सके।
- **चन्दा देने वाले व्यक्ति को राजनीतिक उत्पीड़न के विरुद्ध सुरक्षा:** क्योंकि दानकर्ता की पहचान का गैर-प्रकटीकरण योजना का मूल उद्देश्य है। इसके अतिरिक्त क्रेता का रिकॉर्ड बैंकिंग चैनल में सदैव उपलब्ध रहेगा तथा प्रवर्तन अभिकरणों द्वारा आवश्यकतानुसार इसे कभी भी पुनर्प्राप्त किया जा सकता है।

- **पर्याप्त रक्षोपायों से युक्त:** जैसे कि बहुलांश हिस्सेदारी वाले किसी घरेलू कंपनी से बॉण्ड्स के माध्यम से प्राप्त चंदे उसके द्वारा KYC मानदंडों और फेमा (FEMA) दिशा-निर्देशों का अनुपालन किये जाने की दशा में ही अनुमत हैं।
- **कपटपूर्ण राजनीतिक दलों का अपवर्जन:** यह ऐसे दलों को बाहर कर देती है जो कर वंचना के आधार पर निर्मित किये गये हैं क्योंकि इस योजना में राजनीतिक दलों के लिए अर्हता हेतु एक कठोर उपबंध समाविष्ट किया गया है।

कुछ उपाय जो चुनावी बॉण्ड्स के पूरक हो सकते हैं-

- पूर्ण डिजिटल लेन-देनों को अपनाना।
- **कॉर्पोरेट-राजनीतिक गठजोड़ (नेक्सस) के विघटन हेतु** एक निश्चित सीमा से ऊपर के चंदे सार्वजनिक किए जाने चाहिए।

- राजनीतिक दलों को सूचना के अधिकार के दायरे के अधीन लाया जाना चाहिए।
- एक **राष्ट्रीय निर्वाचन निधि** की स्थापना जिसमें दानकर्ता योगदान करेंगे तथा विभिन्न दलों में निधियों का आबंटन किया जाएगा।

निष्कर्ष

चुनावी बॉण्ड योजना उचित दिशा में प्रारम्भ की गई एक प्रक्रिया है। हालाँकि, याचिकाकर्ताओं और ECI द्वारा उठाए गए मुद्दों का समाधान आवश्यक है ताकि योजना में निहित उद्देश्यों की पूर्ण प्राप्ति को सुनिश्चित किया जा सके।

5.5. चुनावों में सोशल मीडिया का स्व-विनियमन

(Self-Regulation of Social Media in Elections)

सुर्खियों में क्यों?

सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मों और इंटरनेट एंड मोबाइल एसोसिएशन ऑफ़ इंडिया (IAMAI) द्वारा निर्वाचन आयोग को **'आम चुनाव 2019 के लिए स्वैच्छिक आचार संहिता'** प्रस्तुत की गई है।

विवरण

- आम चुनाव 2019 के निर्वाचन प्रक्रिया की सत्यनिष्ठा को बनाये रखने के उद्देश्य से सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मों के स्वतंत्र, निष्पक्ष और नीतिपरक उपयोग की सुनिश्चितता हेतु एक "आचार संहिता" विकसित की गई है।
- इस स्वैच्छिक संहिता का उद्देश्य उन उपायों की पहचान करना है जिनके द्वारा निर्वाचन प्रक्रिया में प्रतिभागियों के विश्वास में वृद्धि की जा सके।
- यह 20 मार्च 2019 से क्रियान्वित होगी तथा 2019 के भारतीय आम चुनावों की निर्धारित अवधि तक जारी रहेगी।

चुनाव में गैर-विनियमित सोशल मीडिया के कारण उत्पन्न मुद्दे

- **फेक न्यूज का खतरा:** IAMAI की एक रिपोर्ट के अनुसार, सिर्फ 2.7% भारतीय फेसबुक, ट्विटर और व्हाट्सएप जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म पर प्राप्त होने वाली जानकारी को सही मानते हैं।
- **उपलब्ध जानकारी संबंधी असमानता:** समाचार के स्रोत और तथ्य जाँच तंत्र के संबंध में सीमित जानकारी के कारण उपलब्ध जानकारी के संबंध में असमानता विद्यमान है।
- **डेटा माइनिंग:** हाल ही में, कैम्ब्रिज एनालिटिका नामक एक कंपनी फेसबुक उपयोगकर्ताओं के डेटा चोरी और उनकी प्रोफाइल को अपने लाभ के अनुरूप प्रयोग करने संबंधी दोषपूर्ण कृत्य में कथित रूप से संलग्न थी।
- **हिंसा भड़कने की संभावना:** विशेषतः धार्मिक और जातीय समूहों के विरुद्ध, जैसे- मुजफ्फरनगर दंगे।

स्वैच्छिक आचार संहिता के तहत की गई प्रतिबद्धताएं

- **निर्वाचन विषयों से संबंधी जानकारी तक सुगम पहुँच प्रदान करना:** निर्वाचन विधियों के विषय में जागरूकता उत्पन्न करने हेतु स्वेच्छा से जानकारी, शिक्षा और संचार संबंधी अभियान संचालित कर निर्वाचन विषयों से संबंधी जानकारी तक सुगम पहुँच प्रदान करना। ये नोडल अधिकारियों को भारत निर्वाचन आयोग (ECI) में अपने उत्पाद/सेवाओं के विषय में भी प्रशिक्षण देंगे।
- **रिपोर्टिंग तंत्र:** आम चुनावों की अवधि के दौरान नियमों के किसी भी उल्लंघन के संबंध में कार्य करने हेतु समर्पित व्यक्तियों/टीमों को नियुक्त कर एक उपयुक्त रिपोर्टिंग तंत्र की व्यवस्था करना।
- **निर्दिष्ट समय में शिकायतों पर कार्रवाई करना:** एक अधिसूचना तंत्र विकसित किया गया है जिसके द्वारा ECI, जन प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 126 के उल्लंघन को अधिसूचित कर सकता है। सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मों द्वारा इन वैध कानूनी अनुरोधों को 3 घंटे के भीतर स्वीकृत किया जायेगा (सिन्हा समिति की अनुशंसाओं के अनुसार)।
- **राजनीतिक विज्ञापनों का विनियमन:** राजनीतिक प्रतिभागियों के लिए ECI और/या ECI की मीडिया प्रमाणन एवं अनुवीक्षण समिति (MCMC) द्वारा जारी किए गए प्रमाण पत्र को प्रस्तुत करना अनिवार्य बनाया गया है। इसके अतिरिक्त, सोशल मीडिया प्लेटफॉर्मों द्वारा पेड राजनीतिक विज्ञापनों में पारदर्शिता लाने हेतु प्रतिबद्धता व्यक्त की गई है।
- **की गई कार्यवाही के विषय में सूचित करना:** उनके संबंधित प्लेटफ़ॉर्म के दुरुपयोग को रोकने हेतु की गई कार्यवाही के विषय में अद्यतन सूचना प्रदान करना।

उमेश सिन्हा समिति की अनुशंसाएं

जन प्रतिनिधित्व अधिनियम (RPA), 1951 की धारा 126 की समीक्षा पर प्रस्तुत रिपोर्ट

- RPA की **धारा 126** साइलेंट पीरियड (silent period) के दौरान टीवी व अन्य इलेक्ट्रॉनिक मीडिया पर विज्ञापन और प्रचार पर

VISION IAS

प्रतिबंध आरोपित करती है। साइलेंट पीरियड मतदान समाप्त होने से 48 घंटे पूर्व की अवधि को संदर्भित करती है, जिसके दौरान चुनाव प्रचार प्रतिबंधित होता है।

- **इस प्रावधान का विस्तार**, प्रिंट और सोशल मीडिया के साथ-साथ, प्रिंट मीडिया के इंटरनेट और ऑनलाइन संस्करण पर भी किया गया है।
- **चुनावी कानून का उल्लंघन करने वाली सामग्री को चिन्हित करने संबंधी प्रावधान:** इसके तहत सोशल मीडिया साइट्स इसे शीघ्रातिशीघ्र प्रतिबंधित कर सकती हैं।

भारतीय चुनावों में सोशल मीडिया का महत्व

- **मतदाता भागीदारी में वृद्धि हेतु ECI को सहायता:** ऑनलाइन मतदाता पंजीकरण और पारदर्शिता अभियानों के माध्यम से।
- **राजनीतिक दलों की मतदाता तक पहुँच में वृद्धि:** राजनीतिक दल अपने उम्मीदवारों का प्रचार करने, उनके सामाजिक कार्यों को प्रसारित करने, उनके एजेंडे को प्रकट करने, उनकी रैलियों को प्रोत्साहन देने आदि के लिए सोशल मीडिया का उपयोग करते हैं।
- **प्रतिस्पर्धा हेतु समान अवसर प्रदान करना:** कम लागत और व्यापक पहुंच के कारण यह नए राजनीतिक दलों को स्थापित राजनीतिक दलों की संगठनात्मक सुदृढ़ता का समानता के आधार पर सामना करने में सहायता प्रदान करता है, जैसे- दिल्ली में आम आदमी पार्टी का उद्भव एवं विकास।
- **दलों द्वारा उपेक्षित मुद्दों के संबंध में जागरूकता बढ़ाने में सहायता:** जैसे- पर्यावरण संरक्षण, चुनाव सुधार आदि।

निष्कर्ष

- 2014 के चुनावों के पश्चात् हुए विभिन्न सर्वेक्षणों और रिपोर्टों के अनुसार, सोशल मीडिया पर किए जाने वाले चुनावी राजनीतिक अभियान में व्यय हेतु कुल बजट का 2-5% निर्धारित किया गया था। इस प्रकार, सोशल मीडिया की भूमिका और इसका विनियमन महत्वपूर्ण है।
- एक लोकतंत्र में प्रत्येक हितधारक की भूमिका सूचना प्रसारित करने के साथ-साथ गलत एवं भ्रामक सूचना पर अंकुश लगाने की भी होनी चाहिए। उपयोगकर्ताओं पर सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म के उचित उपयोग का उत्तरदायित्व भी आरोपित किया जाना चाहिए।
- इसके अतिरिक्त, यह महत्वपूर्ण है कि सोशल मीडिया की पहुंच, इससे संबंधित ज्ञान एवं संबंधित जागरूकता निचले स्तर और सीमांत वर्ग तक हो, जिससे सोशल मीडिया की चुनावों को सकारात्मक रूप में प्रभावित करने संबंधी क्षमता में सुधार किया जा सके।

5.6. भारत में चुनावों की बदलती प्रकृति

(Changing Nature of Elections in India)

सुर्ख़ियों में क्यों?

भारतीय संसद के हालिया चुनावों ने इस बहस को जन्म दिया है कि भारतीय चुनाव अधिकाधिक व्यक्तित्व केंद्रित (personality centric) होते जा रहे हैं।

किस प्रकार का बदलाव हो रहा है?

- **चुनाव प्रचार** अत्यधिक व्यक्तित्व आधारित होता जा रहा है। राजनीतिक दलों द्वारा स्थानीय मुद्दों और स्थानीय प्रतिनिधियों के बजाय व्यक्तिगत नेतृत्व पर ध्यान केंद्रित किया जा रहा है।
- **नरेटिव कैप्चर (Narrative capture)** जहां राष्ट्रीय/स्थानीय मुद्दों की बजाए "कृत्रिम मुद्दों" एवं जनता की वास्तविक चिंताओं से ध्यान को हटाने के द्वारा चुनाव परिणाम निर्धारित होते हैं।
- **मतदाताओं के दृष्टिकोण में परिवर्तन** क्योंकि अब राष्ट्रीय नेतृत्व का मुद्दा मतदाता निर्णयों के निर्धारण में केंद्रीय भूमिका निभाता है। मतदाता इस संबंध में तो सजग होते हैं कि उन्हें किस व्यक्ति का चयन करना है, परन्तु आवश्यक नहीं कि वे इस सन्दर्भ में भी सजग हों कि उन्हें किन राजनीतिक दलों एवं नीतियों का चयन करना है।
- **कमजोर राजनीतिक संस्कृति** और अक्षम विपक्ष भी वास्तविक सार्वजनिक बहस के दायरे को सीमित करते हैं।

यह बदलाव चिंता का विषय क्यों है?

- **यह संसदीय प्रणाली,** जहाँ मतदाताओं द्वारा स्थानीय मुद्दों के आधार पर विधि निर्माण हेतु स्थानीय प्रतिनिधियों को चुना जाता है, **को क्षीण बना रहा है।**
- **शक्तियों के वास्तविक पृथक्करण का अभाव:** विधायिका का कार्यपालिका की जवाबदेही पर वास्तविक नियंत्रण स्थापित नहीं हो पाता है क्योंकि प्रत्याशी अपने नेता के आधार पर चुनाव में विजयी होते हैं। परिणामस्वरूप विधायिका की शक्ति क्षीण होती है। संसद में होने वाले निरंतर व्यवधान इस समस्या को और अधिक बढ़ाते हैं।

VISION IAS

- **दलबदलू उम्मीदवार (दल परिवर्तन करने वाले व्यक्ति),** जिनका पहले निर्वाचित होना कठिन होता था, अब अपने नेता के व्यक्तित्व के प्रभाव के कारण सुगमता से विजय प्राप्त कर लेते हैं। इससे राजनीति में भ्रष्टाचार व अपराधीकरण बढ़ता है तथा नैतिक मूल्यों का पतन होता है।
- **लोकलुभावनवाद और व्यक्ति आधारित राजनीति** लोकतंत्र की मूल भावना को कमजोर बनाती है और महत्वपूर्ण बहस के अवसरों को कम करती है।

आगे की राह

- चुनावी प्रक्रियाओं और पारदर्शी चुनावी वित्तपोषण जैसी **प्रक्रियाओं में सुधार** करके भारतीय राजनीतिक प्रणाली की कमियों का समाधान किया जा सकता है।
- **अंत:दलीय (intra party) लोकतंत्र** जैसे प्रणालीगत सुधार दलों के भीतर टॉप-डाउन निर्णय निर्माण (जहाँ शीर्ष स्तर पर एक व्यक्ति या कुछ व्यक्तियों द्वारा निर्णय लिए जाते हैं) में कमी करते हैं और लोकतांत्रिक परिवेश का सृजन करते हैं।
- लोकतंत्र के एक स्तंभ के रूप में **मीडिया की भूमिका** पक्षपाती रिपोर्टिंग की बजाय वास्तविक सार्वजनिक मुद्दों पर मतदाताओं को शिक्षित करना है। साथ ही, प्रायः किसी सुदृढ़ नेता के लिए आकर्षण उत्पन्न करने हेतु गलत सूचना का प्रसार करने वाले **सोशल मीडिया** जैसे प्लेटफॉर्मों के उपयोग की बेहतर निगरानी की जानी चाहिए।

5.7. परिसीमन से संबंधित मुद्दे

(Issues in Delimitation)

सुर्ख़ियों में क्यों?

आम चुनाव 2019 के आलोक में, भारतीय लोकतंत्र में असमान प्रतिनिधित्व के मुद्दे पर पुनः बहस प्रारंभ हो गई है। अध्ययनों के अनुसार अन्य लोकतांत्रिक देशों की तुलना में भारत में **इसकी जनसंख्या के अनुपात में सांसदों की संख्या सबसे कम है।**

परिसीमन आयोग (Delimitation Commission)

- परिसीमन के माध्यम से **संसद या विधानसभा के निर्वाचन क्षेत्रों की सीमाओं के पुनर्निर्धारण** को इस प्रकार से सुनिश्चित करने का प्रयास किया जाता है कि यथासंभव प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र में मतदाताओं की संख्या एक समान हो।
- समान जनसंख्या वाले निर्वाचन क्षेत्र मतदाताओं को विधानमंडल में समान मूल्य या भारांश में मतदान हेतु सक्षम बनाते हैं।
- यह एक उच्च प्राधिकार प्राप्त निकाय है, जिसके आदेशों को विधिक अधिकारिता प्राप्त है और इन आदेशों को **किसी भी न्यायालय के समक्ष प्रश्नगत नहीं किया जा सकता।** ये आदेश भारत के **राष्ट्रपति** द्वारा निर्दिष्ट तिथि से लागू होते हैं।
- ये आदेश लोकसभा और संबंधित राज्य विधानसभाओं के समक्ष प्रस्तुत किए जाते हैं। हालांकि इनमें **संशोधनों की अनुमति नहीं होती है।**
- अब तक परिसीमन आयोग अधिनियम 1952, 1963, 1973 और 2002 द्वारा **वर्ष 1952, 1962, 1972 और 2002** के तहत **चार परिसीमन आयोगों** की स्थापना की जा चुकी है।
- वर्ष 2002 में परिसीमन आयोग ने, प्रत्येक राज्य को **आवंटित सीटों की संख्या में परिवर्तन किए बिना,** वर्ष 2001 की जनगणना के आधार पर राज्यों में क्षेत्रीय निर्वाचन क्षेत्रों के **पुनः समायोजन और युक्तिकरण** का कार्य संपन्न किया।

पृष्ठभूमि

- भारत के संविधान के **अनुच्छेद 81** में वर्णित किया गया है कि प्रत्येक राज्य और केंद्र शासित प्रदेश को लोकसभा में सीटों का आवंटन ऐसी रीति से किया जाएगा कि **जनसंख्या एवं सीटों का अनुपात सभी राज्यों में यथासंभव एकसमान हो।**
- **अनुच्छेद 82** में यह प्रावधान किया गया है कि **प्रत्येक जनगणना के पश्चात्** संसदीय निर्वाचन क्षेत्रों का परिसीमन किया जाएगा। यह कार्य **परिसीमन आयोग अधिनियम** के प्रावधानों के तहत भारत सरकार द्वारा स्थापित **परिसीमन आयोग** द्वारा किया जाता है। वर्ष 1976 तक परिसीमन प्रत्येक जनगणना के पश्चात् किया जाता था।
- हालांकि, सरकार ने लोकसभा और राज्य विधानसभाओं में आवंटित सीटों की संख्या को वर्ष **1976 में 42वें संविधान संशोधन (1976)** के माध्यम से 2001 की जनगणना तक स्थिर कर दिया था। परन्तु, **84वें संविधान संशोधन (2002)** द्वारा इसे विस्तारित कर **वर्ष 2026** तक स्थिर कर दिया गया है।
- इस कार्य का उद्देश्य देश में **परिवार नियोजन और जनसंख्या स्थिरीकरण** को बढ़ावा देना था। इस प्रकार, राज्यों को लोकसभा में उनके **राजनीतिक प्रतिनिधित्व** में परिवर्तन की चिंता किए बिना परिवार नियोजन कार्यक्रमों हेतु प्रयास करने के लिए प्रोत्साहन प्रदान किया गया था।

VISION IAS

* इसके परिणामस्वरूप, परिसीमन आयोग लोकसभा या विधानसभाओं की कुल सीटों में वृद्धि नहीं कर सका। यह 2026 के पश्चात् ही किया जा सकेगा।
* इसके कारण निर्वाचन क्षेत्रों के आकार (सबसे बड़े निर्वाचन क्षेत्र में 30 लाख से अधिक मतदाता, जबकि सबसे छोटे में 50 हज़ार से कम) में व्यापक विसंगतियां उत्पन्न हुई हैं।

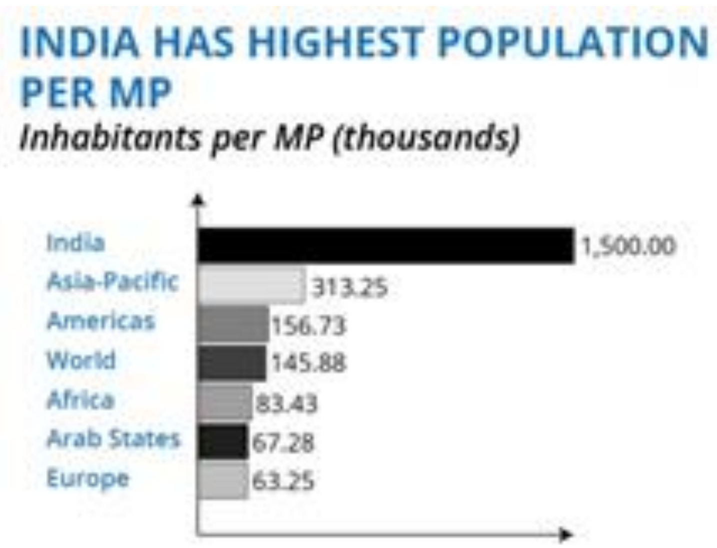

असमान प्रतिनिधित्व के कारण उत्पन्न मुद्दे

* **लोकतंत्र में असमान आवंटन -** वर्तमान परिसीमन (30 वर्षों के पश्चात्), वर्ष 2001 की जनगणना के आधार पर किया गया था। इस अवधि के दौरान जनसंख्या में लगभग 87% की वृद्धि हुई है और देश में निर्वाचन क्षेत्रों में जनसंख्या वृद्धि के अनुरूप परिवर्तन नहीं किए जाने के कारण इनके आकार एवं स्वरूप में असमानता प्रकट हुई है।
* **"एक नागरिक एक मत" के सिद्धांत का उल्लंघन-** उदाहरणार्थ; राजस्थान में एक सांसद 30 लाख से अधिक लोगों का प्रतिनिधित्व करता है, जबकि तमिलनाडु या केरल का सांसद 18 लाख से कम लोगों का प्रतिनिधित्व करता है। इसका अर्थ है कि तमिलनाडु एवं केरल के मतदाताओं का संसद में प्रतिनिधित्व (मत का भारांश) राजस्थान के मतदाताओं से अधिक है।
* **निर्वाचन क्षेत्रों में असमान प्रतिनिधित्व-** वर्ष 2014 में, पांच सबसे छोटे निर्वाचन क्षेत्रों में लगभग 8 लाख मतदाता थे, जबकि पाँच सबसे बड़े निर्वाचन क्षेत्रों में लगभग 1.2 करोड़ मतदाता थे। पाँच सबसे बड़े निर्वाचन क्षेत्रों की यह संख्या, सबसे छोटे पाँच निर्वाचन क्षेत्रों की तुलना में 15 गुना अधिक है।
* **जन-प्रतिनिधियों पर बढ़ता भार-** वर्तमान समय में एक सांसद वर्ष 1951-52 के प्रथम आम चुनाव में निर्वाचित एक सांसद की अपेक्षा चार गुना अधिक मतदाताओं का प्रतिनिधित्व करता है।
* **प्रतिनिधित्व संकट-** यदि प्रत्याशी पर्याप्त मतदाताओं तक संपर्क स्थापित करने में सक्षम नहीं होते हैं तो मतदाताओं की मूल समस्याओं के समाधान एवं उन्हें प्रतिनिधित्व प्रदान करने के संदर्भ में चुनाव के महत्व में कमी होती है। इसका परिणाम चुनावों के दौरान मतदान प्रतिशत या चुनाव में जन-सामान्य की भागीदारी में कमी के रूप में परिलक्षित हुआ है।
* **परिवर्तित पहलुओं का समावेशन नहीं-** वर्ष 1988 में **61वें संशोधन अधिनियम** के द्वारा मतदान की **आयु को 21 वर्ष से घटाकर 18 वर्ष कर** दी गई थी। इससे प्रत्येक निर्वाचन क्षेत्र के मतदाताओं की संख्या में पर्याप्त वृद्धि हुई। इसके अतिरिक्त, शहरी या औद्योगिक क्षेत्रों में प्रवासन ने इस वृद्धि की दिशा और तीव्रता में विषमता उत्पन्न की है।

IF POPULATION DECIDED LS SEATS THIS IS HOW STATES WOULD BE REPRESENTED...

State	Current Seats	2019 Estimate	2071 Estimate	Gain/ Loss 2071
Uttar Pradesh	80	93	109	29
Bihar	40	44	58	18
Rajasthan	25	31	38	13
Madhya Pradesh	29	33	35	6
Haryana	10	12	12	2
Odisha	21	18	15	-6
West Bengal	42	40	34	-8
Kerala	20	15	12	-8
Andhra+ Telangana	42	37	31	-11
Tamil Nadu	39	29	23	-16

▪Gain ▪Loss

* **लोगों के मध्य विभाजन हेतु उत्तरदायी-** एक क्षेत्र द्वारा दूसरे क्षेत्र को नियंत्रित करने या सांस्कृतिक और सामाजिक आकांक्षाओं की अनदेखी करने की उसकी धारणा से जन आंदोलन उत्पन्न हो सकते हैं। इसके अतिरिक्त, यह राजनीतिक दलों के लिए राज्यों का **राजनीतिक रूप से महत्वपूर्ण बनाम महत्वहीन राज्यों** में विभाजन करता है। साथ ही, यह **छोटे राज्यों** की मांग को भी प्रोत्साहित करता है।

परिसीमन की सीमाओं को समाप्त करने के निहितार्थ

- **परिवार नियोजन के प्रभावी कार्यान्वयन संबंधी चिंताएं बनी रहेंगी-** राज्य ऐसे उपायों के प्रति आशंकित रहेंगे और परिवार नियोजन के उपायों को प्रभावी रूप से कार्यान्वित नहीं कर पाएंगे क्योंकि कम जनसंख्या के कारण संसद में उनकी सीटें भी कम हो सकती हैं।
- **सदन के पीठासीन अधिकारियों का नियंत्रण-** पीठासीन अधिकारी के लिए सदन की कार्यवाही का संचालन करना अत्यंत कठिन होता है। उसके निर्देशों और निर्णयों का उचित सम्मान न किया जाना तथा कार्यवाहियों में व्यवधान के परिणामस्वरूप इस समस्या में और अधिक वृद्धि हो जाती है। सांसदों की संख्या में अकस्मात वृद्धि होने से यह समस्या और अधिक गंभीर हो जाएगी।
- **सदन की कार्यवाही-** इससे तनावपूर्ण स्थिति उत्पन्न होगी क्योंकि शून्य काल, प्रश्नकाल आदि की एक घंटे की अवधि में बढ़ी हुई सदस्य संख्या के लिए बहुत कम समय आवंटित किया जाना संभव होगा।

आगे की राह

- परिसीमन आयोग 2002 के अध्यक्ष ने अनुशंसा की है कि परिसीमन प्रत्येक जनगणना के पश्चात् किया जाना चाहिए ताकि परिवर्तन अधिक व्यापक न हो पाए और प्रत्येक मतदाता के मत का मूल्य यथासंभव समान बना रहे।
- संभावित समस्याओं से निपटने के लिए सकारात्मक विमर्श और आम सहमति की आवश्यकता है।

5.8. वोट-बैंक की राजनीति

(Vote-Bank Politics)

सुर्खियों में क्यों?

हाल ही में, चुनावी अभियान के दौरान वोट बैंक की राजनीति का उपयोग करने पर विभिन्न राजनीतिक दलों की आलोचना की गई है।

पृष्ठभूमि

- 'वोट-बैंक की राजनीति' शब्द का प्रथम प्रयोग **1955** में प्रसिद्ध समाजशास्त्री **एम. एन. श्रीनिवास** द्वारा एक शोध पत्र में किया गया था। उन्होंने इसका उपयोग एक **संरक्षक (राजनीतिक वर्ग) द्वारा अधीन जनता पर स्थापित किए जाने वाले राजनीतिक प्रभाव** के संदर्भ में किया था।
- परंतु समकालीन समय में, इस शब्द का अर्थ व्यापक हो गया है और वर्तमान में यह जाति, वर्ग, संप्रदाय, भाषा, धर्म, क्षेत्र आदि के आधार पर मतदान को भी समाहित करता है। यह समाज में मतदाताओं के एक समूह को संदर्भित करता है जो सामान्यतः लोकतांत्रिक चुनावों में एक दल/ प्रत्याशी के पक्ष में **'एक समूह के रूप में'** (en masse) मतदान करता है।
- यह लोगों के उस **मतदान संबंधी व्यवहार** को दर्शाता है जहाँ वे अपनी **पहचान** के आधार पर मतदान करते हैं और किस प्रकार राजनीतिक दल इस आधार पर मतदाताओं को प्रभावित करते हैं।

वोट बैंक की राजनीति का नकारात्मक पक्ष

- **एक नागरिक की स्वतंत्र पहचान को कम करता है:** कोई भी स्वाभिमानी नागरिक यह नहीं चाहता है कि उसे केवल एक सामुदायिक रूढ़ीवाद आधारित मतदाता के रूप में वर्णित किया जाए।
- **एक बाजार उपकरण के रूप में उपयोग:** एक राजनीतिक दल या नेता, जनता को केवल ऐसे मतदाता के रूप में महत्व प्रदान करते हैं, जिनका प्रयोग पांच वर्ष में एक बार, चुनाव के दौरान प्रत्याशियों के निर्वाचन, पुनर्निर्वाचन या पराजित करने के लिए एक उपकरण के रूप में किया जाता है।
- **प्रदर्शन के आधार पर मतदान की उपेक्षा करना:** जैसे कि वायदों, अवसंरचना, निर्धनता उन्मूलन, निर्वाचन क्षेत्र के लोगों की बुनियादी सुविधाओं तक पहुंच सुनिश्चित करने के आधार आदि की उपेक्षा करना।
- **प्रत्याशियों की जीत की क्षमता की ओर दलों का आकर्षण:** राजनीतिक दलों द्वारा स्थानीय स्तर पर प्रभावपूर्ण व्यक्तियों से उनकी जाति/समुदाय के मतदाताओं को जुटाने के लिए संपर्क किया जाता है। इससे राजनीति के अपराधीकरण में भी वृद्धि हुई है।
- **मतदाता तुष्टिकरण:** इसके तहत एक दल द्वारा मुफ्त उपहारों एवं अनुचित साधनों का उपयोग करके निश्चित वर्ग का तुष्टिकरण किया जाता है तथा अन्य राजनीतिक दलों हेतु प्रति-तुष्टिकरण करने के चक्र का सृजन किया जाता है।
- **नकारात्मक अर्थशास्त्र को प्रोत्साहित कर सकता है:** ऋण माफी, मुफ्त उपहार, आय समर्थन योजनाओं जैसे वायदों के कारण सरकारी राजस्व के वित्तीय संसाधनों पर अत्यधिक भार आरोपित हो सकता है।
- **राष्ट्र से संबंधित दीर्घकालिक दृष्टिकोण को बाधित करता है:** राजनीतिक दल तत्काल चुनाव जीतने के लिए बड़े-बड़े वायदे करते हैं। यह चुनावी चर्चा को देश के लिए रक्षा खरीद, राष्ट्रीय सुरक्षा रणनीति, चुनाव सुधार, पर्यावरण संरक्षण जैसे दीर्घकालिक लक्ष्यों पर ध्यान केंद्रित करने की अनुमति प्रदान नहीं करता।
- **सामाजिक विभाजन उत्पन्न करता है:** वर्ग, जाति, पंथ, वंश, धर्म, क्षेत्र, भाषा आदि पर आधारित होने के कारण समाज में गुटबंदी को प्रोत्साहित करता है।

VISION IAS

वोट बैंक की राजनीति का सकारात्मक पक्ष

- **व्यक्तिगत और सामूहिक सौदेबाजी क्षमता में वृद्धि:** जब जाति, संप्रदाय, धर्म या भाषा के आधार पर गठित किसी विशेष समूह को एक अथवा अधिक राजनीतिक दलों द्वारा मान्यता प्रदान कर दी जाती है, तो उनकी मांगों और आकांक्षाओं की पूर्ति की संभावना उस समूह या समुदाय की मांगों और आकांक्षाओं की तुलना में कहीं अधिक हो जाती है जिसे वोट बैंक के रूप में किसी दल द्वारा विशेष महत्व नहीं दिया जाता है, जैसे- विकलांग, महिलाएं आदि।
- **विविधतापूर्ण आवश्यकताओं की पूर्ति में सहायक:** विशेष रूप से भारत जैसे देश में, जहां समान नीतियां जेंडर बजटिंग जैसे महत्वपूर्ण मुद्दों की उपेक्षा कर सकती हैं। जेंडर बजटिंग द्वारा महिलाओं को संसाधनों के एक विशेष भाग का आबंटन सुनिश्चित किया गया है जिसे वे सामाजिक अधीनता और आर्थिक निर्भरता के कारण प्राप्त करने में सक्षम नहीं थी।
- **विधायिका में प्रभावी प्रतिनिधित्व:** समाज के सभी वर्ग, जैसे- अल्पसंख्यक, ट्रांसजेंडर, किसान, व्यापारी आदि विधि निर्माण प्रक्रिया में शामिल होते हैं, जो किसी देश में निर्मित विधियों की समग्र प्रकृति को प्रदर्शित करता है।
- **संवैधानिक प्रावधानों के संरक्षण में सहायक:** जैसे अस्पृश्यता उन्मूलन, हाथ से मैला उठाने की प्रथा का उन्मूलन। सत्तारूढ़ दल और विधायिका पर उच्च जाति/वर्ग/कुलीन वर्ग का वर्चस्व होने की स्थिति में (जो समाज के निम्न वर्ग/जाति की अवहेलना करता है) प्रशासन द्वारा संवैधानिक सुरक्षात्मक उपायों की उपेक्षा की जा सकती है। यह दबाव सुनिश्चित करता है कि लोगों के अधिकारों में कोई कमी न की जाए।
- **संसाधनों के बेहतर वितरण में सहायक:** कल्याणकारी आर्थिक उपायों, जैसे- सब्सिडी, ब्याज में छूट आदि के द्वारा समाज के निर्धन वर्गों को निर्धनता रेखा से ऊपर उठाने में सहायता करती है।
- **राजनीतिक दलों को अधिक से अधिक समावेशी बनाता है:** क्योंकि राजनीतिक दल प्रत्याशियों का चयन ऐसी रीति से करते हैं जिससे राज्य में उपलब्ध सभी वोट बैंकों को शामिल किया जा सके। राजनीतिक दल एक समावेशी छवि को चित्रित करने का प्रयास करते हैं।

आगे की राह

- वोट-बैंक की राजनीति उस स्थिति में विकृत हो जाती है, जब समाज को ध्रुवीकृत करने के लिए एक समूह या समूहों की मांगों में स्वार्थपूर्ण परिवर्तन करने के लिए इसका दुरुपयोग किया जाता है, जिससे अव्यवस्था उत्पन्न होती है। घृणित दुरुपयोग की इसकी क्षमता के कारण वोट-बैंक की राजनीति को नागरिकों द्वारा प्रयुक्त एक उपकरण के रूप में देखा जाना चाहिए, न कि राजनीतिक वर्ग द्वारा।
- वोट-बैंक को मुद्दों के आधार पर गठित किया जाना चाहिए और चुनाव में चर्चा के विषयों का निर्धारण जनता द्वारा किया जाना चाहिए।
- नागरिकों द्वारा नए मुद्दे, जैसे- पर्यावरण संरक्षण, चुनाव सुधार, राजनीति के अपराधीकरण के विरुद्ध आंदोलन आदि पर चर्चा की जानी चाहिए। यह एक स्वस्थ लोकतांत्रिक परम्परा का मार्ग प्रशस्त कर सकती है।

5.9. भारतीय राजनीति का नारीकरण (महिलाओं की बढ़ती भागीदारी)

(Feminisation of Indian Politics)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, संयुक्त राष्ट्र द्वारा किए गए एक अध्ययन ने **भारत की राजनीति में महिलाओं की बढ़ती भागीदारी के महत्वपूर्ण आर्थिक-सामाजिक और राजनीतिक प्रभावों को उजागर** किया।

राजनीति में महिलाओं की आवश्यकता

- **संवैधानिक और अंतरराष्ट्रीय अधिदेश:** भारतीय संविधान की प्रस्तावना में सभी नागरिकों के लिए सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक **न्याय**' के साथ-साथ 'प्रतिष्ठा एवं अवसर की **समानता**' सुनिश्चित की गई है।
    - चुनावी प्रतिस्पर्द्धा में महिलाओं की बढ़ती सक्रिय भागीदारी किसी भी देश में लोकतंत्र की प्रभावी वृद्धि का एक प्रमाणिक संकेत है।
    - इसके अतिरिक्त, भारत द्वारा संयुक्त राष्ट्र महासभा द्वारा 1979 में अपनाई गई **इंटरनेशनल कन्वेंशन ऑन द एलिमिनेशन ऑफ ऑल फॉर्म ऑफ डिस्क्रिमिनेशन अगेंस्ट वीमेन (CEDAW)** की **अभिपुष्टि** भी की गई है, जो महिलाओं की राजनीतिक भागीदारी के अधिकार को निर्दिष्ट करता है।

VISION IAS

भारतीय राजनीति में महिलाओं की भूमिका

राजनीति का नारीकरण एक व्यापक पद है, जिसमें देश की राजनीति में महिलाओं की भागीदारी (राजनीतिक निकायों में उनके प्रतिनिधित्व सहित) के विभिन्न रूपों और पहलों को शामिल किया जाता है। राजनीति के नारीकरण के विभिन्न स्तरों में निम्नलिखित महिलाएं शामिल हैं-

- **सांसद/विधायक:** इंटर-पार्लियामेंट्री यूनियन और UN वीमेन द्वारा प्रकाशित एक रिपोर्ट 'वीमेन इन पॉलिटिक्स 2017 मैप' के अनुसार भारत, कार्यकारिणी सरकार और संसद में महिलाओं के प्रतिनिधित्व के मामले में विश्व में 148वें स्थान पर था।
- राजनीतिक दल के उम्मीदवार/दल के पदाधिकारी
- राजनीतिक दलों के प्रचारक/सदस्य - लोकसभा चुनावों में महिलाओं की भागीदारी से **चुनाव अभियानों/प्रचारों में महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि होती है।**
- **मतदाता-** मतदाता के रूप में मतदान प्रक्रिया में महिलाओं की भागीदारी 1962 में 46.6% से बढ़कर 2014 में लगभग 65.6% हो गई है।

- **राजनीति में भ्रष्ट आचरण की रोकथाम:**
  - **आपराधिक पृष्ठभूमि:** चुनाव लड़ने वाले पुरुष विधायकों के विचाराधीन आपराधिक मामलों की संख्या महिला विधायकों की तुलना में लगभग तीन गुनी होती है। यह कारक किसी निर्वाचन क्षेत्रों में चुनाव लड़ने वाले पुरुष और महिला के मध्य बढ़ते अंतर के एक चौथाई भाग का वर्णन करता है।
  - **भ्रष्टाचार की प्रवृत्ति :** भ्रष्टाचार के संदर्भ में, कार्यकाल के दौरान प्रति वर्ष महिलाओं द्वारा अर्जित परिसंपत्ति, पुरुषों द्वारा अर्जित संपत्ति की अपेक्षा 10 प्रतिशत कम है।
- **आर्थिक पहलू:** महिलाओं की भागीदारी में वृद्धि से न केवल महिलाओं और **बच्चों से संबंधित मुद्दों को नीति निर्धारण** में बेहतर रूप से प्रस्तुत करने में सहायता मिलेगी, बल्कि इससे **आर्थिक विकास में भी अपेक्षाकृत अधिक वृद्धि हो सकती है।**
  - प्रधानमंत्री ग्राम सड़क योजना के क्रियान्वयन में विधायकों के प्रदर्शन के आधार पर अवसंरचना विकास पर किए गए अध्ययन के अनुसार, महिलाएं अपने निर्वाचन क्षेत्र में विकासात्मक परियोजनाओं को पूरा करने के मामले में उच्च स्तरीय क्षमता का प्रदर्शन करती हैं।
  - सभी नागरिकों के मध्य अवसरों की समानता के साथ प्रगतिशील समाज के निर्माण हेतु **महिलाओं से संबंधित संस्थाओं या एजेंसियों को सुदृढ़** करने हेतु समाज में निर्णय-निर्माण प्रक्रिया में महिलाओं की भूमिकाओं के महत्व को स्वीकार करना महत्वपूर्ण है।

राजनीति में महिलाओं की भागीदारी को सीमित करने वाले कारक

- **सामाजिक-संरचनात्मक:** इसके परिणामस्वरूप भागीदारी लेने वाली उपलब्ध महिलाओं की संख्या में कमी हो जाती है। घरेलू जिम्मेदारियां, महिलाओं की भूमिका को लेकर समाज में प्रचलित सांस्कृतिक दृष्टिकोण और परिवार से समर्थन का अभाव राजनीतिक प्रक्रिया में भाग लेने वाली योग्य महिलाओं की संख्या को सीमित करता है। इसके अतिरिक्त, शिक्षा की सीमित पहुंच और धन की कमी महिलाओं की राजनीतिक क्षेत्र में भागीदारी को हतोत्साहित करते हैं।
- **राजनीतिक:** यह महिलाओं के लिए राजनीतिक प्रणाली के खुलेपन पर बल देता है। राजनीतिक दल और चुनावी प्रणाली, जो अपने हितों को बढ़ावा देने के लिए पुरुषों या अन्य समूहों की क्षमता में वृद्धि करते हैं या सीमित करते हैं, महिलाओं को समान संख्या में पहुंच प्रदान करने में महत्वपूर्ण कारक हो सकते हैं। उदाहरण के लिए, महिलाओं के प्रतिनिधित्व में वृद्धि करने हेतु आनुपातिक प्रतिनिधित्व प्रणाली को उपयुक्त पाया गया है।

राजनीति में महिलाओं की भागीदारी को बढ़ाने हेतु रणनीतियाँ:

- **राजनीति में महिलाओं को आरक्षण:** महिलाओं के लिए विधायी निकायों में सीटों के आरक्षण (33%) प्रदान करने संबंधी प्रस्ताव प्रस्तुत किए गए हैं। पंचायती राज संस्थाओं (PRIs) में पहले ही इस प्रकार के कदम उठाए जा चुके हैं।
- **क्षमता निर्माण, लैंगिक प्रशिक्षण और जागरूकता में सुधार** किए जाने हेतु आवश्यक है। उदाहरण के लिए, **'नई रोशनी'** नामक एक नई योजना जिसने अल्पसंख्यक महिलाओं को सशक्त बनाकर उनके आत्मविश्वास में वृद्धि की है। इसमें उनके गाँव/इलाके में रहने वाले अन्य समुदायों की महिलायें भी शामिल हैं।

VISION IAS

- **इसके अतिरिक्त, शिक्षा तक उनकी पहुंच में सुधार करना तथा शैक्षिक स्तर पर लड़कियों और लड़कों दोनों में लैंगिक संवेदीकरण पर कार्य करना आवश्यक** है।

निष्कर्ष

हालांकि, महिलाओं की शिक्षा और आर्थिक एवं राजनीतिक सम्बद्धता तक पहुंच का अभाव प्रायः सांस्कृतिक, धार्मिक या पारंपरिक मानदंडों और मूल्यों से प्रभावित और बाधित होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि राजनैतिक प्रक्रियाओं में उनकी भागीदारी या प्रतिनिधित्व में वृद्धि करने से ही महिलाओं से संबंधित सभी समस्याओं का समाधान नहीं हो सकता है ,क्योंकि अधिकाँश समस्याओं के लिए संकुचित मानसिकता उत्तरदायी है। इसलिए, महिला सशक्तिकरण के लिए न केवल सामाजिक-राजनीतिक सुधारों और तकनीकी क्षमता के विकास की आवश्यकता है, बल्कि पुरुषों और महिलाओं को अपनी मानसिकता को भी परिवर्तित करने की आवश्यकता होती है।

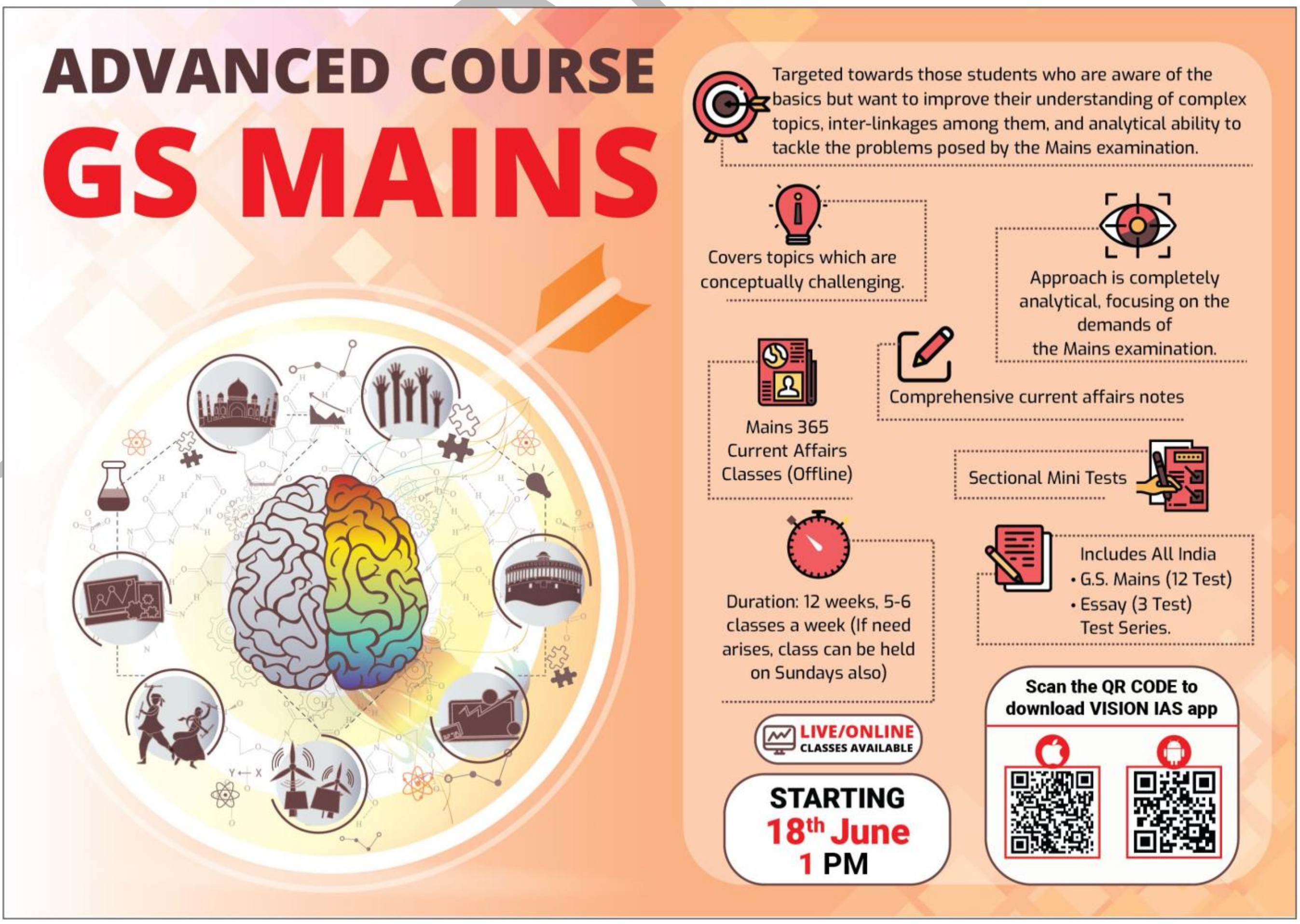

6. न्यायपालिका (Judiciary)

6.1. न्यायिक जवाबदेहिता

(Judicial Accountability)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में उच्चतम न्यायालय की एक पूर्व कर्मचारी द्वारा भारत के मुख्य न्यायाधीश (CJI) पर यौन उत्पीड़न का आरोप लगाया गया था। ज्ञातव्य है कि इस वाद ने **न्यायिक स्वतंत्रता और न्यायिक जवाबदेहिता** के मध्य एक वाद-विवाद को पुनर्प्रारंभ किया है।

पृष्ठभूमि

- भारतीय लोकतंत्र **'विधि के शासन'** के सिद्धांत के अनुसार संचालित होता है, जिसका तात्पर्य यह है कि **'कोई भी क़ानून से ऊपर नहीं है'।** भारत का संविधान भारतीय न्यायपालिका को भारतीय लोकतंत्र के **अभिभावक और संरक्षक** की भूमिका प्रदान करता है।
- न्यायपालिका एक प्रहरी की भूमिका का निष्पादन करती है, जो किसी भी प्रकार के स्वैच्छिक/मनमाने उल्लंघनों के विरुद्ध मूल और विधायी अधिकारों का परिरक्षण एवं प्रवर्तन करती है।
- हालाँकि, अनेक क्षेत्र एवं दृष्टान्त रहे हैं जिनमें स्वयं **न्यायपालिका की कार्यवाहियां** ही इससे असंगत होने के कारण **संदेहास्पद हो गई हैं** और इस प्रकार न्यायपालिका की जवाबदेहिता का मुद्दा उत्पन्न हुआ है।
- **जवाबदेहिता** का आशय यह है कि किसी भी प्राधिकरण द्वारा की जाने वाली कोई भी कार्यवाही **न्यायोचित स्पष्टीकरण** के अधीन होती है। सभी सार्वजनिक संस्थानों एवं पदाधिकारियों को, चाहे उनकी भूमिका और पदानुक्रम कुछ भी हो, अपने कृत्यों हेतु भारतीय जनता के प्रति **जवाबदेह होना आवश्यक है।**
- भारतीय संविधान **शक्ति के पृथक्करण के सिद्धांत** का पालन करता है जिसके तहत राज्य के प्रत्येक अंग के संचालन पर नियंत्रण एवं संतुलन लागू होता है। भारत में राज्य के दो अंग- विधायिका और कार्यपालिका समग्र रूप से न्यायपालिका एवं देश की जनता के प्रति जवाबदेह हैं। परन्तु प्रश्न यह है कि **"न्यायपालिका किसके प्रति जवाबदेह है"** तथा **"न्यायाधीशों की न्यायोचितता का निर्धारण कौन करता है?"**

न्यायिक जवाबदेहिता की जांच हेतु संस्थानिक तंत्र

- वर्ष 1997 में उच्चतम न्यायालय ने **"रीस्टेटमेंट ऑफ़ वैल्यूज ऑफ़ जुडिशियल लाइफ" (न्यायिक जीवन के मूल्यों का पुनर्कथन)** नामक एक चार्टर अपनाया था।
- इसके अतिरिक्त आवश्यकतानुसार अन्य संकल्प भी अपनाए गए हैं:
    - उच्च न्यायालय और उच्चतम न्यायालय के प्रत्येक न्यायाधीश/मुख्य न्यायाधीश द्वारा संपत्तियों की घोषणा।
    - न्यायाधीशों के विरुद्ध दुर्व्यवहार या कदाचार के किसी भी आरोप की जांच हेतु एक संस्थानिक प्रक्रिया का सूत्रीकरण जिसे भारत के मुख्य न्यायाधीश और उसके कुछ वरिष्ठ सहयोगियों द्वारा जाँच हेतु उपयुक्त माना जाए।
- वर्ष 2002 में **न्यायिक आचरण के बैंगलोर सिद्धांतों (Bangalore Principles of Judicial Conduct)** को अपनाया गया था।

न्यायिक जवाबदेहिता के अभाव से ग्रस्त क्षेत्र

- **न्यायिक नियुक्तियां:** भारत में कॉलेजियम प्रणाली एक विशिष्ट व्यवस्था प्रस्तुत करती है जिसमें लोकतांत्रिक रूप से निर्वाचित कार्यपालिका और संसद की न्यायाधीशों की नियुक्ति में कोई भूमिका नहीं होती।
- **न्यायाधीशों को हटाना:** संविधान के अनुच्छेद 124(4) और अनुच्छेद 217(1) के तहत न्यायाधीशों को पद से हटाने से संबंधित निर्धारित प्रक्रिया जहाँ एक ओर राजनीतिक रूप से जटिल कार्य है वहीं दूसरी ओर यह एक लंबी एवं कठिन प्रक्रिया है।
- **न्यायाधीशों का आचरण:** न्यायाधीशों पर भ्रष्टाचार (न्यायमूर्ति रामास्वामी वाद और न्यायमूर्ति सौमित्र सेन वाद), दुर्विनियोजन, यौन उत्पीड़न, सेवानिवृत्त होने के पश्चात् कोई लाभ का पद ग्रहण करने आदि के अनेक आरोप लगाए जा चुके हैं।
- **न्यायपालिका के परिचालनों में अपारदर्शिता:** न्यायपालिका का यह दावा है कि "न्यायपालिका पर अनुशासनात्मक शक्तियों को धारण करने वाला कोई भी बाह्य निकाय उनकी स्वतंत्रता को कमज़ोर करेगा", अतः उन्होंने भ्रष्टाचार की जाँच करने के लिए **'आंतरिक तंत्र'** स्थापित किया है।

VISION IAS

- विगत वर्ष उच्चतम न्यायालय के चार वरिष्ठतम न्यायाधीशों ने वादों के आवंटन में भारत के मुख्य न्यायाधीश की भूमिका के विरुद्ध एक प्रेस कांफ्रेंस आयोजित की थी।

- **न्यायपालिका के साथ सूचना असममिति:** वस्तुतः न्यायपालिका ने स्वयं को **सूचना के अधिकार अधिनियम (RTI)** की परिधि से बाहर रखा है। उच्चतम न्यायालय के नियम चार मूल तरीकों से RTI को क्षीण करते हैं क्योंकि यहाँ निम्नलिखित की कोई स्पष्ट व्यवस्था नहीं की गयी है:
  - सूचना प्रस्तुत करने हेतु एक निर्धारित समय-सीमा की ।
  - एक अपील तंत्र की।
  - सूचना प्रदान करने में विलंब अथवा दोषपूर्ण अस्वीकरण हेतु दंड की।
  - "समुचित कारण दर्शाने" पर नागरिकों के समक्ष प्रासंगिक प्रकटीकरण की ।
- **न्यायालय की अवमानना:** न्यायालय अवमान अधिनियम के तहत शक्तियों का प्रयोग करने के कारण न्यायपालिका पर यथोचित आलोचना के दमन के भी आरोप लगाए गए हैं।
- **न्यायिक अतिक्रमण:** नागरिकों की शिकायतों के समाधान के प्रति अपनी सक्रियता हेतु न्यायपालिका की प्रशंसा भी की गई है, हालाँकि इस प्रक्रिया में न्यायपालिका ने कार्यपालिका और विधायिका के अधिकार-क्षेत्रों का अतिक्रमण भी किया है।

न्यायिक मानक और जवाबदेही विधेयक, 2010

- यह राष्ट्रीय न्यायिक निगरानी समिति, शिकायत संवीक्षा पैनल तथा एक जांच समिति की स्थापना का प्रावधान करता है। कोई भी व्यक्ति 'दुर्व्यवहार' के आधार पर किसी न्यायाधीश के विरुद्ध निगरानी समिति में शिकायत दर्ज करवा सकता है।
- दुर्व्यवहार के आधार पर किसी न्यायाधीश की पदच्युति से संबंधित समावेदन को संसद में प्रस्तुत किया जा सकता है। ऐसा समावेदन अतिरिक्त जांच हेतु निगरानी समिति को प्रेषित किया जाएगा।
- निगरानी समिति न्यायाधीशों को परामर्श या चेतावनी जारी कर सकती है तथा उनकी पदच्युति हेतु राष्ट्रपति के समक्ष अनुशंसा भी प्रस्तुत कर सकती है।

निहितार्थ

- **न्यायाधीशों और न्यायिक प्रणाली में जन विश्वास में कमी:** न्यायपालिका की सत्यनिष्ठा और जवाबदेहिता का मुद्दा उत्पन्न होने पर।
- **न्यायपालिका की स्वतंत्रता पर प्रभाव:** जब स्वतंत्रता के अनुरूप जवाबदेही का अभाव हो।
- **प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों के विरुद्ध:** उदहारण के लिए- जब मुख्य न्यायाधीश "मास्टर ऑफ द रोल्स" के संबंध में निर्णय ले और उसी वाद में स्वयं भी एक पक्षकार हो।

अब तक उठाए गए कदम

- न्यायालय अवमान (संशोधन) विधेयक, 2003 का पुरःस्थापन।
- न्यायिक मानक और जवाबदेही विधेयक, 2010 का पुरःस्थापन।
- संसद और राज्य विधानमंडलों द्वारा **राष्ट्रीय न्यायिक नियुक्ति आयोग अधिनियम** का एकमत से पारित किया जाना (जिसे उच्चतम न्यायालय ने निरस्त कर दिया)।
- **प्रक्रिया ज्ञापन, 2016 के प्रारूप** पर विचार-विमर्श।
- उच्चतम न्यायालय द्वारा न्यायालय की **कार्यवाहियों के सीधे प्रसारण** हेतु स्वीकृति प्रदान की गई है। साथ ही, इस पर सहमति व्यक्त की गई है कि इसका उपयोग **उच्च जवाबदेहिता** के उपकरण के रूप में किया जाएगा तथा यह **आपराधिक प्रक्रिया संहिता, 1973** के तहत सम्मिलित एक भाग होगा।

प्रक्रिया ज्ञापन (Memorandum of Procedure: MoP), 2016 के प्रारूप की महत्वपूर्ण विशेषताएं:

- उच्चतर न्यायपालिका में न्यायाधीशों की नियुक्ति हेतु "प्रमुख मानदंड" के रूप में **"योग्यता और सत्यनिष्ठा"** का समावेश।
- **किसी उच्च न्यायालय के मुख्य न्यायाधीश के रूप में पदोन्नति हेतु प्रदर्शन के आधार पर मूल्यांकन:** किसी उच्च न्यायालय के एक न्यायाधीश के प्रदर्शन का मूल्यांकन विगत पांच वर्षों के दौरान उस न्यायाधीश द्वारा दिए गए निर्णयों के मूल्यांकन और न्यायिक प्रशासन में सुधार हेतु उसके द्वारा निष्पादित पहलों के आधार पर किया जाएगा।

VISION IAS

- उच्च न्यायालयों के न्यायाधीशों के रिकॉर्डों के रख-रखाव, कॉलेजियम की बैठकों की योजना तैयार करने, नियुक्तियों से संबंधित मामलों में अनुशंसाओं और साथ ही साथ शिकायतों की प्राप्ति हेतु उच्चतम न्यायालय में **एक स्थायी सचिवालय की स्थापना** करना।

उठाये जा सकने वाले कदम

- सर्वोच्च न्यायपालिका की गरिमा को बनाए रखने हेतु विधिक रूप से प्रवर्तनीय मानकों के एक समुच्चय के सृजन के लिए एक **नवीन न्यायिक मानक और जवाबदेही विधेयक प्रस्तुत करना** तथा न्यायाधीशों के विरुद्ध दर्ज कराई गई शिकायतों की प्रक्रिया हेतु एक नवीन संरचना की स्थापना करना।
- न्यायाधीशों हेतु एक अधिक **औपचारिक एवं व्यापक आचार संहिता** निर्मित की जानी चाहिए जो **विधि द्वारा प्रवर्तनीय** हो।
- **न्यायालय अवमान विधेयक** को निम्नलिखित प्रावधानों के साथ संशोधित किया जा सकता है:
  - अवमानना के वादों की सुनवाई न्यायालयों द्वारा नहीं की जानी चाहिए, बल्कि संबंधित जिले के एक स्वतंत्र आयोग द्वारा की जानी चाहिए।
  - आपराधिक अवमानना की परिभाषा से 'न्यायालय की निंदा करना अथवा उसके प्राधिकार को अवनत करना' जैसे पदों को हटाकर अधिनियम को संशोधित किया जाना चाहिए।
  - हालांकि, ईमानदार न्यायाधीशों पर लगाए गए मिथ्या एवं दुर्भावनापूर्ण आरोपों को ध्यान में रखते हुए इस अधिनियम के दुरुपयोग के विरुद्ध कठोर दंड का प्रावधान किया जाना चाहिए।
- **एक द्विस्तरीय न्यायिक अनुशासन मॉडल** की आवश्यकता है, जिसमें प्रथम स्तर एक अनुशासनात्मक प्रणाली हो जिसके अंतर्गत न्यायाधीशों को प्रतिरक्षा हेतु कुछ सीमित उपाय प्रदान करते हुए उनके दुराचरण हेतु उनकी भर्त्सना की जा सके, उन पर अर्थदंड आरोपित किये जा सके या उन्हें निलम्बित किया जा सके। द्वितीय स्तर पर प्रमाणित भ्रष्टाचार सहित गंभीर कदाचार हेतु न्यायाधीशों की पदच्युति की व्यवस्था होनी चाहिए।
- **न्यायालयों में लोक सुनवाई में पारदर्शिता में वृद्धि करना**: विगत वर्ष, उच्चतम न्यायालय ने संवैधानिक महत्त्व के वादों की अदालती प्रक्रिया के सीधे प्रसारण की अनुमति प्रदान की थी। इस प्रावधान को अन्य वादों और उच्च न्यायालयों तक भी विस्तारित किया जाना चाहिए।
- न्यायपालिका में जवाबदेहिता सुनिश्चित करने हेतु न्यायाधीशों के विरुद्ध शिकायतों को ग्रहण करने और कार्यवाही आरम्भ करने की शक्तियों के साथ एक **स्वतंत्र न्यायिक लोकपाल** की स्थापना करना आवश्यक है। यह न्यायपालिका एवं सरकार दोनों से स्वतंत्र होना चाहिए।

उच्चतम न्यायालय की कार्यवाहियों के सीधे-प्रसारण के सन्दर्भ में

पक्ष में तर्क:

- उच्चतम न्यायालय ने कहा है कि संविधान के **अनुच्छेद 21 के अंतर्गत न्याय का अधिकार** केवल तभी सार्थक सिद्ध होगा जब न्यायालय की कार्यवाहियों तक लोगों की पहुंच सुनिश्चित होगी तथा वे कार्यवाहियों को प्रत्यक्ष रूप से देख सकेंगे।
- **ओपन कोर्ट्स (खुले न्यायालय) की अवधारणा:** भारतीय विधिक प्रणाली खुले न्यायालयों की अवधारणा पर आधारित है, जिसका तात्पर्य यह है कि समाज के सभी वर्गों हेतु न्यायिक कार्यवाहियां खुली एवं पारदर्शी हैं।
- **पारदर्शिता को बढ़ावा:** वर्ष 2004 से लोक सभा और राज्य सभा दोनों सदनों की कार्यवाहियों के सीधे प्रसारण को अनुमति प्रदान की गई है।
- **भौतिक अवसंरचना का अभाव:** किसी भी कार्यवाही दिवस पर केवल कुछ ही लोग न्यायालय कक्ष में उपस्थित होते हैं या इस हेतु अनुमति प्राप्त कर पाते हैं।
- **डिजिटलीकरण:** चूंकि न्यायालय डिजिटलीकरण की प्रक्रिया को पहले से अपना चुका है, जैसे- सभी मामलों का ऑनलाइन रिकॉर्ड रखना, ऑनलाइन प्राथमिकी दर्ज करने की व्यवस्था इत्यादि। अत: इस प्रक्रिया को आगे बढ़ाते हुए न्यायालय की कार्यवाहियों का सीधा प्रसारण भी किया जाना चाहिए।
- **सार्वजनिक हित से संबंधित मुद्दे:** महत्वपूर्ण सार्वजनिक हित के मुद्दों से संबंधित मामले, यथा- सबरीमाला मंदिर में महिलाओं के प्रवेश का मुद्दा या भोजन के चयन के अधिकार का दायरा आदि जैसे मुद्दे सभी लोगों के लिए देखने हेतु उपलब्ध होने चाहिए जो समाज में एक उचित दृष्टिकोण के निर्माण में सहायक सिद्ध हो सकते हैं।
- **सूचना का अधिकार, न्याय तक पहुंच, जन सामान्य को शिक्षित करना कि न्यायपालिका कैसे कार्य करती है** आदि कुछ ऐसे ठोस

कारण हैं जो न्यायपालिका की कार्यवाही के सीधे-प्रसारण के पक्ष में अनुमति देते हैं।

विपक्ष में तर्क

- सीधे प्रसारण के चलते होने वाले अवांछित लोक अवलोकन के कारण **न्यायाधीश लोकप्रिय सार्वजनिक मत के प्रभाव में आ सकते हैं**। संभव है कि यह प्रभाव उन्हें न्याय के प्रति नहीं बल्कि **जन सामान्य के प्रति जवाबदेह** बना दे जो उचित नहीं है।
- न्यायपालिका की भूमिका को विधायिका और कार्यपालिका की भूमिकाओं के साथ समेकित नहीं किया जा सकता। संसदीय कार्यवाहियों का प्रसारण जवाबदेहिता सुनिश्चित करने हेतु उत्तम साधन सिद्ध हो सकता है परन्तु न्यायालय के संबंध में यह उपयुक्त नहीं है।
- सीधे-प्रसारण के माध्यम से न्यायाधीशों का व्यक्तित्व सार्वजनिक वाद-विवाद का विषय बन सकता है जिससे समस्याएं उत्पन्न हो सकती हैं। जबकि वास्तव में मुख्य ध्यान दिए गए निर्णय पर होना चाहिए।
- ऐसे वकीलों की स्वयं को प्रचारित करने की प्रबल सम्भावना है जो न केवल न्यायाधीशों को, बल्कि कार्यवाही का सीधा प्रसारण देखने वाली जनता को भी संबोधित कर अपना प्रचार करने के इच्छुक हों। इससे न्यायाधीशों की वस्तुनिष्ठता भी प्रभावित हो सकती है।
- सीधे-प्रसारण के स्थान पर न्यायालय की कार्यवाहियों की दृश्य और श्रव्य रिकॉर्डिंग भी न्याय प्रशासन में सुधार कर सकती है। इनका उपयोग किसी मामले की जांच और अपील के समय किया जा सकता है।

आगे की राह

- पायलट प्रोजेक्ट के रूप में केवल संवैधानिक पीठ के समक्ष अंतिम सुनवाई हेतु प्रस्तुत विशिष्ट श्रेणियों के मामलों अथवा संवैधानिक और राष्ट्रीय महत्व के मामलों से संबद्ध न्यायालय में किये जाने वाले तर्क-वितर्क का सीधा प्रसारण किया जा सकता है।
- इस प्रकार की अनुमति प्रदान करने या अस्वीकृत करने का न्यायालय का विवेकाधिकार अन्य तथ्यों के साथ-साथ निम्नलिखित कारकों द्वारा भी निर्देशित होना चाहिए:
  - सम्मिलित पक्षकारों की सर्वसम्मति और विषय-वस्तु की संवेदनशीलता।
  - न्याय के प्रशासन के व्यापक हित में आवश्यक या उचित माने जाने वाले कोई अन्य कारण। इसके अंतर्गत निम्नलिखित बातों पर विचार किया जाना आवश्यक है कि - कहीं इस प्रकार का प्रसारण न्यायालय की गरिमा को प्रभावित तो नहीं करेगा; कहीं यह निष्पक्ष सुनवाई हेतु पक्षकारों के अधिकारों में हस्तक्षेप तो नहीं करेगा अथवा उन्हें क्षति तो नहीं पहुंचाएगा इत्यादि।
- उन वादियों तथा अन्य संबद्ध व्यक्तियों के लिए **प्रतिलेखन (transcribing) सुविधाएँ और कार्यवाहियों के दृश्य-श्रव्य रिकॉर्ड का संग्रह** उपलब्ध कराया जाना चाहिए जो समय, संसाधन अथवा लम्बी दूरी की यात्रा करने की क्षमता संबंधी बाधाओं के कारण सुनवाई में भाग नहीं ले सकते हैं।

6.1.1. न्यायाधीश एवं सेवानिवृत्ति-पश्चात का पद

(Judges and Post Retirement Positions)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, उच्चतम न्यायालय के एक न्यायाधीश ने सेवानिवृत्ति-पश्चात की नौकरी करने से इनकार कर दिया, जिस कारण विवाद उत्पन्न हो गया।

न्यायाधीश को सेवानिवृति के पश्चात नौकरी क्यों करनी चाहिए?

- **वैधानिक ज्ञान:** न्यायाधीशों द्वारा अपने कार्यकाल के दौरान महत्वपूर्ण अनुभव एवं अंतर्दृष्टि प्राप्त की जाती है, जिसे सेवानिवृत्ति के पश्चात व्यर्थ नहीं किया जा सकता।
- **कोई प्रतिबंध नहीं:** भारत का संविधान उन पर सेवानिवृत्ति-पश्चात के पदों को स्वीकार करने संबंधी प्रतिबंध आरोपित नहीं करता है।

संबंधित जानकारी

- विधि सेंटर फॉर लीगल पॉलिसी की रिपोर्ट में रेखांकित किया गया कि उच्चतम न्यायालय से सेवानिवृत्त 100 में से 70 न्यायाधीशों द्वारा अधिकरणों एवं आयोगों में पद धारण किये गये।
  - 1950 से अब तक भारत में 44 मुख्य न्यायाधीशों द्वारा सेवानिवृत्ति-पश्चात की नौकरियों को स्वीकार किया गया है।
  - 30 से अधिक न्यायाधीशों को सेवानिवृत्ति के एक वर्ष के भीतर ही किसी न किसी पद पर नियुक्त कर दिया गया था। जबकि लगभग 7 न्यायाधीशों को सेवानिवृत्त होने से पूर्व ही नियुक्त कर दिया गया था।

VISION IAS

न्यायाधीशों को सेवानिवृत्ति के पश्चात पद क्यों नहीं धारण करना चाहिए?

- **शक्तियों का पृथक्करण एवं न्यायिक स्वतंत्रता:** न्याय केवल सैद्धांतिक रूप से ही नहीं होना चाहिए बल्कि व्यावहारिक रूप से दिखना भी चाहिए। इस संदर्भ में, सेवानिवृत्ति -पश्चात नौकरियों को स्वीकार करना तथा उनकी पेशकश करना उस संवैधानिक दूरी को समाप्त करता है जिसे कार्यपालिका और न्यायपालिका के मध्य होना आवश्यक है। इससे पूर्वाग्रह की संभावना उत्पन्न हो जाती है। न्यायाधीशों द्वारा अपनी सेवानिवृत्ति के कुछ समय बाद ही या सेवानिवृत्ति से पूर्व ही पद धारण करने से न्यायिक स्वतंत्रता बाधित होती है।
- **हितों का टकराव-** न्यायाधिकरणों तथा संवैधानिक निकायों में पदों को धारण करने से संघर्ष की स्थिति उत्पन्न हो सकती है, क्योंकि अधिकांश मामलों के अंतर्गत सरकार स्वयं वादी एवं नियुक्ति प्राधिकरण, दोनों के रूप में कार्य करती है। एम. सी. सीतलवाड़ की अध्यक्षता वाले प्रथम विधि आयोग ने अनुशंसा की थी कि उच्चतर न्यायपालिका के न्यायाधीशों को सेवानिवृत्ति के पश्चात किसी भी सरकारी नौकरी को स्वीकार नहीं करना चाहिए।
- **न्यायपालिका का राजनीतिकरण:** सेवानिवृत्ति-पश्चात नौकरियों को स्वीकार कर नव सेवानिवृत्त न्यायाधीश विपक्ष की राजनीतिक आलोचना के पात्र बन जाते हैं। विपक्ष इन नियुक्तियों का उपयोग न्यायालय, न्यायिक प्रणाली तथा न्यायाधीशों द्वारा उनके कार्यकाल के दौरान दिए गए निर्णयों एवं आदेशों पर दोषारोपण करने के लिए करता है।

विश्व भर में प्रचलित प्रथाएं

- **संयुक्त राज्य अमेरिका:** सरकार एवं न्यायपालिका के मध्य हितों के टकराव की स्थिति उत्पन्न होने से बचने हेतु न्यायाधीशों को आजीवन सेवानिवृत नहीं किया जाता है।
- **यूनाइटेड किंगडम:** उच्चतम न्यायालय के न्यायाधीश को 70 वर्ष की आयु में सेवानिवृत्त कर दिया जाता है। हालांकि यू.के. का संविधान न्यायाधीशों को सेवानिवृत्ति-पश्चात नौकरियों को प्राप्त करने से वंचित नहीं करता है, परंतु अभी तक किसी भी सेवानिवृत्त न्यायाधीश द्वारा नौकरी प्राप्त नहीं की गई है।

संतुलन स्थापित करने हेतु कौन-से कदम उठाए जाने चाहिए?

- **कूलिंग ऑफ पीरियड (अन्तराल):** अधिकांश हितधारकों ने सुझाव दिया है कि सेवानिवृत्ति के पश्चात न्यूनतम 2 वर्ष का अंतराल होना चाहिए।
- **सेवानिवृत्ति की आयु में वृद्धि करना:** कई अन्य देशों के विपरीत भारत में उच्चतर न्यायपालिका का न्यायाधीश तुलनात्मक रूप से कम आयु में ही सेवानिवृत्त हो जाता है, हालांकि वह आगे कई वर्षों तक उत्पादक कार्य करने में सक्षम होता है।
- एक **कानून का निर्माण कर** एक आयोग का गठन (जिसमें यदि सभी सदस्य सेवानिवृत्त न्यायाधीश न हों तो कम से कम उनका बहुमत अवश्य हो), जो विभिन्न अधिकरणों एवं न्यायिक निकायों में सक्षम सेवानिवृत्त न्यायाधीशों की नियुक्तियां कर सके। यह व्यवस्था होने तक न्यायाधीश स्वयं उपयुक्त निर्देश प्रदान कर विधान-संबंधी इस रिक्तता को भर सकते हैं।
- **उन मौजूदा कानूनों में संशोधन** जो विभिन्न अधिकरणों और अन्य अर्द्ध-न्यायिक निकायों जैसे- राष्ट्रीय मानवाधिकार आयोग (NHRC), राष्ट्रीय हरित अधिकरण (NGT) इत्यादि में सेवानिवृत्त न्यायाधीशों की नियुक्ति को अनिवार्य बनाते हैं।
- **एक पारदर्शी प्रक्रिया की परिकल्पना करना:** पूर्व मुख्य न्यायाधीश आर. एम. लोढ़ा ने सुझाव दिया था कि एक न्यायाधीश के सेवानिवृत्त होने से पूर्व, सरकार द्वारा उसे पेंशनभोगी होने या उसके मौजूदा वेतन को जारी रखने का विकल्प प्रदान किया जाना चाहिए। यदि वे पेंशन के विकल्प का चयन करते हैं तो उन्हें सरकारी नौकरियों का विकल्प नहीं देना चाहिए, परंतु यदि वे पूर्ण वेतन का विकल्प चुनते हैं तो उनके नाम को एक पैनल में शामिल कर लिया जाना चाहिए। किसी भी निकाय में रिक्ति होने पर इन व्यक्तियों पर विचार किया जा सकता है और इस प्रकार यह प्रक्रिया तुष्टिकरण, पक्षपात आदि के आरोपों से मुक्त हो जाती है।
- **संविधान में संशोधन करना:** अनुच्छेद 148 (CAG को सेवानिवृत्ति के पश्चात अन्य नौकरी करने से प्रतिबंधित करना) या अनुच्छेद 319 (UPSC के सदस्यों के लिए इसी प्रकार के प्रावधान) के समान प्रावधान को अन्तर्निहित करना।

6.2. न्यायपालिका से संबंधित मुद्दे

(Issues in Judiciary)

6.2.1. न्यायिक मामलों की लंबितता

(Judicial Pendency)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, दिल्ली उच्च न्यायालय ने अपने पायलट प्रोजेक्ट पर **"जीरो पेंडेंसी कोर्ट्स"** नामक शीर्षक से एक रिपोर्ट जारी की है। इसमें इस तथ्य को चिन्हित किया गया है कि न्यायालयों में मामलों की लंबितता वर्तमान में भारतीय न्यायपालिका के समक्ष व्याप्त सबसे बड़ी चुनौती है।

VISION IAS

न्यायिक बैकलॉग (कार्य संचय) की स्थिति

- राष्ट्रीय न्यायिक डेटा ग्रिड (NJDG) के अनुसार वर्ष 2018 में, **अधीनस्थ न्यायालयों में 2.93 करोड़ मामले, उच्च न्यायालयों में 49 लाख मामले और उच्चतम न्यायालय में 57,987 मामले लंबित थे।**
- उच्चतम न्यायालय में 30% से अधिक लंबित मामले पांच वर्षों से भी अधिक पुराने हैं। इलाहाबाद उच्च न्यायालय में वर्ष 1980 के बाद से 15% अपीलें लंबित हैं।
- **वर्ष 2009 में विधि आयोग की रिपोर्ट** में वर्णित किया गया था कि न्यायाधीशों की वर्तमान क्षमता के साथ लंबित मामलों के निपटान हेतु 464 वर्षों का समय लगेगा।

न्यायिक मामलों की लंबितता के कारण

- **न्यायाधीशों की कमी:** अधीनस्थ न्यायालयों में लगभग 5,580 या 25% पद रिक्त हैं। यह **निम्न न्यायाधीश-जनसंख्या अनुपात** का एक प्रमुख कारण है, क्योंकि भारत में प्रति दस लाख की जनसंख्या पर केवल 20 न्यायाधीश उपलब्ध हैं। ज्ञातव्य है कि पूर्व में विधि आयोग ने प्रति दस लाख की जनसंख्या पर 50 न्यायाधीशों की अनुशंसा की थी।
- **नियमित स्थगन (Frequent adjournments):** न्यायालय में दायर 50 प्रतिशत से अधिक मामलों में **एक मामले को अधिकतम तीन स्थगन** की अनुमति देने वाले नियम का अनुपालन नहीं किया जाता है, जिससे मामलों की लंबितता में वृद्धि होती है।
- **अल्प बजटीय आबंटन के कारण निम्नस्तरीय अवसंरचना:** भारत में न्यायिक अवसंरचना को बनाए रखने के लिए सरकार द्वारा अपने **सकल घरेलू उत्पाद का केवल 0.09%** हिस्सा ही व्यय किया जाता है। देश के अधीनस्थ न्यायालयों की अवसंरचना की स्थिति अत्यधिक गंभीर है, जिसके कारण वे गुणवत्तापूर्ण निर्णय देने में विफल रहते हैं। उच्चतम न्यायालय द्वारा वर्ष 2016 में प्रकाशित एक रिपोर्ट प्रदर्शित करती है कि मौजूदा अवसंरचना 20,558 की अखिल भारतीय स्वीकृत क्षमता की तुलना में केवल 15,540 न्यायिक अधिकारियों को कार्यस्थल उपलब्ध करवा सकती है।
- **सरकार से संबद्ध वादों का बोझ: LIMBS** द्वारा उपलब्ध कराए गए आंकड़े प्रदर्शित करते हैं कि भारतीय न्यायालयों में 46% से अधिक लंबित मामलों हेतु केंद्र और राज्य उत्तरदायी हैं।

विधिक सूचना प्रबंधन और ब्रीफिंग प्रणाली (LIMBS)

- यह सरकारी विभागों एवं मंत्रालयों के विभिन्न न्यायिक वादों की निगरानी और संचालन के लिए विधि एवं न्याय मंत्रालय द्वारा विकसित एक **वेब-आधारित पोर्टल** है।
- यह अधिकारियों (प्राधिकरण) को **'आंकड़ों के आधार पर निर्णय लेने', विभिन्न हितधारकों के प्रदर्शन का मूल्यांकन करने** और **विधिक लेखांकन** करने में सहायता करेगा।

- वर्तमान में **उच्चतम न्यायालय** में **विशेष अनुमति याचिका** के तहत दायर मामलों का न्यायिक लंबितता में 40% योगदान है, जिसके कारण **संवैधानिक मुद्दों से संबंधित मामलों के लिए कम समय उपलब्ध होता है।**
- **न्यायाधीशों का अवकाश:** उच्चतम न्यायालय द्वारा वर्ष में औसतन 188 दिन कार्य किया जाता है, जबकि शीर्ष न्यायालयों के नियम न्यूनतम 225 दिनों के कार्य संचालन को निर्दिष्ट करते हैं।
- **न्यायालय प्रबंधन प्रणालियों का अभाव:** न्यायालयों ने अपने कार्य संचालन, मुकदमों के निपटान और जुडिशल टाइम (न्यायिक कार्यों में लगने वाला समय) में सुधार करने हेतु न्यायालय प्रबंधकों के समर्पित पदों का सृजन किया है। **हालाँकि अभी तक केवल कुछ ही न्यायालयों ने ऐसे पदों पर भर्ती की है।**
- **अप्रभावी जांच:** पुलिस साक्ष्य एकत्रित करने के लिए आधुनिक और वैज्ञानिक साधनों के अभाव में प्रभावी जांच करने में प्रायः असमर्थ रहती है।
- **साक्षरता में वृद्धि:** उल्लेखनीय है कि साधारण जनता अब अपने अधिकारों और अपने प्रति राज्य के दायित्वों के संबंध में अधिक जागरूक हो गयी है। इसके कारण वे किसी भी उल्लंघन के मामले में शीघ्र ही न्यायालय में याचिका दायर करने हेतु सशक्त हो गए हैं।

जीरो पेंडेंसी कोर्ट्स प्रोजेक्ट

- दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा इस पायलट परियोजना का प्रारंभ जनवरी 2017 से दिल्ली के कुछ अधीनस्थ न्यायालयों में किया गया था।
- इस परियोजना का उद्देश्य संस्थापन की तिथि से अंतिम निपटान तक मामलों के वास्तविक, रियल टाइम 'फ्लो' का अध्ययन करना था।

महत्वपूर्ण बिंदु

- यह वर्णित करता है कि राजधानी दिल्ली में एक वर्ष में सभी लंबित मामलों के निपटान हेतु राजधानी की वर्तमान न्यायाधीशों की संख्या (143) से 43 अधिक न्यायाधीशों की आवश्यकता है।
- इसके तहत उल्लिखित किया गया है कि साक्ष्य जुटाने (परीक्षण चरण) के दौरान गवाहों की अनुपस्थिति, मामले की प्रगति के समक्ष एक गंभीर बाधा उत्पन्न करती है।
- इसके अतिरिक्त, किसी मामले में अधिवक्ताओं या पक्षों द्वारा विभिन्न चरणों में मांगे जाने वाले अनावश्यक स्थगन वस्तुतः कार्यवाही में विलंब की स्थिति व्युत्पन्न करते हैं, जिससे मामले की निपटान अवधि में वृद्धि होती है।

न्यायिक मामलों की लंबितता के प्रभाव

- **'समय पर न्याय न प्रदान करना' वस्तुतः न्याय प्रदान करने से विरत होने के समान है:** मामलों का समय पर निपटान विधि के शासन को बनाए रखने और न्याय तक पहुंच प्रदान करने के लिए आवश्यक है। त्वरित सुनवाई संविधान के अनुच्छेद 21 के तहत प्राण एवं दैहिक स्वतंत्रता के अधिकार के अंतर्गत शामिल है।
- **सामाजिक अवसंरचना का ह्रास:** एक अक्षम न्यायपालिका का सामाजिक विकास पर नकारात्मक प्रभाव पड़ता है, जिसके कारण प्रति व्यक्ति आय में कमी; निर्धनता दर में वृद्धि; निम्नस्तरीय सार्वजनिक बुनियादी ढाँचा और अपराध दर में वृद्धि होती है।
- **जेलों में क्षमता से अधिक कैदी** (कुछ मामलों में क्षमता से 150% तक अधिक), बुनियादी सुविधाओं की कमी आदि "मानवाधिकारों के उल्लंघन" में वृद्धि करती हैं।
- **इससे देश की अर्थव्यवस्था प्रभावित होती है,** क्योंकि एक अनुमान के अनुसार न्यायिक मामलों की लंबितता के कारण भारत को वार्षिक रूप से **सकल घरेलू उत्पाद के लगभग 1.5% का व्यय** करना पड़ता है।
    - **आर्थिक सर्वेक्षण 2017-18 के अनुसार** मामलों की लंबितता अंततः विवाद समाधान एवं समझौता प्रवर्तन को बाधित, निवेश को हतोत्साहित, परियोजनाओं को अवरोधित, कर संग्रह को बाधित और कानूनी लागतों में वृद्धि करती है जिससे **व्यापार लागत बढ़ती है।**

मामलों की लंबितता को कम करने के उपाय

- **गुणवत्तापूर्ण न्याय को सुनिश्चित करने हेतु अवसंरचना में सुधार:** कार्मिक, लोक शिकायत, विधि और न्याय मामलों पर **संसदीय स्थायी समिति** ने अधीनस्थ न्यायालयों के अवसंरचना विकास और सुदृढ़ीकरण पर अपनी रिपोर्ट प्रस्तुत की और सुझाव दिया कि:
    - राज्यों को न्यायालय भवन आदि के निर्माण के लिए उपयुक्त भूमि प्रदान करनी चाहिए। भूमि की कमी की स्थिति में राज्यों को बहुमंजिला अवसंरचना निर्माण करना चाहिए।
    - **ई-न्यायालयों** की स्थापना की दिशा में एक आवश्यक कदम के रूप में सभी न्यायालयों के कम्प्यूटरीकरण के लिए समय-सीमा निर्धारित की जानी चाहिए।
- **रिक्तियों की समस्या का समाधान करना:** न्यायपालिका में लंबित मामलों के निपटान हेतु उपयुक्त संख्या में न्यायाधीशों की नियुक्ति की जानी चाहिए। **भारतीय विधि आयोग की 120वीं रिपोर्ट** में पहली बार **न्यायाधीश संख्या निर्धारण सूत्र** सुझाया गया है:
    - उच्चतम न्यायालय और उच्च न्यायालयों द्वारा संविधान के अनुसार तदर्थ न्यायाधीशों के रूप में कुशल और अनुभवी न्यायाधीशों की नियुक्ति की जानी चाहिए।
    - **अखिल भारतीय न्यायिक सेवा** का गठन करना, जो न्यायाधीशों की गुणवत्ता में वृद्धि करके अधीनस्थ न्यायपालिका को लाभान्वित करेगी और लंबित मामलों की संख्या को कम करने में सहायक होगी।
- **कार्य दिवसों की संख्या में वृद्धि:** अधीनस्थ न्यायालयों के लिए औसत वार्षिक कार्य दिवस 244, उच्चतम न्यायालय के लिए 190, उच्च न्यायालय के लिए 232 है। कार्य दिवसों की संख्या में वृद्धि उत्पादकता में काफी सुधार कर सकती है।
- अधीनस्थ न्यायपालिका और उच्च न्यायालयों के लिए वार्षिक लक्ष्यों एवं कार्य योजनाओं के निर्धारण के द्वारा **मामलों के निपटान हेतु एक निश्चित समय सीमा निर्धारित** की जानी चाहिए। न्यायिक अधिकारियों द्वारा अपने दायित्वों का प्रभावी निर्वहन सुनिश्चित करने हेतु उनके लिए एक **कठोर आचार संहिता** जारी की जा सकती है।
- **स्थगन के संदर्भ में कठोर नियम** आरोपित किए जाने चाहिए और विशेष रूप से ट्रायल स्टेज (मुक़दमे की सुनवाई) में सारहीन आधार पर स्थगन की मांग करने पर सांकेतिक अर्थदंड का प्रावधान किया जाना चाहिए। साथ ही सिविल प्रक्रिया संहिता के तहत निर्दिष्ट समय-सीमा में रियायत प्रदान नहीं की जानी चाहिए।
- **बेहतर न्यायालय प्रबंधन प्रणाली और विश्वसनीय डेटा संग्रह व्यवस्था:** इसके लिए मामलों का अनिवार्यता और प्राथमिकता के आधार पर वर्गीकरण एवं समूहीकरण किया जाना चाहिए।

VISION IAS

- आर्थिक सर्वेक्षण 2018-19 ने **भारतीय न्यायालय और अधिकरण सेवा (Indian Courts and Tribunal Services)** के गठन का सुझाव दिया गया है, ताकि न्यायपालिका को आवश्यक प्रशासनिक सहायता प्रदान करने और प्रक्रिया-गत अक्षमताओं की पहचान करने तथा विधिक सुधारों पर परामर्श प्रदान किया जा सके।

- **सूचना प्रौद्योगिकी समाधानों का उपयोग:** मामलों की ट्रैकिंग और निगरानी के लिए तथा न्याय को याचिकाकर्ता अनुकूल बनाने हेतु प्रासंगिक सूचनाएं प्रदान करने के लिए प्रौद्योगिकी का उपयोग किया जाना चाहिए। इसके लिए निम्नलिखित को व्यापक रूप से प्रोत्साहन दिया जाना चाहिए:
- **मामलों की ई-फाइलिंग:** ई-न्यायालय इस दिशा में एक स्वागत योग्य कदम है, क्योंकि वे उच्च न्यायालयों और अधीनस्थ न्यायालयों में मामले की स्थिति और मामले में हुई प्रगति की जानकारी प्रदान करते हैं। इससे सूचनाओं तक सुगम एवं सरल पहुंच सुनिश्चित होती है।
- एलास्टिक सर्च (उदार परीक्षण) के रूप में ज्ञात एक नए प्रकार के परीक्षण को प्रारंभ करते हुए **राष्ट्रीय न्यायिक डेटा ग्रिड का पुनरुद्धार।**
- **वैकल्पिक विवाद समाधान (ADR):**
  - जैसा कि **न्यायिक प्रणाली में लंबितता और विलंबता के समाधान हेतु राष्ट्रीय पहल पर सम्मेलन** में उल्लिखित किया गया था कि - कानूनी सेवाओं के अधिकारियों को **मुकदमा दायर करने से पूर्व मध्यस्थता** करनी चाहिए ताकि न्यायालयों में मामलों के अंत:प्रवाह को विनियमित किया जा सके।
  - सिविल (दीवानी) और पारिवारिक मामलों को निपटाने के लिए नियमित रूप से **लोक अदालत** का आयोजन किया जाना चाहिए।
  - **ग्राम न्यायालय:** ये ग्रामीण क्षेत्रों से दायर किए जाने वाले सामान्य मुकदमों से संबंधी विवादों के प्रबंधन के लिए एक प्रभावी उपकरण के रूप में कार्य कर सकते हैं। पुनः ये न्यायपालिका के कार्यभार को कम करने में सहायक होंगे।
  - राज्य को याचिकाकर्ता अनुकूल बनाने के लिए उच्च न्यायालयों द्वारा जमीनी स्तर पर न्याय प्रदान करने हेतु **विलेज लीगल केयर एंड सपोर्ट सेंटर (ग्राम विधिक देख-रेख एवं समर्थन केंद्र)** की स्थापना भी की जा सकती है।

निष्कर्ष

एक सर्वोत्तम न्यायिक प्रशासन की मूलभूत आवश्यकता **सुगमता, वहनीयता** और **त्वरित न्याय** है तथा इसे न्याय वितरण प्रणाली तक जन-सामान्य की समयबद्ध और वहनीय पहुँच सुनिश्चित किये बिना प्राप्त नहीं किया जा सकता। **इसलिए, भारत में न्याय वितरण प्रणाली को प्रभावी और सुदृढ़ बनाने के लिए निरंतर रचनात्मक मूल्यांकन करना अत्यंत आवश्यक है।**

6.2.2. अधीनस्थ न्यायालयों में रिक्तियां

(Vacancies in Sub-Ordinate Courts)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में उच्चतम न्यायालय ने अधीनस्थ न्यायालयों में पदों की रिक्तियों की अधिकता पर चिंता प्रकट की है।

पृष्ठभूमि

- अधीनस्थ न्यायलय जन सामान्य के जीवन को प्रभावित करने वाले सर्वाधिक महत्वपूर्ण न्यायिक कर्तव्यों का निष्पादन करते हैं। उदाहरणार्थ: **वादों की सुनवाई, सिविल विवादों का समाधान** तथा कानून के महत्वपूर्ण सिद्धांतों (bare bones) का क्रियान्वयन।
- परन्तु वर्तमान में अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा विभिन्न चुनौतियों का सामना किया जा रहा है। इनमें से अधिकांश न्यायाधीशों के पदों की रिक्तियों के उच्च स्तर की समस्या से उत्पन्न हुई हैं। उदाहरण के लिए, सम्पूर्ण देश के अधीनस्थ न्यायालयों में **4,859 न्यायाधीशों के पद रिक्त हैं** जबकि स्वीकृत संख्या 22,750 है ,अर्थात् वर्तमान में कार्यरत न्यायाधीशों की संख्या 17,891 है।

अधीनस्थ न्यायालयों द्वारा सामना किए जाने वाले अन्य मुद्दे

- **भर्ती संबंधी मुद्दे:** आवेदनों के आमंत्रण की प्रकिया, भर्ती परीक्षाओं का संचालन तथा परिणामों की घोषणा में शिथिलता विद्यमान है।
  - इसके अतिरिक्त, एक हालिया अध्ययन के अनुसार अधिकांश राज्यों में **भर्ती प्रक्रिया चक्र** की अवधि उच्चतम न्यायालय द्वारा निर्धारित समय सीमा से अत्यधिक है।
  - आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार दिसम्बर 2018 तक अधीनस्थ न्यायालय में कार्यरत न्यायाधीशों की संख्या **अपनी स्वीकृत संख्या का 79% थी।**

VISION IAS

- **लंबित मामले:** आर्थिक सर्वेक्षण में रेखांकित किया गया है कि जिला और अधीनस्थ न्यायालयों (जिला एवं सत्र न्यायालयों) में लंबित मामलों की संख्या 3.04 करोड़ है, **जो सभी न्यायालयों में कुल लंबित मामलों का 87.54%** है। भर्ती मामलों में शिथिलता के कारण अधीनस्थ न्यायालयों में लंबित मामलों की संख्या में वृद्धि हुई है। ज्ञातव्य है कि 22.57 लाख मामले 10 से भी अधिक वर्षों से लंबित हैं, जिनमें से कुछ तो दो या तीन दशकों से भी अधिक पुराने हैं।
- देश में अधीनस्थ न्यायालयों में **सुनवाई की निरन्तरता का अभाव है।** सुनवाई की उच्च दर लघु समयावधि में अधिक मामलों की सुनवाई को प्रदर्शित करती है। इससे वितरित न्याय की समग्र गुणवत्ता प्रभावित हो सकती है।
- **साक्ष्यों के एकत्रण एवं गवाहों के परीक्षण (सवाल जवाब करना) में विलंब** जिससे न्यायालय की समस्त प्रकिया बाधित होती है।
- **अवसंरचना का अभाव:** आवश्यक मानवीय एवं वित्तीय संसाधनों के आवंटन में किसी भी प्रकार की विफलता अधीनस्थ न्यायालयों में न्यायिक कार्य की प्रभावहीनता का कारण बन सकती है। इसके मुख्यतया दो घटक हैं:
  - प्रथम, विधिक एवं परा विधिक (para-legal) कार्मिकों तथा सुप्रशिक्षित जांच कार्मिकों का अभाव।
  - द्वितीय, भर्ती जैसी विभिन्न प्रक्रियाओं के प्रभावी संचालन हेतु पर्याप्त निधियों का अभाव तथा नियोजित कार्मिकों की आवश्यकताओं की पूर्ति भी एक अन्य मुद्दा है।
- **कार्यक्षमता:** आर्थिक सर्वेक्षण में वर्णित किया गया है कि अधीनस्थ न्यायालयों में न्यायाधीशों के पदों की पूर्ण संस्वीकृत संख्या के साथ इन न्यायालयों की **कार्यक्षमता में 24.5 फीसद वृद्धि** के माध्यम से लंबित मामलों का निस्तारण पांच वर्षों में किया जा सकता है।

जिला न्यायालयों में भर्ती प्रक्रिया

- किसी राज्य में जिला न्यायाधीशों की नियुक्ति, पद-स्थापन तथा प्रोन्नति राज्य के राज्यपाल द्वारा उच्च न्यायालय से परामर्श उपरांत की जाती है। एक जिला न्यायाधीश के रूप में नियुक्त होने हेतु किसी व्यक्ति में निम्नलिखित अहर्ताएं होनीं चाहिए-
  - वह केन्द्र या किसी राज्य सरकार की सेवा में कार्यरत न हो।
  - उसे एक वकील या अधिवक्ता के रूप में कम से कम 7 वर्षों का अनुभव प्राप्त हो। तथा
  - उसकी नियुक्ति उच्च न्यायालय द्वारा अनुशंसित होनी चाहिए।
- राज्य की न्यायिक सेवा में अन्य न्यायाधीशों की नियुक्ति (जिला न्यायाधीश के अतिरिक्त) राज्य के राज्यपाल द्वारा राज्य लोक सेवा आयोग तथा उच्च न्यायालय से परामर्श के उपरांत की जाती है।

आगे की राह

- नियुक्तियों की एक सुगम एवं समयबद्ध प्रक्रिया हेतु उच्च न्यायालयों तथा राज्य लोक सेवा आयोग के मध्य **घनिष्ट समन्वय** की आवश्यकता होगी।
- **मानव शक्ति एवं संसाधनों का व्यापक समेकन** समय की आवश्यकता है।
  - न्यायालय सम्बन्धी अवसंरचना को सुदृढ़ करने हेतु नियोजन, बजट संवर्धन और संगठित क्रियान्वयन के रूप में **'तत्काल ध्यान दिए जाने'** की आवश्यकता है।
  - साक्ष्य एकत्रण एवं गवाहों के परीक्षण (सवाल जवाब करना) जैसी प्राथमिक जांच के उत्तरदायित्व हेतु **सुप्रशिक्षित कार्मिकों** की आवश्यकता के साथ **विधिक और परा-विधिक कार्मिकों की समानुपातिक भर्ती** का भी समाधान किया जाना चाहिए।
  - आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार **आगामी पांच वर्षों में सभी लंबित मामलों के समापन हेतु** अधीनस्थ न्यायालयों में **8,152 अतिरिक्त न्यायाधीशों की आवश्यकता होगी।**
  - इसमें यह भी रेखांकित किया गया है कि **फौजदारी मामलों** के निपटान हेतु **विशेषज्ञता प्राप्त अधिक न्यायाधीशों** की आवश्यकता होगी, क्योंकि लंबित मामलों में सर्वाधिक संख्या फौजदारी मामलों की ही है तथा इनकी **निपटान दर भी कम है।**
- **मामलों का अवधि चक्र विश्लेषण:** आर्थिक सर्वेक्षण के अनुसार कुछ विशिष्ट स्तरों पर, जिनमें सर्वाधिक समय लगता है, विलंब को लक्षित करके दीवानी और फौजदारी दोनों ही प्रकार की प्रक्रिया में तीव्रता लाई जा सकती है। इन विशिष्ट स्तरों में 'साक्ष्य स्तर' और 'दोष सिद्धि' स्तर शामिल हैं जिनमें क्रमशः 235 तथा 231 दिवसों का समय लगता है।
- अखिल भारतीय सेवाओं (AIS) के अनुसरण में **अखिल भारतीय न्यायिक सेवा (AIJS)** का सृजन किया जाना चाहिए। यह न्यायाधीशों के एक संवर्ग का निर्माण करेगी जिन्हें सम्पूर्ण देश में जिला न्यायालय स्तर पर नियुक्त किया जा सकता है तथा यह भारत के न्यायिक क्षेत्र में सर्वोत्तम प्रतिभाओं को आकर्षित करने हेतु भर्ती की पारदर्शी एवं कुशल पद्धति को भी सुनिश्चित करेगी।

VISION IAS

- न्यायालयों में न्यायिक एवं प्रशासनिक प्रक्रिया में सुधार करने हेतु **सूचना व संचार प्रौद्योगिकी** का उपयोग किया जाना चाहिए तथा सक्षम और समयबद्ध नागरिक केंद्रित सेवाओं की आपूर्ति हेतु ई-न्यायालय परियोजनाओं में वृद्धि की जानी चाहिए। ज्ञातव्य है कि ई-न्यायालय में विभिन्न न्यायिक समस्याओं के दीर्घकालिक समाधान की क्षमता विद्यमान है।

6.3. अधिकरण

(Tribunals)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, एक संविधान पीठ की अध्यक्षता के दौरान भारत के मुख्य न्यायाधीश ने यह सुझाव दिया कि अधिकरणों की संख्या यथासंभव कम होनी चाहिए।

संबंधित अन्य तथ्य

- यह पीठ वित्त अधिनियम, 2017 के संशोधनों को चुनौती देने वाली विभिन्न याचिकाओं पर सुनवाई कर रही है।
- **वित्त अधिनियम, 2017 में संशोधन:**
    - इसके अंतर्गत प्रावधान किया गया है कि **केंद्र सरकार** अधिकरणों (जो संचालन में रहेंगे) के अध्यक्षों और अन्य सदस्यों से संबंधित योग्यताओं, नियुक्तियों, कार्यकाल, वेतन व भत्तों, त्यागपत्र, बर्खास्तगी और सेवा संबंधी अन्य शर्तों के लिए **नियम बना सकती** है।
    - **केंद्र सरकार को** एक अधिसूचना के माध्यम से **अधिकरणों की सूची में संशोधन करने की शक्ति प्राप्त होगी।**
    - इस अधिनियम के द्वारा कुछ मौजूदा अधिकरणों को प्रतिस्थापित कर उनके कार्यों को अन्य अधिकरणों को स्थानांतरित किया गया है। उदाहरण के लिए, एयरपोर्ट्स इकोनॉमिक रेगुलेटरी अथॉरिटी अपेलेट ट्रिब्यूनल (AERAAT) को दूरसंचार विवाद समाधान एवं अपील अधिकरण (Telecom Disputes Settlement and Appellate Tribunal: TDSAT) द्वारा प्रतिस्थापित किया गया है।

अधिकरणों के लाभ

- **लचीलापन (Flexibility):** प्रशासनिक न्याय-निर्णयन द्वारा न्याय संबंधी लचीलेपन और अनुकूलनशीलता को प्रोत्साहित किया गया है, क्योंकि ये प्रक्रिया से संबंधित कठोर नियमों से नियंत्रित नहीं होते हैं और बदलते सामाजिक एवं आर्थिक जीवन के चरणों के अनुरूप बने रह सकते हैं।
- **कम खर्चीला:** ये कम औपचारिक और कम खर्चीले होते हैं तथा इनके द्वारा विवादों का निपटान पारंपरिक न्याय प्रणाली की अपेक्षा तीव्रता से किया जा सकता है।
- **न्यायालयों पर बढ़ते कार्यभार में कमी:** यह प्रणाली सामान्य न्यायालयों के बढ़ते कार्यभार को कम करने हेतु अत्यंत आवश्यक है, चूँकि न्यायालयों पर पहले से ही अत्यधिक मुकदमों का भार बना हुआ है।
- **किसी विशिष्ट विषय पर विशेषज्ञता के माध्यम से विशिष्ट ज्ञान प्रदान करना**, जो अपेक्षित समय में कमी कर सकता है और इसके परिणामस्वरूप लागत में भी कमी आती है।

भारत में अधिकरण

- अधिकरण एक **अर्ध-न्यायिक निकाय** होता है जिसे भारत में **अनुच्छेद 323-A या 323-B** के तहत विशिष्ट विवादों के समाधान हेतु संसद या राज्य विधान-मंडल के एक अधिनियम द्वारा स्थापित किया जाता है।
- **स्वर्ण सिंह समिति की अनुशंसा** के आधार पर अनुच्छेद 323-A और 323-B को **1976 के 42वें संशोधन अधिनियम** के माध्यम से अंतःस्थापित किया गया था।
    - **अनुच्छेद 323-A** प्रशासनिक अधिकरणों से सम्बंधित है।
    - **अनुच्छेद 323-B** अन्य मामलों के संबद्ध अधिकरणों से सम्बंधित है।
- **तकनीकी विशेषज्ञता:** ये विवादों के अधिनिर्णयन में एक महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन करते हैं, विशेषतः जब विवाद का विषय तकनीकी दक्षता की मांग करता हो।
- इन्हें सिविल प्रक्रिया संहिता (Civil Procedure Code) और भारतीय साक्ष्य अधिनियम (Indian Evidence Act) के तहत निर्धारित किसी भी समान प्रक्रिया का पालन करने की आवश्यकता नहीं है, लेकिन इन्हें **प्राकृतिक न्याय के सिद्धांतों का पालन** करना होता है।
- इन्हें सिविल न्यायालय की कुछ शक्तियाँ प्राप्त हैं, जैसे- समन जारी करना और गवाहों को साक्ष्य प्रस्तुत करने की अनुमति प्रदान करना। इनके निर्णय पक्षकारों पर **कानूनी रूप से बाध्यकारी हैं**, परंतु इनके विरुद्ध अपील की जा सकती है।

VISION IAS

संशोधनों से संबंधित मुद्दे

- **संसदीय समीक्षा में कमी:** सरकार को नियमों के माध्यम से सदस्यों की नियुक्ति, पुनर्नियुक्ति और हटाने की अनुमति प्रदान करने से संसदीय समीक्षा में कमी आएगी। इससे पूर्व, अधिकरण से संबंधित कानूनों में संशोधन के माध्यम से ऐसा किया जाता था, जहाँ संसद भी शामिल होती थी।
- **न्यायिक स्वतंत्रता में कमी:** क्योंकि ये संशोधन कार्यपालिका को और अधिक अधिकार प्रदान करते हैं। 2014 में उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया था कि अपीलीय अधिकरण को उच्च न्यायालयों के समान ही प्रकार्य और शक्तियां प्राप्त हैं। इसलिए उनके सदस्यों की नियुक्ति और पुनर्नियुक्ति से संबंधित मामले में कार्यपालिका का हस्तक्षेप नहीं होना चाहिए।
- **अस्पष्ट तर्क:** कुछ अधिकरणों के प्रतिस्थापन के संबंध में अस्पष्ट तर्क प्रस्तुत किये गए हैं। उदाहरण के लिए, यह संदेहास्पद है कि प्रतिस्पर्धा अपीलीय अधिकरण को प्रतिस्थापित करने वाले NCLAT (राष्ट्रीय कंपनी कानून अपीलीय अधिकरण) को प्रतिस्पर्धा-विरोधी कार्यों से संबंधित मामलों से निपटने के लिए विशेषज्ञता प्राप्त होगी अथवा नहीं।

अधिकरणों के साथ समस्याएं

- **शक्ति के पृथक्करण के सिद्धांत का उल्लंघन:** अधिकरण कानूनी न्यायालय (court of law) नहीं हैं और इन्हें कार्यपालिका द्वारा आंशिक रूप से नियंत्रित और संचालित किया जाता है जो कि शक्ति के पृथक्करण के सिद्धांत के विरुद्ध है और कार्यपालिका को न्यायिक निर्णय करने की अनुमति प्रदान करते हैं।
  - देश में सर्वाधिक याचिकाएं कार्यपालिका के विरुद्ध दायर हैं। यह हितों के टकराव की स्थिति उत्पन्न करता है।
- **संवैधानिक संरक्षण प्राप्त नहीं:** उच्च न्यायालय के समान अधिकरणों को संवैधानिक संरक्षण का लाभ प्राप्त नहीं हैं क्योंकि उच्च न्यायालय के न्यायाधीशों की **नियुक्ति प्रक्रिया और सेवा शर्तें** कार्यपालिका के नियंत्रण से बाहर हैं।
- **न्यायपालिका के अधिकार को कम करना:** अधिकरणों ने विभिन्न अधिनियमों के तहत विवादों के लिए उच्च न्यायालयों को व्यापक स्तर पर विस्थापित कर दिया है। अपीलीय अधिकरण के किसी आदेश से व्यथित एक व्यक्ति, HC में अपील किये बिना सीधे SC में अपील कर सकता है।
  - हालाँकि, **1997 में एल. चंद्रकुमार वाद** में दिए गए निर्णय के पश्चात, यह व्यवस्था की गई है कि सर्वप्रथम संबंधित उच्च न्यायालय में अपील की जाएगी तत्पश्चात उच्चतम न्यायालय में।
- **विचाराधीन मामलों की संख्या में वृद्धि:** अधिकरणों में अनिर्णीत मामलों की संख्या में प्रतिवर्ष 25% की वृद्धि दर्ज हुई है। यहाँ एक केस (वाद) की औसत लंबित अवधि 3.8 वर्ष है जबकि उच्च न्यायालयों में यह 4.3 वर्ष है।
- देश भर में **विद्यमान भौगोलिक विविधता** के कारण, अधिकरण उच्च न्यायालयों के समान सुलभ भी नहीं हैं। इससे न्याय प्राप्त करना महंगा और कठिन हो जाता है।
- **अतिव्यापी क्षेत्राधिकार (Overlapping Jurisdiction):** विभिन्न मंत्रालयों और विभागों के तहत कई न्यायाधिकरण कार्यरत हैं जिसके कारण न्यायाधिकरणों का प्रबंधन जटिल हो जाता है। इसके अतिरिक्त, कई न्यायाधिकरणों के कार्य भी समान प्रकृति के हैं।
- दर्जनों अधिकरणों में **अत्यधिक संख्या में रिक्तियां विद्यमान हैं,** जिसने उस उद्देश्य की अवहेलना की है जिसके लिए इन्हें विशिष्ट अर्ध-न्यायिक फोरम के रूप में गठित किया गया था।

आगे की राह

भारतीय विधि आयोग (LCI) द्वारा अपनी रिपोर्ट में देश में अधिकरणों की कार्यप्रणाली में सुधार के लिए एक विस्तृत प्रक्रिया प्रस्तुत की गई है:

- **न्यायाधीशों की योग्यता:** HC (या जिला न्यायालय) की अधिकारिता को अधिकरण को हस्तांतरित करने के मामले में, नव गठित अधिकरण के सदस्यों की योग्यता HC (या जिला न्यायालय) के न्यायाधीशों के समान होनी चाहिए।
- **अधिकरण के अध्यक्ष और सदस्यों की नियुक्ति**
  - अधिकरणों की कार्यप्रणाली की निगरानी के साथ-साथ अधिकरणों में नियुक्त सभी सदस्यों की नियुक्ति, कार्यकाल और सेवा शर्तों में एकरूपता सुनिश्चित करने के लिए विधि मंत्रालय के तहत एक सामान्य नोडल एजेंसी की स्थापना की जानी चाहिए।
  - **अधिकरणों में उत्पन्न होने वाली रिक्तियों** पर समय पर नियुक्तियां की जानी चाहिए। इस हेतु आवश्यक प्रक्रिया को ऐसी रिक्तियों के व्युत्पन्न होने के छह माह पूर्व प्रारंभ कर लिया जाना चाहिए।
- **अधिकरणों के सदस्यों का चयन**
  - सरकारी एजेंसियों के न्यूनतम हस्तक्षेप के साथ **चयन प्रक्रिया निष्पक्ष होनी चाहिए** क्योंकि सरकार भी अभियोजन में एक पक्षकार होती है।
  - न्यायिक और प्रशासनिक सदस्यों के लिए **पृथक चयन समिति** का गठन किया जाना चाहिए।

VISIONIAS

- **कार्यकाल**: अध्यक्ष का कार्यकाल 3 वर्ष या 70 वर्ष की आयु प्राप्त करने तक, जो भी पहले हो जबकि उपाध्यक्ष और सदस्यों को 3 वर्ष या 67 वर्ष की आयु प्राप्ति तक, जो भी पहले हो तक होना चाहिए।
- अधिकरण या उसके अपीलीय फोरम पर प्रादेशिक अधिकारिता वाले **HC की डिवीजन बेंच के समक्ष अधिकरण के** किसी आदेश को चुनौती दी जा सकती है क्योंकि न्यायिक पुनरावलोकन संविधान के मूल ढांचे का भाग है।
- **देश के विभिन्न भागों में अधिकरणों की बेंच स्थापित होनी चाहिए** (आदर्श रूप में जहां उच्च न्यायालय स्थित हैं) ताकि लोग सुगमता से न्याय प्राप्त कर सकें।

6.4. फास्ट ट्रैक कोर्ट

(Fast Track Courts)

सुर्ख़ियों में क्यों?

नेशनल लॉ यूनिवर्सिटी (दिल्ली) द्वारा किए गए एक हालिया अध्ययन में पाया गया है कि, भारत में फास्ट-ट्रैक कोर्ट्स (FTCs) की कार्यप्रणाली लगातार मंद होती जा रही है।

फास्ट ट्रैक कोर्ट (FTCs) के बारे में

- ये वर्ष 2000 में, **सत्र न्यायालयों में दीर्घावधि से लंबित मामलों का निपटारा करने और विचाराधीन कैदियों के दीर्घावधि से लंबित मामलों के समयबद्ध तरीके से निपटान** हेतु स्थापित किए गए थे।
- **11वें वित्त आयोग** ने देश भर में 1734 FTCs की स्थापना हेतु **अनुशंसा** की थी। उन्हें राज्य सरकारों द्वारा संबंधित उच्च न्यायालयों के परामर्श से स्थापित किया जाना था।
- FTCs की स्थापना यौन अपराधों, भ्रष्टाचार-विरोधी मामलों, दंगों और चेक बाउंसिंग से संबंधित मामलों के त्वरित निपटान हेतु **विभिन्न उच्च न्यायालयों के आदेश पर** भी की गयी है।
- इनके लिए संबंधित राज्यों के उच्च न्यायालयों द्वारा चयनित न्यायाधीशों को तदर्थ आधार पर नियुक्त किया गया था।
- **वर्ष 2011 के पश्चात् FTCs को केंद्रीय वित्त प्रदान नहीं कराया गया है।** हालांकि, राज्य सरकारें अपने स्वयं के वित्त पोषण के माध्यम से FTCs स्थापित कर सकती हैं।
- **14वें वित्त आयोग** ने 4,144 करोड़ रुपये की लागत से 1,800 FTCs की स्थापना के प्रस्ताव की अनुशंसा की है। इसने राज्य सरकारों से आग्रह किया है कि वे इस प्रयास हेतु केंद्रीय करों के संवर्धित अंतरण (अर्थात् 32% से 42%) का उपयोग करें। दिसंबर 2018 तक, देश भर में 699 FTCs कार्यरत थे।
- **कुछ उल्लेखनीय फास्ट ट्रैक मामले हैं -** बेस्ट बेकरी केस, जेसिका लाल मर्डर केस, 26/11 मुंबई मामला आदि।
- **हालांकि, FTCs के मंद और अप्रभावी कार्यसंचालन पर प्रश्न चिन्ह आरोपित किए गए हैं।** इनकी स्थापना के पश्चात् से लगभग 39 लाख मामले FTCs को हस्तांतरित किए गए, जिनमें से 6.5 लाख मामले अभी भी इनके पास लंबित हैं।

फास्ट ट्रैक कोर्ट के कार्य संचालन से संबंधी मुद्दे

- **अपर्याप्त संख्या:** विद्यमान मामलों के निपटान हेतु आवश्यक फास्ट ट्रैक कोर्ट्स की संख्या अपर्याप्त है। उदाहरण के लिए: दिल्ली में, फास्ट-ट्रैक कोर्ट में केवल एक या दो न्यायाधीश पदासीन होते हैं। अतिरिक्त जिला या सत्र न्यायाधीश के स्तर पर FTCs को **तदर्थ या अस्थायी आधार पर** संचालित किया जा रहा है, हालांकि वर्ष 2012 में उच्चतम न्यायालय ने निर्देश दिया था कि या तो उन्हें समाप्त कर दिया जाए या उन्हें स्थायी कर दिया जाए।
- **अत्यधिक कार्यभार:** विगत वर्षों में उन्हें आबंटित किए गए मामलों की संख्या में वृद्धि हुई है, जिसके कारण इन न्यायालयों के कार्यभार में वृद्धि हुई है, जो निर्णय प्रक्रिया को धीमा कर देता है और इससे निर्णयों की गुणवत्ता भी प्रभावित होती हैं।
- **अवसंरचना का अभाव:** इन न्यायालयों को भिन्न सुविधाओं के साथ स्थापित नहीं किया गया है, अपितु इनका संचालन मौजूदा न्यायालयों में ही होता है जो इनकी प्रभावशीलता को सीमित करता है। कुछ FTCs के पास पीड़ितों की **वीडियो और ऑडियो (दृश्य-श्रव्य) रिकॉर्डिंग** करने के लिए आवश्यक उपकरण भी उपलब्ध नहीं हैं।
- **ये मामलों के निपटान के लिए किसी विशेष, त्वरित प्रक्रिया का अनुपालन नहीं करते हैं** जिसके कारण नियमित न्यायालयों की भांति सामान्य विलंब की समस्या से ग्रसित हो जाते हैं।
- **वित्तीय अवरोध:** बृजमोहन लाल वाद में उच्चतम न्यायालय ने यह कहा कि **FTCs की निरंतरता राज्यों के अधिकार-क्षेत्र में है तथा इस हेतु उन्हें कोष उपलब्ध कराना राज्यों का उत्तरदायित्व है।** इस प्रकार, इस निर्णय ने FTCs को राज्य की दया पर निर्भर कर दिया है क्योंकि केवल कुछ राज्यों ने ही FTCs को समर्थन प्रदान करना जारी रखा है।

VISION IAS

आगे की राह

- **न्यायिक संरचनाओं को तर्कसंगत बनाना:** फास्ट-ट्रैक कोर्ट्स और विशेष न्यायालयों को अलग-अलग न्यायिक निकायों के तहत प्रशासित किया जाता है, जिनके मध्य **समन्वय या एकरूपता** की कमी होती है। इसलिए, केंद्र और राज्य सरकारों द्वारा **उचित एवं सुव्यवस्थित रीति** से न्यायालयों के कार्य संचालन की समीक्षा करने के लिए एक प्रमुख अभिकरण की स्थापना की जानी चाहिए।
- **क्षमता निर्माण और अवसंरचनात्मक सुधार:** यह फास्ट-ट्रैक कोर्ट्स की मूल संकल्पना में निहित है। इसलिए अतिरिक्त न्यायाधीशों की नियुक्ति एवं अवसंरचनात्मक विकास, जैसे- कोर्टरूम, तकनीकी सुविधाएं और पुस्तकालय आदि समय की मांग है। साथ ही, उच्चतम न्यायालय के सुझाव के अनुसार, तदर्थ न्यायाधीशों और सहायक कर्मचारियों की नियुक्ति **स्थायी आधार** पर की जानी चाहिए।
- **राज्य सरकारों को संवेदनशील बनाना: मुख्यमंत्रियों और मुख्य न्यायाधीशों के सम्मेलन** के अनुसार, राज्य सरकारों द्वारा संबंधित उच्च न्यायालयों के मुख्य न्यायाधीशों के परामर्श से उचित संख्या में FTCs की स्थापना की जानी चाहिए तथा इनकी स्थापना एवं इन्हें निरंतर संचालित रखने हेतु पर्याप्त वित्त उपलब्ध कराने के लिए आवश्यक कदम उठाने चाहिए।
- FTCs को सहायता प्रदान करने हेतु **त्वरित जांच** का एक समग्र दृष्टिकोण और नियमित न्यायालयों में अपनाई जाने वाली प्रक्रिया से भिन्न एक **विशेष प्रक्रिया** प्रदान करने की आवश्यकता है।

VISION IAS

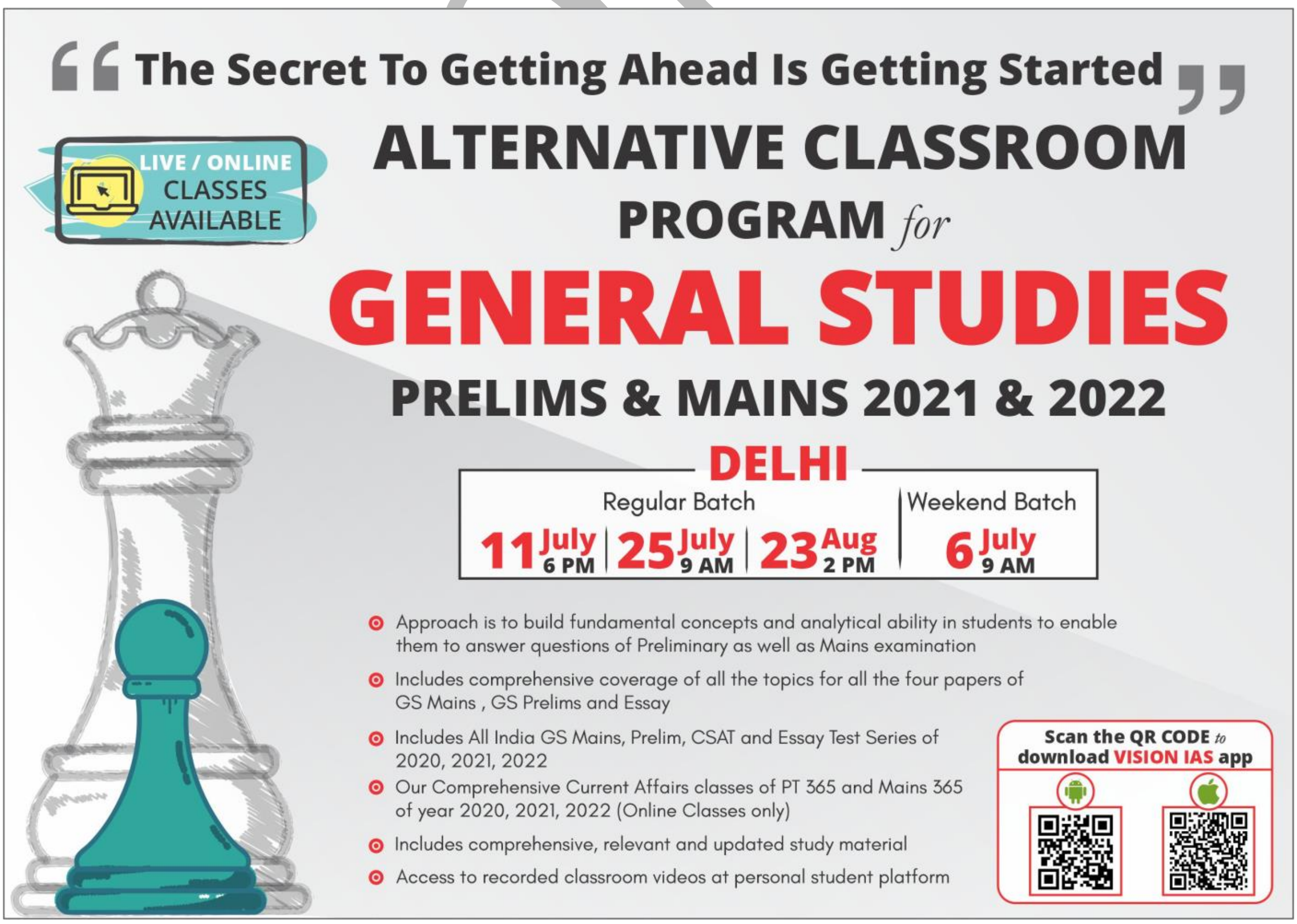

7. पारदर्शिता एवं जवाबदेही (Transparency and Accountability)

7.1. सूचना के अधिकार से संबंधित मुद्दे

(Issues Related to RTI)

7.1.1. सूचना के अधिकार के दायरे के अंतर्गत राजनीतिक दल

(Political Parties Under RTI)

पृष्ठभूमि

- केंद्रीय सूचना आयोग (CIC) द्वारा राजनीतिक दलों को **'लोक प्राधिकरण'** के रूप में घोषित किए जाने के बावजूद राजनीतिक दल सूचना का अधिकार (RTI) अधिनियम के दायरे से बाहर हैं।

RTI के तहत लोक प्राधिकरण' का अभिप्राय:

- RTI अधिनियम की **धारा 2(h)** के अनुसार "लोक प्राधिकरण" से अभिप्राय:
  - संविधान द्वारा या उसके अधीन;
  - संसद द्वारा निर्मित किसी अन्य विधि द्वारा;
  - राज्य विधानमंडल द्वारा निर्मित किसी विधि द्वारा; या
  - समुचित सरकार द्वारा जारी की गई अधिसूचना या दिए गए आदेश द्वारा स्थापित अथवा गठित किसी प्राधिकरण या निकाय या स्वायत्त सरकारी संस्था से है; तथा इसके अंतर्गत निम्नलिखित शामिल हैं-
    - कोई ऐसा निकाय जो केंद्रीय सरकार के स्वामित्वाधीन, नियंत्रणाधीन या उसके द्वारा प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध करवाई गई निधियों द्वारा वित्तपोषित हो। (RTI अधिनियम पर्याप्त वित्तपोषण को परिभाषित नहीं करता। परिणामस्वरूप प्राय: न्यायालयों को यह निर्धारित करने की आवश्यकता होती है कि किसी वित्तीय सहायता का कौन-सा विशेष स्वरूप या परिमाण पर्याप्त वित्तपोषण का सृजन करता है)।
    - कोई ऐसा गैर-सरकारी संगठन जो समुचित सरकार द्वारा प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से उपलब्ध कराई गई निधियों द्वारा वित्तपोषित हो।
- RTI अधिनियम नागरिकों को 'लोक प्राधिकरणों' के नियंत्रणाधीन सूचनाओं तक पहुंच के अधिकार से सशक्त बनाता है तथा धारा 2(f) में परिभाषित 'सूचना' के प्रकटीकरण में विफलता हेतु लोक प्राधिकरणों के अधिकारियों पर अर्थदंड आरोपित करने का प्रावधान किया गया है।

RTI के तहत लोक प्राधिकरणों को परिभाषित करना क्यों एक विवादास्पद मुद्दा बना हुआ है?

प्रमुख मुद्दा इस तथ्य से संबंधित था कि क्या विभिन्न कानूनों के अंतर्गत पंजीकृत संस्थाएं केवल पंजीकरण या निगमीकरण के कारण लोक प्राधिकरण मानी जाएंगी। हालांकि दिल्ली उच्च न्यायालय द्वारा स्पष्ट किया गया है कि केवल किसी विधान के तहत स्थापित किए जाने से कोई निकाय (जैसे कि कंपनी अधिनियम के अधीन कंपनियां अथवा संबंधित कानूनों के अंतर्गत सोसाइटीज/ट्रस्ट्स आदि) RTI अधिनियम के तहत एक लोक प्राधिकरण के रूप में स्वत: नामित नहीं हो जाएगा।

विवाद का एक अन्य मुद्दा यह भी है कि क्या परिभाषा का द्वितीय भाग परिभाषा के प्रथम भाग को अनुपूरित करता है या वे परस्पर स्वतंत्र हैं। हालांकि, दिल्ली उच्च न्यायालय ने यह स्पष्ट किया था कि द्वितीय भाग का प्रयोजन उन निकायों को अधिनियम के दायरे के अंतर्गत लाना है जिन्हें किसी अधिसूचना के द्वारा या अधीन स्थापित नहीं किया गया है।

अन्य प्रमुख मुद्दा विशिष्ट रूप से परिभाषा के एक भाग की व्याख्या से संबद्ध है अर्थात् स्वामित्व, नियंत्रण, पर्याप्त वित्तपोषण आदि को कैसे परिभाषित किया जाए। इसके संदर्भ में न्यायपालिका में परस्पर विरोधी मत विद्यमान हैं, उदाहरणार्थ:

- **नियंत्रण:** विभिन्न उच्च न्यायालयों ने निकायों के 'नियंत्रण' को **अनुच्छेद 12** में प्रदत्त **राज्य की परिभाषा** द्वारा अथवा विधि के अंतर्गत स्थापित सरकारी अभिकरणों द्वारा निरीक्षण और विनियमन किए जाने के आधार पर निर्धारित किया है। हालांकि, कुछ न्यायालयों ने यह तर्क दिया है कि विनियमन और निरीक्षण को नियंत्रण के समान नहीं माना जाना चाहिए।
- **पर्याप्त वित्तपोषण:** इसे RTI द्वारा परिभाषित नहीं किया गया है। साथ ही इसके संबंध में न्यायालयों द्वारा भी एकसमान मानदंड निर्धारित नहीं किए गए हैं। कुछ मामलों में वित्तपोषण के कुछ स्वरूपों जैसे कि सब्सिडी, भूमि अनुदान, कर्मचारियों के वेतन आदि

VISION IAS

को पर्याप्त वित्तपोषण के रूप में स्वीकार किया गया है जबकि कुछ अन्य मामलों में वित्तपोषण की मात्रा पर विचार किया गया है।

लोक प्राधिकरणों के रूप में राजनीतिक दल

- वर्ष 2013 में केंद्रीय सूचना आयोग की पूर्ण पीठ द्वारा छह राष्ट्रीय दलों - भारतीय जनता पार्टी (BJP), कांग्रेस, बहुजन समाज पार्टी (BSP), नेशनलिस्ट कांग्रेस पार्टी (NCP), कम्युनिस्ट पार्टी ऑफ़ इंडिया (CPI) तथा CPI(M) को **RTI अधिनियम के दायरे के तहत लाया गया था।** {ज्ञातव्य है कि 2016 में तृणमूल कांग्रेस को सातवें तथा जून 2019 में नेशनल पीपल्स पार्टी (NPP) को आठवें राष्ट्रीय दल के रूप में मान्यता प्रदान की गई है।}
- हालाँकि, राजनीतिक दलों ने उन पर निर्देशित RTI आवेदनों पर विचार करने के प्रस्ताव को अस्वीकृत कर दिया है।
- अनेक सक्रियतावादियों (activists) ने केंद्रीय सूचना आयोग के आदेशों के गैर-अनुपालन के आधार पर उच्चतम न्यायालय में याचिका दायर की है तथा मामला अभी लंबित है।

राजनितिक दलों को RTI के अधीन लाने के पक्ष में तर्क

- **वित्तपोषण में पारदर्शिता सुनिश्चित करने की आवश्यकता**
  - **एसोसिएशन फॉर डेमोक्रेटिक रिफॉर्म्स (ADR)** के अनुसार वित्त वर्ष 2004-05 और 2014-15 के मध्य राजनीतिक दलों की कुल आय का केवल 31.55% स्वैच्छिक अंशदान के माध्यम से प्राप्त हुआ था, जबकि राजनीतिक दलों द्वारा जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 की धारा 29(C) का लाभ उठाकर शेष 68.45% के लिए कोई विवरण प्रस्तुत नहीं किया गया। ज्ञातव्य है कि यह धारा राजनीतिक दलों को 20,000 रुपये से कम के किसी भी अंशदान को घोषित करने से छूट प्रदान करती है।
  - **क्रोनी कैपिटलिज्म-** वित्त वर्ष 2004-05 से वित्त वर्ष 2014-15 तक छह राष्ट्रीय दलों ने अपने कुल अंशदान का 88% (जो कि 20,000 करोड़ रुपये से अधिक था) कॉर्पोरेट या व्यापारिक घरानों से प्राप्त किया था। इसके प्रतिफल में कॉर्पोरेट को लाभ प्रदान किया जाना स्वाभाविक है।
  - **कालाधन:** ADR के अनुसार अंशदान का 34% दाता के पते या अन्य विवरण के बिना और 40% PAN विवरण के बिना प्राप्त किया गया है।
  - **अवैध विदेशी अंशदान:** विदेशी अंशदान (विनियमन) अधिनियम (FCRA), 1976 द्वारा प्रतिबंधित किए जाने के बावजूद राष्ट्रीय दल विदेशी अंशदान स्वीकार करते हैं। इस अधिनियम ने राजनीतिक दलों को विदेशी कंपनियों या विदेशी कंपनियों द्वारा नियंत्रित भारत में स्थित कंपनियों से अंशदान स्वीकार करने से प्रतिबंधित किया है।
- **राजनीतिक दल राज्य के महत्वपूर्ण अंग हैं:** CIC के अनुसार इन राजनीतिक दलों द्वारा निष्पादित भूमिका इनकी **लोक प्रकृति** को इंगित करती है। ये सरकारी निकायों की भांति कार्यों का निष्पादन करते हैं और अपने प्रत्याशियों के चयन पर उनका एकाधिकार होता है, जो अंततः सरकार का गठन करते हैं। अत: ये अपने कार्यों के लिए जन-सामान्य के प्रति उत्तरदायित्वों की उपेक्षा नहीं कर सकते हैं।
- **राजनीतिक दल लोक प्राधिकरण होते हैं:** केंद्रीय सूचना आयोग (CIC) ने कहा है कि राजनीतिक दल प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विभिन्न लाभ प्राप्त करते हैं, जैसे राजनीतिक दलों के कार्यालयों की स्थापना हेतु रियायती दरों पर भूमि, दूरदर्शन/ऑल इंडिया रेडियो पर समय का आवंटन और चुनाव के दौरान मतदाता सूची की प्रतियों की नि:शुल्क आपूर्ति आदि। अत: ये **धारा 2(h)** के तहत लोक प्राधिकरण हैं तथा RTI अधिनियम के अंतर्गत जवाबदेह हैं।
- **व्यापक लोक हित:** सूचना का प्रकटीकरण व्यापक लोक हित में आवश्यक है। यहाँ तक कि निर्वाचन सम्बन्धी कानूनों में सुधार पर भारतीय विधि आयोग की 170वीं रिपोर्ट द्वारा भी राजनीतिक दलों की कार्यपद्धति में आंतरिक लोकतंत्र, वित्तीय पारदर्शिता और उत्तरदायित्व को लागू करने की अनुशंसा की गई थी।

राजनीतिक दलों को RTI के अंतर्गत लाने के विपक्ष में तर्क

- **दल की कार्यप्रणाली को बाधित करना:** राजनीतिक दल सूचना का अधिकार अधिनियम के तहत अपनी आंतरिक कार्यप्रणाली और वित्तीय सूचना का प्रकटीकरण नहीं कर सकते हैं, क्योंकि इससे उनकी कार्यप्रणाली के संचालन में बाधा उत्पन्न होगी।
- **RTI का दुरुपयोग किया जा सकता है: RTI** किसी राजनीतिक दल के लिए एक प्रतिकूल पक्ष हो सकता है तथा प्रतिद्वन्द्वी इसका दुरुपयोग करते हुए दुर्भावनापूर्ण उद्देश्यों से इसका लाभ उठा सकते हैं।
- **लोक प्राधिकरण नहीं:** राजनीतिक दलों को संविधान के द्वारा या उसके प्रावधानों के अधीन अथवा संसद द्वारा निर्मित किसी भी अन्य विधि के द्वारा स्थापित या गठित नहीं किया जाता है। यहाँ तक कि जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के तहत किसी राजनीतिक दल का पंजीकरण भी सरकारी निकाय की स्थापना के समान नहीं है।

VISION IAS

- आयकर अधिनियम, 1961 और जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम, 1951 के तहत दलों के लिए **पारदर्शिता संबंधी उपबंध पहले से ही शामिल किए गए हैं।** ये उपबंध "राजनीतिक दलों के वित्तीय पहलुओं के संबंध में आवश्यक पारदर्शिता" की मांग करते हैं।
- **सार्वजनिक डोमेन में सूचना:** सरकार का मत है कि किसी राजनीतिक निकाय के संबंध में सूचना निर्वाचन आयोग की वेबसाइट पर पहले से ही सार्वजनिक डोमेन में उपलब्ध होती है।
- **RTI में उल्लिखित नहीं है:** कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग (DoPT) के अनुसार, RTI अधिनियम लागू करते समय राजनीतिक दलों को पारदर्शिता कानून के दायरे में लाने को परिकल्पित नहीं किया गया था।

निष्कर्ष

लोकतंत्र में राजनीतिक दलों द्वारा निर्वहन की गई भूमिका के महत्व को स्वीकार करते हुए यह आवश्यक है कि उनकी कार्यप्रणाली को ऐसी रीति से पारदर्शी बनाया जाए कि सम्पूर्ण निर्वाचन प्रक्रिया में लोगों के विश्वास में वृद्धि की जा सके। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि मौजूदा कानून राजनीतिक दलों की कार्यप्रणाली को विनियमित करने में सफल नहीं हुए हैं, कुछ रक्षोपायों के साथ राजनीतिक दलों को RTI के दायरे में लाना एक तार्किक कदम सिद्ध हो सकता है।

7.1.2. सूचना का अधिकार (RTI) अधिनियम की धारा 4

(Section 4 of the RTI Act)

सुर्खियों में क्यों?

हाल ही में, केंद्रीय सूचना आयोग (CIC) ने विभिन्न लोक प्राधिकरणों द्वारा **RTI अधिनियम की धारा 4** के तहत किए गए स्वैच्छिक प्रकटीकरण की गुणवत्ता सुनिश्चित करने हेतु एक पारदर्शिता अंकेक्षण (transparency audit) किया है।

संबंधित तथ्य

- हाल ही में भारत **वैश्विक RTI रैंकिंग** में **छठे** स्थान पर रहा।
- 'सूचना का अधिकार रेटिंग' एक्सेस इन्फो यूरोप (Access Info Europe: AIE) और सेंटर फॉर लॉ एंड डेमोक्रेसी (Centre for Law and Democracy: CLD) द्वारा प्रारंभ किया गया एक कार्यक्रम है। इसे **ट्रांसपेरेंसी इंटरनेशनल** द्वारा संचालित किया जाता है।

अंकेक्षण के निष्कर्ष

- यह पाया गया कि लेखांकित किए गए 838 लोक प्राधिकरणों में से 85% से अधिक ने बजट और प्रोग्रामिंग, पब्लिसिटी एवं पब्लिक इंटरफ़ेस तथा ई-गवर्नेंस से संबंधित सूचनाओं का प्रकटीकरण नहीं किया था।
- यह भी पाया गया कि अधिकांश लोक प्राधिकरणों द्वारा पारदर्शिता से संबंधित उपाय किए गए थे। हालांकि, आधिकारिक वेबसाइटों पर महत्वपूर्ण सूचनाएं पूरी तरह से प्रदर्शित नहीं की गई हैं।

सूचना का अधिकार (Right to Information:RTI) अधिनियम की धारा 4

- इसमें उल्लिखित है कि, प्रत्येक सरकारी विभाग को वार्षिक रिपोर्ट और वेबसाइटों के माध्यम से **स्वेच्छा से सूचनाओं का प्रकटीकरण** करना अनिवार्य है।
- यह अधिदेशित करता है कि लोक प्राधिकरणों के लिए अपने सभी रिकॉर्डों को RTI अधिनियम के अनुरूप सूचीबद्ध और इंडेक्स के रूप में बनाए रखना अनिवार्य है।

स्वैच्छिक प्रकटीकरण के लाभ:

- **भ्रष्टाचार को सीमित करना**: सरकार के कार्यों के बारे में सूचना प्रकटीकरण लोक अधिकारियों पर जनसामान्य की निरंतर निगरानी सुनिश्चित करता है जिससे सरकारों को अधिक जवाबदेह और कम भ्रष्ट बनाने में सहायता प्राप्त होती है।
- **भागीदारी में वृद्धि**: यह नागरिकों को प्रशासन संबंधी सूचनाओं के माध्यम से निर्णय लेने और नीति निर्माण की प्रक्रिया में उनकी भागीदारी सुनिश्चित करके सशक्त बनाता है। इस प्रकार की नीतियों से उन्हें लाभ होने की संभावना अधिक होती है तथा विशेष हित समूहों द्वारा उन्हें दिग्भ्रमित किये जाने की संभावना कम हो जाती है।
- **पहुँच संबंधी समानता:** अग्रिम प्रकटीकरण विशेष या कुछ व्यक्ति/व्यक्तियों की तुलना में सूचना को जनसामान्य के लिए समान रूप से उपलब्ध कराता है।
- **सुरक्षा:** प्रकाशित सूचना समाज में व्यक्तियों की सुरक्षा को भी संरक्षित करती है। कुछ व्यक्तियों के लिए सूचना की मांग करना कभी-कभी खतरनाक हो सकता है, विशेष रूप से यदि इसका प्रकटीकरण शक्तिशाली हित समूहों को नकारात्मक रूप से प्रभावित करता हो।
- **सूचना प्रबंधन में सुधार**: अग्रिम प्रकटीकरण इनकी पहुंच प्राप्त लोगों की संख्या और लोक प्रशासन पर भार दोनों के संदर्भ में, व्यक्तिगत सूचना अनुरोधों को संसाधित करने की तुलना में सूचना के प्रकटीकरण का एक अधिक कुशल साधन है।

VISION IAS

RTI की धारा 4 के गैर-अनुपालन हेतु उत्तरदायी प्रमुख कारण

- **लोक सूचना अधिकारियों (Public Information Officers: PIO) के मध्य जागरुकता की कमी: राज्य सूचना आयोग (SIC)** की एक वार्षिक रिपोर्ट के अनुसार, 80% लोक सूचना अधिकारियों (PIOs) और अपीलीय अधिकारियों (AAs) को RTI अधिनियम के मूलभूत प्रावधानों की जानकारी नहीं है।
- **मांग आधारित आपूर्ति**: सार्वजनिक प्राधिकारियों द्वारा स्वैच्छिक प्रकटीकरण को प्रभावी ढंग से सुनिश्चित करने के बजाय मांग पर सूचना प्रस्तुत करने पर ध्यान दिया जाता है।
- **निम्न गुणवत्ता वाली सूचनाएं प्रदान करना**: प्रदान की गई सूचना को नियमित रूप से अद्यतित नहीं किया जाता है। इससे उपलब्ध कराई गयी सूचनाओं की निरर्थकता को बढ़ावा मिलता है तथा वेबसाइटों पर सूचना के महत्वपूर्ण एवं प्रासंगिक तथ्यों की कमी होती है। यह प्रक्रियाओं में पारदर्शिता की कमी और संबंधित PIO को प्रदान किये गये अपर्याप्त प्रशिक्षण को दर्शाता है।
- **पुराने हो चुके रिकॉर्ड प्रबंधन दिशा-निर्देश**: केंद्र और अधिकांश राज्यों में वर्तमान रिकॉर्ड प्रबंधन दिशा-निर्देश RTI अधिनियम के तहत निर्दिष्ट आवश्यकताओं को पूरा करने के लिए अपर्याप्त हैं, क्योंकि **अनेक विभागों में किसी भी प्रकार की इलेक्ट्रॉनिक दस्तावेज़ प्रबंधन प्रणाली का अभाव** है।
- **रिकॉर्डों को व्यवस्थित रखने की उपेक्षा**: इसके कारण प्रासंगिक और स्पष्ट सारांश प्रदान करने के बजाय भारी मात्रा में असंसाधित जानकारी प्रदान करने की प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिलता है।
- **जवाबदेही का अभाव**: वर्तमान में इस अधिनियम के महत्वपूर्ण प्रावधानों के अनुपालन स्तर के निरीक्षण हेतु सूचना आयोग के पास उपलब्ध **उपाय एवं प्रक्रियाएं अपर्याप्त हैं**। इसके अतिरिक्त गैर-अनुपालन के मामले में सार्वजनिक प्राधिकरण के स्तर पर किसी भी अधिकारी का उत्तरदायित्व निर्धारित करने का कोई प्रावधान नहीं किया गया है।
- **आधारभूत अवसंरचना की अनुपलब्धता**: प्रत्येक लोक प्राधिकरण के पास फोटोकॉपी मशीनों जैसी आधारभूत अवसंरचना तथा आवश्यक एप्लीकेशन और कनेक्टिविटी सुविधाओं जैसे स्वचालन (automation) के आधारभूत स्तर की अनुपलब्धता RTI के कार्यान्वयन में बाधा उत्पन्न करती है।

आगे की राह

- **जागरुकता अभियान**: सरकार को जनता एवं साथ ही सरकारी निकायों को लक्षित करते हुए RTI अधिनियम के तहत स्वैच्छिक प्रकटीकरण के संबंध में उन्हें शिक्षित करने और प्रोत्साहित करने हेतु जागरुकता कार्यक्रमों का संचालन करना चाहिए।
- **सार्वजनिक अधिकारियों का प्रशिक्षण**: लोक अधिकारियों को स्वैच्छिक प्रकटीकरण नियमों का पालन करने के सम्बन्ध में तथा ICT और पारंपरिक प्रसारण चैनलों, दोनों का सर्वाधिक प्रभावी उपयोग करने के संबंध में प्रशिक्षित किया जाना चाहिए।
- **वेबसाइट की नियमित जाँच और लेखांकन हेतु पब्लिक रिकॉर्ड ऑफिस (PRO) की स्थापना**: PRO के पास मैनुअल को तैयार करने और अद्यतित करने, आधुनिकीकरण और डिजिटलीकरण, निगरानी, निरीक्षण और अन्य प्रासंगिक कार्यों को करने सहित सभी सार्वजनिक कार्यालयों में रिकॉर्डों की उचित देखरेख करने का उत्तरदायित्व होना चाहिए। पब्लिक रिकॉर्ड ऑफिस को केन्द्रीय सूचना आयोग (CIC) या राज्य सूचना आयोग (SIC) के समग्र मार्गदर्शन और पर्यवेक्षण के तहत कार्य करना चाहिए।
- **अवसंरचना में सुधार करना**: प्रशासनिक सुधार आयोग **(Administrative Reforms Commission: ARC)** की रिपोर्ट में उल्लेख किया गया था कि भारत सरकार फ्लैगशिप प्रोग्राम' के तहत आवंटित फंड का एक प्रतिशत (1%) पांच वर्ष के लिए अवसंरचना संबंधी आवश्यकताओं में सुधार हेतु आवंटित कर सकती है।
- **कठोर दण्ड** : सरकारी अधिकारी भ्रष्टाचार/लापरवाही संबंधी अपने कार्यों को छुपाने हेतु सूचना की सत्यता/तथ्यों को प्रकट नहीं करते हैं। अतः इस अधिनियम को आपराधिक कृत्य की परिधि में लाया जाना चाहिए।
- **रिकॉर्ड प्रबंधन में सुधार करना**: रिकॉर्ड रखने की प्रक्रियाओं को विकसित करने, उनकी समीक्षा करने एवं उन्हें संशोधित किये जाने की आवश्यकता है। उन्हें सूचीबद्ध करना, उनका इंडेक्स तैयार करना और व्यवस्थित भंडारण भी अनिवार्य बनाया जाना चाहिए। साथ ही सभी दस्तावेजों को तर्कसंगत, सुस्पष्ट व आसानी से पुनर्प्राप्ति योग्य (retrievable) सूचना के प्रारूप में परिवर्तित करने की आवश्यकता है।

7.2. शासकीय गुप्त बात अधिनियम

(Official Secrets Act: OSA)

सुर्खियों में क्यों?

भारत सरकार ने राफेल खरीद सौदे से संबंधित रिपोर्ट प्रसारित करने हेतु दो प्रकाशनों के विरुद्ध **शासकीय गुप्त बात अधिनियम को क्रियान्वित करने** और "आपराधिक कार्रवाई" प्रारंभ करने की बात कही है।

VISION IAS

शासकीय गुप्त बात (गोपनीयता) अधिनियम के बारे में

- यह भारत का **जासूसी-विरोधी (anti-espionage) अधिनियम** है। इसे **1923** में औपनिवेशिक काल के दौरान लागू किया गया था, जिसका उद्देश्य ऐसे सभी कार्यों पर प्रतिबंध आरोपित करना था जो किसी भी प्रकार से शत्रु राज्यों को सहायता प्रदान करते थे।
- स्वतंत्रता के पश्चात् भी इस अधिनियम को यथावत जारी रखा गया। **सरकारी कर्मचारियों और नागरिकों** पर लागू यह अधिनियम जासूसी, राजद्रोह और **राष्ट्र की अखंडता** के समक्ष विद्यमान अन्य संभावित खतरों से निपटने हेतु एक रूपरेखा प्रदान करता है।
- यह अधिनियम मुख्यतः दो पहलुओं से संबंधित है:
    - **धारा 3 -** जासूसी या गुप्तचरी; और
    - **धारा 5 -** सरकार की अन्य गोपनीय सूचनाओं का प्रकटीकरण। गोपनीय सूचना के अंतर्गत कोई भी शासकीय कोड, पासवर्ड, स्केच, योजना, मॉडल, लेख, नोट, दस्तावेज़ या सूचना शामिल हो सकती है। इस अधिनियम के तहत सूचना को संप्रेषित करने वाले व्यक्ति और सूचना प्राप्त करने वाले दोनों को दंडित किया जा सकता है।
- इनके अतिरिक्त, इसमें प्रतिबंधित/निषिद्ध क्षेत्रों में नियोजित सशस्त्र बलों से संबंधित सूचनाओं का प्रकटीकरण इत्यादि दंडनीय अपराध के रूप में वर्णित है।
- दोषी पाए जाने वाले किसी भी व्यक्ति को 14 वर्ष तक का कारावास, जुर्माना या दोनों से दंडित किया जा सकता है।

शासकीय गुप्त बात अधिनियम संबंधी मुद्दे

- **स्पष्टता का अभाव:** इस अधिनियम में**, "गुप्त बात (secret)"** या **"शासकीय गुप्त बात (official secrets)"** शब्दों या किसी भी चिन्हित मानदंड को परिभाषित नहीं किया गया है। लोक सेवक किसी भी सूचना को "गुप्त बात" के रूप में परिभाषित कर उसे प्रकट करने से मना कर सकते हैं।
- **सूचना के अधिकार (RTI) अधिनियम से टकराव:** RTI अधिनियम की **धारा 22**, OSA सहित अन्य कानूनों के प्रावधानों की तुलना में इसके प्रावधानों की सर्वोच्चता का प्रावधान करती है। यह OSA के प्रावधानों के साथ किसी बात के असंगत होने की स्थिति में भी RTI अधिनियम को एक अधिभावी (overriding) प्रभाव प्रदान करता है। हालांकि, RTI अधिनियम की धारा 8 और 9 के तहत, सरकार सूचना का प्रकटीकरण करने से मना कर सकती है। इस प्रकार, यदि सरकार प्रभावी तरीके से OSA की धारा 6 के तहत किसी दस्तावेज को "गुप्त बात" के रूप में वर्गीकृत करती है, तो उस दस्तावेज को RTI अधिनियम के दायरे से बाहर रखा जा सकता है।
    - सरकारों द्वारा इस अधिनियम की सूचनाओं के प्रकटीकरण न करने के लिए एक संरक्षक उपकरण के रूप में उपयोग करने और व्हिसलब्लोअर के विरुद्ध इसका दुरुपयोग करने हेतु आलोचना की गई है।
- **संदेश प्रदाता की असुरक्षा:** "राष्ट्रीय सुरक्षा" या सरकार की "स्थिरता" या "शासकीय गोपनीयता" के आधार पर संदेशवाहक को लक्षित करने और व्हिसलब्लोअर को अपराधी घोषित करने का प्रयास वस्तुतः अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता और लोगों के जानने के अधिकार पर कुठाराघात है।
- **पत्रकारिता संबंधी नैतिकता के विरुद्ध:** सरकार द्वारा इसके आधार पर पत्रकारों का उत्पीड़न किया जाता है और उन्हें अपने स्रोतों का प्रकटीकरण करने हेतु बाध्य किया जाता है।

अधिनियम की समीक्षा करने हेतु किए गए प्रयास

- **विधि आयोग:** आयोग ने **'राष्ट्रीय सुरक्षा के विरुद्ध अपराध'** पर इसकी रिपोर्ट में अवलोकन किया है कि "किसी परिपत्र को केवल गुप्त या गोपनीय के रूप में चिन्हित करने मात्र से ही उसे इस कानून के प्रावधानों के दायरे में नहीं लाया जाना चाहिए, यदि उसका प्रकाशन लोक हित में है और राष्ट्रीय आपातकाल एवं राज्य हित का कोई प्रश्न निहित नहीं है"। हालांकि, विधि आयोग ने **इस अधिनियम में किसी भी प्रकार के संशोधन की अनुशंसा नहीं की है।**
- **द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग (2006):** इसने अनुशंसा की कि OSA को निरस्त किया जाना चाहिए और राष्ट्रीय सुरक्षा अधिनियम में एक अध्याय (जिसमें शासकीय गुप्त बात से संबंधित प्रावधान शामिल हों) को जोड़कर इसे प्रतिस्थापित किया जा सकता है।
- **केंद्रीय गृह मंत्रालय के तहत गठित एक उच्च स्तरीय पैनल (2015)** ने 16 जून 2017 को मंत्रिमंडलीय सचिवालय को अपनी रिपोर्ट सौंपी, जिसमें अनुशंसा की गई थी कि **OSA को अधिक पारदर्शी और RTI अधिनियम के अनुरूप** बनाया जाए। किन्तु इस समिति की रिपोर्ट पर कोई कार्रवाई नहीं की गई है।
- **न्यायपालिका का दृष्टिकोण:** 2009 में दिल्ली उच्च न्यायालय ने निर्णय दिया कि केवल "गुप्त बात" के रूप में चिन्हित किसी दस्तावेज़ के प्रकाशन मात्र से ही कोई पत्रकार OSA के तहत दोषी नहीं होगा।

VISIONIAS

इस अधिनियम को लागू किए जाने संबंधी प्रमुख दृष्टांत

- **कुमार नारायण जासूस वाद (1985):** प्रधानमंत्री कार्यालय और राष्ट्रपति सचिवालय के 12 पूर्व स्टाफ सदस्यों को 10 वर्ष के कारावास की सजा से दंडित किया गया।
- **ISRO जासूसी वाद:** अवैध लाभ प्राप्ति हेतु पाकिस्तान को रॉकेट और क्रायोजेनिक तकनीक से संबंधित सूचनाएं प्रदान करने के कथित आरोप के लिए वैज्ञानिक एस. नांबी नारायण के विरुद्ध।
- **इफ्तिखार गिलानी वाद:** पाकिस्तान के लिए जासूसी का कार्य करने के आरोप में कश्मीर टाइम्स का पत्रकार जिसे 2002 में गिरफ्तार किया गया था।
- **माधुरी गुप्ता वाद:** पूर्व राजनयिक जिसे ISI को संवेदनशील सूचनाएं प्रदान करने के आरोप में तीन वर्ष के कारावास की सजा सुनाई गई थी।

आगे की राह

- इस अधिनियम को या तो निरसित किया जा सकता है या RTI अधिनियम जैसे अन्य अधिनियमों के साथ इसका विलय किया जा सकता है।
- इसके अतिरिक्त, विभिन्न कार्यवाहियों और कानून के अनुसार परिभाषित "गुप्त बात" के आधार पर वस्तुनिष्ठ मापदंडों का निर्माण किया जाना चाहिए।
- राज्य की सुरक्षा और अखंडता के प्रति खतरों को भारत के संविधान द्वारा प्रदत्त लोगों के मूल अधिकारों के साथ संतुलित किए जाने की आवश्यकता है।

VISION IAS

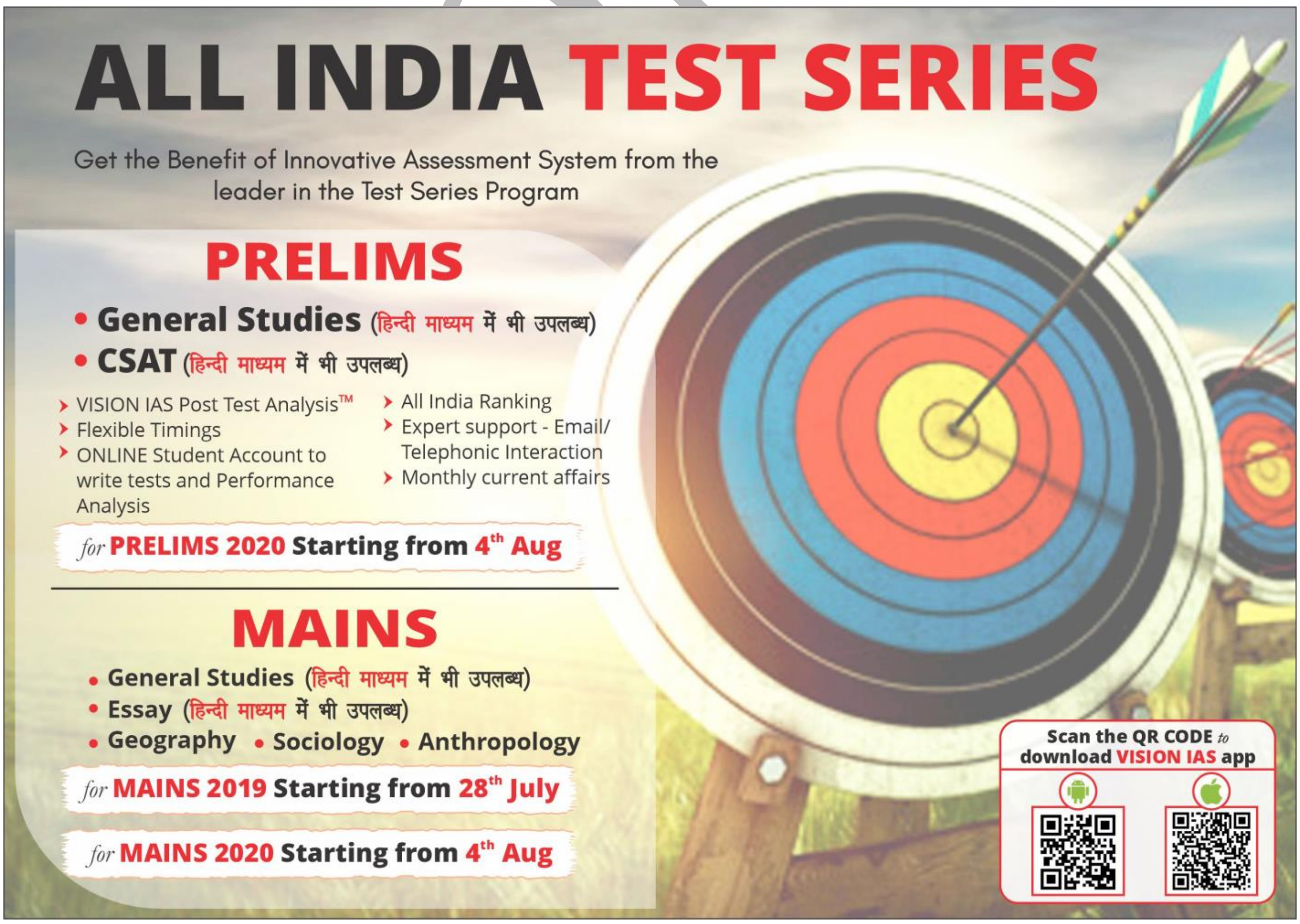

8. अभिशासन (Governance)

8.1. पार्श्व प्रवेश

(Lateral Entry)

सुर्ख़ियों में क्यों?

संघ लोक सेवा आयोग (UPSC) द्वारा भारत सरकार के अधीन **संयुक्त सचिव** के रूप में कार्य करने हेतु **नौ पेशेवरों** का चयन किया गया है।

पृष्ठभूमि

- इससे पूर्व, **कार्मिक और प्रशिक्षण विभाग (DoPT)** द्वारा **10 संयुक्त सचिव स्तर के पदों** हेतु आवेदन आमंत्रित किए गए थे। इनकी नियुक्ति प्रदर्शन के आधार पर **3 से 5 वर्ष के अल्पकालिक अनुबंध पर** की जानी थी।
- UPSC द्वारा इन पेशेवरों की अनुशंसा के पश्चात्, अब इनकी नियुक्ति को **भारत निर्वाचन आयोग** और आगामी सरकार द्वारा स्वीकृति प्रदान की जानी अनिवार्य है।
- **पार्श्व प्रवेश** वस्तुतः प्रशासनिक पदानुक्रम के मध्य या वरिष्ठ स्तरों पर केवल पदोन्नति के माध्यम से नियमित नियुक्ति के बजाय **संबंधित क्षेत्र के विशेषज्ञों (डोमेन एक्सपर्ट्स)** की प्रत्यक्ष नियुक्ति किए जाने को संदर्भित करता है।
    - प्रशासनिक सुधारों की चर्चा में **सामान्यज्ञ बनाम विशेषज्ञ** विषय पर बहस प्रारंभिक समय से ही होती रही है।
    - विभिन्न पेशेवरों, आयोगों और राजनीतिक टिप्पणीकारों द्वारा **पार्श्व प्रवेश** का समर्थन किया गया है।
    - इससे पूर्व भी भारत में **मुख्य आर्थिक सलाहकार, भारतीय रिज़र्व बैंक, नीति आयोग आदि के विशिष्ट पदों पर विशेषज्ञों को नियुक्त किया गया है**। लेकिन अब तक यह **भर्ती प्रक्रिया की संस्थागत विशिष्टता** नहीं बन सकी है।

पार्श्व प्रवेश की आवश्यकता

- **नीति निर्माण में नए आयामों और नई प्रतिभाओं का समावेशन:** नीति निर्माण प्रक्रिया की प्रकृति निरंतर जटिल होती जा रही है जिसके कारण महत्वपूर्ण पदों पर विशिष्ट कौशल और संबंधित क्षेत्र विशेषज्ञों को नियुक्त किया जाना आवश्यक है।
    - IAS अधिकारियों द्वारा सरकार की कार्य प्रणाली का केवल आंतरिक रूप से ही अवलोकन किया जाता है जबकि पार्श्व प्रवेश सरकार को विभिन्न हितधारकों, जैसे- निजी क्षेत्र, गैर-सरकारी क्षेत्र और जनसामान्य पर अपनी नीतियों के प्रभाव के आंकलन हेतु सक्षम बनाएगा।
    - प्रथम प्रशासनिक सुधार आयोग द्वारा 1965 में विशेषज्ञता की आवश्यकता पर बल दिया गया था। इसके अतिरिक्त सुरेंद्र नाथ समिति और होता समिति द्वारा क्रमशः 2003 और 2004 में तथा इसके पश्चात् द्वितीय प्रशासनिक सुधार आयोग द्वारा इसकी पुनः पुष्टि की गई।
- **दक्षता और शासन में वृद्धि:**
    - अखिल भारतीय सेवाओं में पदोन्नति संबंधी प्रगति (Career progression) लगभग स्वचालित होती है जो अधिकारियों में उदासीनता की भावना का समावेश कर सकती है। इस स्थिति में पार्श्व प्रवेश के द्वारा नियुक्ति विद्यमान प्रणाली में प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित कर सकती है।
    - नीति आयोग द्वारा 2017-2020 के लिए अपने तीन वर्षीय कार्य एजेंडे में वर्णित किया गया है कि शासन तंत्र में विभिन्न क्षेत्रों के विशेषज्ञों को पार्श्व प्रवेश के माध्यम से शामिल किया जाए, क्योंकि यह "स्थापित करियर ब्यूरोक्रेसी" के मध्य प्रतिस्पर्धा को प्रोत्साहित करेगा"।
- **शासन की जटिलता में वृद्धि:** वैश्वीकरण, शासन के डिजिटलीकरण, वित्तीय धोखाधड़ी, साइबर अपराध, संगठित अपराध, आतंकवाद व जलवायु-परिवर्तन जैसे नए मुद्दों के उद्भव के कारण दक्षता और क्षेत्र संबंधी विशेषज्ञता की आवश्यकता है।
- **अधिकारियों के रिक्तता अंतराल की पूर्ति:** कार्मिक लोक शिकायत और पेंशन मंत्रालय की एक रिपोर्ट के अनुसार, वर्तमान में देश में लगभग 1,500 IAS अधिकारियों के पद रिक्त हैं। बासवान समिति (2016) ने भी अधिकारियों की कमी को देखते हुए पार्श्व प्रविष्टि का समर्थन किया था।
- **नियुक्ति के लिए प्रतिभा पूल को विस्तारित करने में सहायक:** कम आयु में IAS अधिकारियों की भर्ती संभावित प्रशासनिक और निर्णयन क्षमताओं की जांच को कठिन बनाता है। प्रशासनिक रूप से कुछ दक्ष अभ्यर्थी भर्ती परीक्षा में असफल हो जाते हैं, जबकि सफल होने वाले कुछ अभ्यर्थियों के पास उपयुक्त दक्षता की कमी होती है।

VISION IAS

पार्श्व प्रवेश के पश्चात् सामना की जाने वाली चुनौतियां

- ***उपयोगिता के प्रयोग की सीमा:** अर्थात् सरकार इन पेशेवरों की विशेषज्ञता का लाभ किस स्तर तक उठा सकती है। यह मुख्यतः इस तथ्य पर निर्भर करेगा कि राजनीतिक कार्यपालिका इन बाह्य विशेषज्ञों की कार्यप्रणाली को सुगम बनाने की कितनी इच्छुक है और क्या इनकी पूर्ण क्षमता का उपयोग करने के लिए एक सक्षम परिवेश का निर्माण किया गया है।
- **उत्तरदायित्व और जवाबदेही सुनिश्चित करना कठिन:** निजी क्षेत्र से शामिल इन सदस्यों द्वारा अपने कार्यकाल के दौरान लिए गए निर्णयों के लिए (विशेष रूप से 3 से 5 वर्ष की एक छोटी अवधि के कार्यकाल के आलोक में) उत्तरदायित्व और जवाबदेही सुनिश्चित किया जाना अत्यधिक कठिन है।
- **दीर्घकालिक संबद्धता का अभाव:** वर्तमान सिविल सेवा का सकारात्मक पक्ष यह है कि दीर्घ कार्यावधि युक्त नियमित नीति निर्माताओं के सरकार में दीर्घकालिक हित निहित होते हैं।
- **फील्ड आधारित व्यवहारिक अनुभव की कमी:** पार्श्व प्रवेश के माध्यम से नियुक्त अधिकारियों में विशिष्ट क्षेत्र संबंधी ज्ञान अधिक हो सकता है, किंतु उनमें "फील्ड" में कार्य का व्यवहारिक अनुभव तुलनात्मक रूप से कम होगा।
- **नियमित नौकरशाही द्वारा प्रतिरोध किया जा सकता है:**
  - **सहयोग में कमी:** मौजूदा अधिकारी **बाह्य सदस्यों** के साथ कार्य करने का विरोध कर सकते हैं और **सामान्यज्ञ एवं विशेषज्ञों** के मध्य अपरिहार्य तनाव सामने आ सकता है।
  - **नौकरशाही की कार्य संस्कृति को समायोजित करने में कठिनाई:** परस्पर संबोधित करने के शिष्टाचार, कार्य की गति, नियमों का ज्ञान, समयबद्धता आदि के संबंध में।
  - **यह नियमित नौकरशाही को उसकी पूर्ण क्षमता एवं निष्पक्षता से कार्य करने के प्रति हतोत्साहित कर सकता है:** इसके बाद से नियमित नौकरशाहों के पास शीर्ष स्तर के प्रबंधकीय पदों पर पहुंचने का पर्याप्त आश्वासन नहीं रह जाएगा। संयुक्त सचिव और इससे उच्च पदों के लिए एक अनुबंध-आधारित प्रणाली को अपनाने से यह संदेश जाएगा कि लगभग 15-18 वर्षों की सेवा अवधि के पश्चात् ये केवल 'मिड-करियर पोजीशन' ही प्राप्त करने में सक्षम होंगे और इसके ऊपर की पदोन्नति के संबंध में पर्याप्त अनिश्चितता की स्थिति व्याप्त रहेगी।
- **आरक्षण संबंधी मुद्दा:** यह स्पष्ट नहीं किया गया है कि पार्श्व प्रवेश के माध्यम से भर्ती में आरक्षण को लागू किया जाएगा अथवा नहीं।

आगे की राह

- **पूर्व के अनुभवों से सीखने की आवश्यकता:** सार्वजनिक क्षेत्र के उद्यमों के संचालन हेतु निजी क्षेत्र के प्रबंधकों को शामिल करने का पूर्ववर्ती अनुभव पर्याप्त संतोषजनक नहीं रहा है। उदाहरण स्वरूप- एयर इंडिया, इंडियन एयरलाइंस आदि।
- **पार्श्व प्रवेशकों के दीर्घ कार्यकाल को सुनिश्चित करना:** उन्हें अपने दायित्वों को बेहतर रूप से समझने, सीखने और दृष्टिकोण व कार्य की रूपरेखा को कार्यान्वित करने हेतु पर्याप्त समय प्रदान किया जाना चाहिए।
- पार्श्व प्रवेश की प्रक्रिया को संस्थागत बनाने के अतिरिक्त भी विभिन्न सुधारों की आवश्यकता है, जैसे:
  - **आकांक्षी और सेवारत लोक सेवकों के लिए लोक प्रशासन विश्वविद्यालयों की स्थापना करना:** यह आकांक्षी लोक सेवकों के एक विशाल पूल का निर्माण करने के साथ-साथ लोक सेवकों को देश की राजनीतिक अर्थव्यवस्था का गहन ज्ञान, क्षेत्र संबंधी विशेषज्ञता और बेहतर प्रबंधकीय कौशल प्राप्त करने में सक्षम बना सकता है।
  - **निजी क्षेत्र में प्रतिनियुक्ति:** एक संसदीय पैनल द्वारा क्षेत्र संबंधी विशेषज्ञता और प्रतिस्पर्धा सुनिश्चित करने हेतु IAS और IPS अधिकारियों की निजी क्षेत्र में प्रतिनियुक्ति की अनुशंसा की गई है।
  - **प्रत्येक विभाग के लिए लक्ष्य निर्धारण और उनकी समीक्षा व्यवस्था को संस्थागत बनाना:** प्रत्येक मंत्रालय और सरकारी एजेंसी द्वारा स्पष्ट समय सीमा के साथ परिणाम आधारित लक्ष्य निर्धारित किए जाने चाहिए।

8.2. गवाह संरक्षण योजना

(Witness Protection Scheme)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में उच्चतम न्यायालय ने राज्यों को गवाह संरक्षण योजना अपनाने हेतु निर्देश दिया है।

अन्य महत्वपूर्ण तथ्य

- उच्चतम न्यायालय ने इस योजना को संसद/राज्य विधानमंडल द्वारा इस विषय से सम्बंधित विधि का प्रवर्तन किए जाने तक **भारतीय संविधान के अनुच्छेद 141/142 के अंतर्गत विधिक वैधता** प्रदान की है।
- **यद्यपि राष्ट्रीय अन्वेषण अभिकरण (NIA) अधिनियम के तहत** गवाह संरक्षण का प्रावधान पहले से ही है, तथापि इस योजना के तहत अन्य सभी मामलों में भी खतरे के स्तर के अनुसार गवाहों हेतु संरक्षण का विस्तार किया गया है।
- मामले से संबंधित निर्णय/समितियां

- **ज़ाहिरा शेख बनाम गुजरात राज्य वाद में** उच्चतम न्यायालय द्वारा यह माना गया कि स्वतंत्र और निष्पक्ष सुनवाई हेतु गवाह संरक्षण आवश्यक है।
- **विधि आयोग की 14वीं और परवर्ती रिपोर्टों ने** गवाहों को सुरक्षा प्रदान करने की आवश्यकता की ओर संकेत किया था।
- **राष्ट्रीय पुलिस आयोग की चतुर्थ रिपोर्ट (1980)** द्वारा भी इस मामले में निहित चिंताओं को व्यक्त किया गया था।

अन्य संबंधित तथ्य

- **अनुच्छेद, 141 -** उच्चतम न्यायालय द्वारा घोषित विधि भारत के राज्यक्षेत्र के भीतर सभी न्यायालयों पर आबद्धकर होगी।
- **अनुच्छेद, 142 -** इसके तहत उच्चतम न्यायालय **पूर्ण न्याय** (उन मामलों में जिनमें कुछ स्पष्ट अवैधता दिखती है, अनुपयुक्त न्यायाधिकार का प्रयोग अथवा स्पष्ट रूप से अन्याय हुआ है) सुनिश्चित करने हेतु यथोचित राहत प्रदान कर सकता है। उपचारात्मक याचिका (Curative petition) की उत्पत्ति इसी अनुच्छेद में अंतर्निहित है।

गवाह संरक्षण योजना की आवश्यकता

- **विधि का शासन:** यह सुनिश्चित करना अत्यावश्यक है कि गवाहों के लिए विद्यमान खतरों और धमकियों के कारण आपराधिक कृत्यों की जाँच, अभियोजन और सुनवाई पक्षपातपूर्ण न हो। अतः यह देश में **आपराधिक न्याय प्रणाली को सुदृढ़ करने में सहायता प्रदान करेगी** तथा राष्ट्रीय सुरक्षा परिदृश्य में सुधार भी करेगी।
- **गवाहों के अधिकार:** वर्तमान व्यवस्था में यद्यपि अपराधी या दोषी व्यक्तियों के लिए अनेक संवैधानिक और विधिक अधिकार उपलब्ध हैं, परन्तु गवाहों को सीमित अधिकार तथा संरक्षण ही प्राप्त होता है। अधिकारों का यह असंतुलन कभी-कभी गवाहों को असहयोगपूर्ण व्यवहार करने हेतु विवश कर देता है।
- **गवाहों के समक्ष उत्पन्न खतरे: अनेक हाई प्रोफाइल मामलों/घोटालों** जैसे उत्तर प्रदेश में NRHM घोटाले, बिहार में चारा घोटाले आदि में **मुख्य गवाहों की हत्या कर दी गई थी।** इससे इन मामलों की जांच प्रतिकूल रूप से प्रभावित हुई थी।
- **अन्य देशों में प्रावधान:** संयुक्त राज्य अमेरिका, यूनाइटेड किंगडम, कनाडा और न्यूज़ीलैण्ड जैसे देशों में गवाहों के संरक्षण हेतु पृथक कार्यक्रम/अधिनियम अपनाए गए हैं। अनेक देशों में स्थानीय पुलिस विशिष्ट मामलों में परिलक्षित आवश्यकतानुसार **अनौपचारिक संरक्षण** प्रदान करती है।

गवाह संरक्षण योजना

- **प्रक्रिया**
  - जिला विधिक सेवा प्राधिकरण (DLSA) का सचिव इस योजना के अंतर्गत किसी गवाह की पहचान की सुरक्षा / उसकी पहचान या स्थान में परिवर्तन, खतरे के वर्गीकरण आदि हेतु गवाह की सुरक्षा के लिए गवाह संरक्षण आदेश पारित कर सकता है।
  - DLSA के निर्देशन में जाँच के उपरांत ACP/DCP द्वारा खतरा विश्लेषण रिपोर्ट तैयार की जाएगी। पुलिस अधिकारी **खतरे के स्तर का वर्गीकरण** करेगा तथा सुधारात्मक उपायों का सुझाव देगा।
  - **इसके कार्यान्वयन का उत्तरदायित्व** इस योजना के तहत गठित **गवाह संरक्षण प्रकोष्ठ (cell) का होगा।**
- **शारीरिक सुरक्षा:**
  - यह सुनिश्चित करना कि जांच या सुनवाई के दौरान गवाह और अभियुक्त का प्रत्यक्षतः सामना न हो।
  - गवाह को परिवर्तित नाम या वर्णक्रम के साथ संदर्भित करके उसकी पहचान को गुप्त रखना।
  - सुनवाई की तिथि पर न्यायालय जाने और आने के दौरान संरक्षण प्रदान किया जाना और सरकारी वाहन उपलब्ध कराया जाना।
  - गहन सुरक्षा और गवाह के घर के आस-पास नियमित गश्त।
- **प्रौद्योगिकी का प्रयोग**
  - बंद कमरों में सुनवाई, वीडियो कॉन्फ्रेंसिंग, टेलीकांफ्रेंसिंग आदि का आयोजन।
- **न्यायिक सहायता**
  - स्थगन के बिना दैनिक आधार पर सुनवाई करके मामलों के शीघ्र निपटान को सुनिश्चित करना।
- **वित्तीय प्रावधान:**
  - गवाहों के स्थान परिवर्तन, उपजीविका अथवा नए व्यवसाय/पेशे की शुरुआत के उद्देश्य हेतु **गवाह संरक्षण कोष** का निर्माण।
  - इस योजना का उद्देश्य किसी गवाह को निडरतापूर्वक और सत्यवादिता से अभिसाक्ष्य प्रस्तुत करने में सक्षम बनाना है। इसके

VISION IAS

तहत न्यायालय तक गवाह को पुलिस संरक्षण प्रदान करने जैसे साधारण उपायों से लेकर संगठित आपराधिक समूह की संलिप्तता वाले मामलों जैसे जटिल मामलों में किसी सुरक्षित घर में अस्थायी निवास प्रदान करने, एक नवीन पहचान प्रदान करने या किसी अज्ञात स्थान पर स्थानांतरण जैसे असाधारण उपायों को अपनाया जा सकता है।

चुनौतियाँ

- **संसाधनों का अभाव:** भारतीय पुलिस बल के पास **कार्मिक बल (प्रति लाख जनसंख्या पर 136 पुलिसकर्मी) और निधियों** की अत्यधिक कमी है। ये दैनिक पुलिस कार्यों के निष्पादन हेतु भी अपर्याप्त हैं। ऐसे में गवाह संरक्षण संबंधी कार्य पुलिस कार्यभार में अतिरिक्त वृद्धि करेंगे।
- **अभियुक्त के अधिकार:** विधि आयोग द्वारा उल्लेख किया गया था कि यदि कोई अभियुक्त गवाह की प्रमाणिकता को सिद्ध करने की इच्छा रखता है तो ऐसी स्थिति में संरक्षण के प्रयोजनार्थ गवाह की पहचान को गुप्त रखना, उस अभियुक्त के एक निष्पक्ष सुनवाई की मांग संबंधी अधिकारों का हनन कर सकता है।
- **गवाह की निजता:** यह भी संभव है कि गवाह द्वारा उसको प्रदान की गयी शारीरिक सुरक्षा को पसंद न किया जाए क्योंकि इससे उसकी निजता और उसके आवागमन में व्यवधान उत्पन्न हो सकता है।
- **संरक्षण की समयसीमा:** संरक्षण हेतु समयसीमा का अनुमान लगाना कठिन हो सकता है। उदाहरणार्थ गवाह के संरक्षण की आवश्यकता न केवल सुनवाई के पूर्व बल्कि उसके दौरान या पश्चात् भी होती है। साथ ही आपराधिक न्यायिक प्रणाली में व्याप्त विलंब को स्वीकार करते हुए इसकी अवधि कई वर्षों की भी हो सकती है।
- **क्रियान्वयन संबंधी मुद्दे:** भारतीय दंड संहिता, किशोर न्याय अधिनियम और व्हिसलब्लोअर्स प्रोटेक्शन एक्ट आदि के अंतर्गत पहले से ही गवाह संरक्षण से संबंधित प्रावधान मौजूद हैं, परन्तु एक उपयुक्त संरचना की उपलब्धता का अभाव इनके प्रभावी क्रियान्वयन को बाधित करता है।

गवाह संरक्षण विधेयक, 2015

प्रस्तावित विधेयक निम्नलिखित प्रावधानों के माध्यम से गवाह के संरक्षण को सुनिश्चित करने का प्रयास करता है:

- गवाह संरक्षण के क्रियान्वयन हेतु गवाह संरक्षण कार्यक्रम का निर्माण और **राष्ट्रीय गवाह संरक्षण परिषद** और **राज्य गवाह संरक्षण परिषदों का गठन।**
- कार्यक्रम में ट्रायल कोर्ट द्वारा गवाह की जाँच और उसे संरक्षण प्रदान किये जाने हेतु एक रिपोर्ट तैयार करने के लिए "गवाह संरक्षण प्रकोष्ठ" का गठन। गवाह संरक्षण कार्यक्रम में प्रविष्ट होने के पश्चात् गवाह को "प्रोटेक्टी (सुरक्षा प्राप्त व्यक्ति)" के रूप में संदर्भित किया जाएगा।
- गवाह की पहचान की सुरक्षा को सुनिश्चित करने हेतु रक्षोपाय उपलब्ध करवाना।
- गवाह द्वारा स्वतंत्र रूप से अभिसाक्ष्य प्रस्तुतिकरण सुनिश्चित करने हेतु **मामलों को मूल अधिकार क्षेत्र से बाहर स्थानांतरित करने की सुविधा प्रदान करना।**
- प्रावधानों की अवहेलना करने और झूठी गवाही देने के विरुद्ध व्यक्तियों को कठोर दंड प्रदान करना।

आगे की राह

- पुलिस, सरकार और न्यायपालिका की भूमिका को स्पष्ट रूप से परिभाषित करते हुए **प्रभावशाली गवाह संरक्षण विधान का प्रवर्तन किया जाना चाहिए।** यह गवाहों में विश्वास का सृजन करेगा। इस संदर्भ में गवाह संरक्षण विधेयक, 2015 को उपयुक्त संशोधनों के साथ लागू किया जा सकता है।
- योजना के अंतर्गत स्थापित **गवाह संरक्षण प्रकोष्ठ** को नकली पहचान, स्थान परिवर्तन, रोजगार और आगामी कार्यवाही से संबंधित प्रावधानों की व्यवस्था करनी चाहिए।
- कुछ मामलों में गवाहों को चिकित्सा सुविधाएँ, सामाजिक सेवाएँ, राज्य द्वारा क्षतिपूर्ति, परामर्श और अन्य प्रकार की सहायता प्रदान की जानी चाहिए।
- गवाहों से निष्पक्षता, सम्मान और गरिमा के साथ व्यवहार किया जाना चाहिए। पुनः, संपूर्ण आपराधिक न्याय प्रक्रिया के दौरान उसे धमकी, उत्पीड़न या दुर्व्यवहार जैसे कृत्यों से सुरक्षा प्रदान की जानी चाहिए।
- त्वरित और वैज्ञानिक जांच, सुनवाई और दोषसिद्धि को समाहित करते हुए आपराधिक न्याय प्रणाली का समग्र सुधार गवाह संरक्षण की आवश्यकता को कम करेगा।

VISION IAS

8.3. "बियॉन्ड फेक न्यूज़" परियोजना

('Beyond Fake News' Project)

सुर्खियों में क्यों?

भारत में गलत सूचना किन तरीकों से और क्यों फैलाई जाती है, इस सन्दर्भ में ब्रिटेन (UK) स्थित प्रसारण चैनल BBC द्वारा **"बियॉन्ड फेक न्यूज़"** परियोजना लॉन्च की गई है।

स्वतंत्र अभिव्यक्ति का अधिकार और फेक न्यूज़

फेक न्यूज़ ऐसे समाचारों, कहानियों, सूचना, डेटा और रिपोर्ट को कहा जाता है जो पूर्ण या आंशिक रूप से असत्य हों। **फेक न्यूज़** द्वारा गलत सूचना का प्रसार किया जाता है जिससे लोकतंत्र में मीडिया की स्वतंत्रता का दुरुपयोग होता है और इसके परिणामस्वरूप निम्नलिखित तरीकों से स्वतंत्र अभिव्यक्ति का अधिकार प्रभावित होता है:

- भारत में समाचारों का स्वतंत्र प्रकाशन या प्रसारण संविधान के **अनुच्छेद 19** के अन्तर्गत प्रदत्त अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के मौलिक अधिकार से व्युत्पन्न है। हालांकि **फेक न्यूज़ से निपटने के लिए भारत में कोई विशिष्ट कानून नहीं** है।
- अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर केवल भारत के संविधान के **अनुच्छेद 19 (2)** में निर्धारित **सीमित परिस्थितियों** के अनुसार ही अंकुश लगाया जा सकता है और **झूठ या मिथ्या होना उन 'युक्तियुक्त निर्बंधनों' में से एक नहीं** है।
- 'फेक न्यूज़" की समस्या से निपटते समय किसी भी उत्तरदायी सरकार को यह ध्यान रखना चाहिए कि अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता का अनावश्यक रूप से हनन न हो।

पृष्ठभूमि

- फेक न्यूज़ को **प्रिंट, इलेक्ट्रॉनिक एवं सोशल मीडिया जैसे किसी भी माध्यम से** फैलाया जा सकता है।
- फेक न्यूज़ के कारण बड़े पैमाने पर अशांति, मृत्यु एवं क्षति के उदाहरण सामने आए हैं क्योंकि अधिकांश नागरिक मुख्यधारा के मीडिया द्वारा प्रकाशित किसी भी समाचार को **उसकी प्रामाणिकता की जांच किए बिना ही** सही समाचार के रूप में स्वीकार लेते हैं।
- इसका प्रयोग **लोगों की राय को प्रभावित करने, लोकप्रियता हासिल करने या कुछ व्यक्तियों या विरोधियों के चरित्र या छवि को धूमिल करने अथवा उन्हें बदनाम करने** के लिए किया जाता है।
- मुख्यधारा की मीडिया द्वारा **स्व-विनियमन** फेक न्यूज़ के संबंध में काफी हद तक **अप्रभावी** रहा है। फेक न्यूज़ को नियंत्रित करने हेतु **सरकार द्वारा किए गए किसी भी प्रत्यक्ष प्रयास** को लोकतंत्र के चौथे स्तंभ के रूप में कार्य करने वाली **मीडिया की स्वतंत्रता पर हमला** माना जाता है।

फेक न्यूज़ से प्रभावित लोगों के लिए उपलब्ध विधिक संसाधन

- **ब्रॉडकास्टिंग कंटेंट कंप्लेंट काउंसिल (Broadcasting Content Complaint Council: BCCC)**: यदि कोई प्रसारणकर्ता सांप्रदायिक घृणा उत्पन्न करता है, महिलाओं या बच्चों के विरुद्ध हिंसा को प्रोत्साहित करता है, हिंसा से जुड़े वीभत्स दृश्यों वाली सामग्री को प्रसारित करता है, अंधविश्वास या दवाओं एवं अन्य निषिद्ध पदार्थों के उपभोग को बढ़ावा देता है तो उसके विरुद्ध BCCC में आपत्तिजनक टीवी कंटेंट या फेक न्यूज़ से संबंधित एक शिकायत दर्ज़ करायी जा सकती है।
- **इंडियन ब्रॉडकास्ट फाउंडेशन (Indian Broadcast Foundation: IBF)**: यह 24x7 चैनलों (हर समय प्रसारण करने वाले चैनलों) द्वारा प्रसारित सामग्री के विरुद्ध शिकायतों को देखता है।
- **न्यूज ब्रॉडकास्टर्स एसोसिएशन (News Broadcasters Association: NBA):** यह प्राइवेट टेलीविजन समाचार चैनलों और सामयिक घटनाक्रम के प्रसारणकर्ताओं का प्रतिनिधित्व करता है। इसकी प्रकृति स्व-नियामक की है और यह समाचार प्रसारणकर्ताओं के विरुद्ध दर्ज की गयी शिकायत की निष्पक्ष जांच करता है।
- **प्रेस काउंसिल ऑफ इंडिया (Press Council of India):** प्रेस काउंसिल एक्ट, 1978 के अनुसार यह गलत सूचना प्रसारित करने के दोषी पाए गए समाचार पत्र, न्यूज़ एजेंसी, संपादक या पत्रकार को चेतावनी या सलाह दे सकती है अथवा उसकी निंदा कर सकती है।

सम्बंधित सूचना

- **फेक न्यूज़ के खतरे को रोकने** के लिए IIT-खड़गपुर एक ऐसा समाधान लेकर आया है जो वायरल हो रही सोशल मीडिया सामग्री से **महत्वपूर्ण सूचना छाँटने के लिए कृत्रिम बुद्धिमत्ता** का उपयोग करता है। यह कार्य मैन्युअल रूप से संभव नहीं है।
- इस तरह के अभिनव तरीकों को और विकसित किया जा सकता है और उनका प्रयोग वृहत स्तर पर किया जा सकता है।

VISION IAS

- **भारतीय दंड संहिता (IPC) की धारा 153 A और 295:** हेट स्पीच के रूप में परिभाषित की जा सकने वाली किसी फेक न्यूज़ का सृजन करने या प्रसार करने वाले व्यक्ति के विरुद्ध इन्हें लागू किया जा सकता है।
- **मानहानि याचिका दायर करना (Defamation suit):** फेक न्यूज़ के मामले में उपलब्ध यह एक और विधिक उपकरण है। मानहानि करने वाली फेक न्यूज़ के लिए व्यक्ति मानहानि का सिविल या आपराधिक मामला दर्ज करा सकता है।
- **सूचना प्रौद्योगिकी (IT) अधिनियम:** यह कानून प्रवर्तन एजेंसियों के नोटिस का अनुसरण करते हुए किसी भी आपत्तिजनक सामग्री को हटाने के लिए प्रमुख सर्च इंजन गूगल (Google) जैसी मध्यवर्ती संस्थाओं पर एक दायित्व आरोपित करता है।
- **न्यायालय के कानूनों की अवमानना:** न्यायिक कार्यवाहियों के बारे में झूठी कहानियां न्यायालय की अवमानना के कानूनों के दायरे में आ सकती हैं तथा संसद और अन्य विधायी निकायों के बारे में असत्य कहानियाँ विशेषाधिकारों का उल्लंघनन मानी जा सकती हैं।

8.4. IT नियमों का मसौदा

(Draft IT Rules)

सुर्खियों में क्यों?

इलेक्ट्रॉनिक्स और सूचना प्रौद्योगिकी मंत्रालय (MeITy) ने सूचना प्रौद्योगिकी (IT) अधिनियम 2000 में शामिल नियमों में प्रस्तावित संशोधनों पर सार्वजनिक टिप्पणियां मांगी है। इन संशोधनों का उद्देश्य व्हाट्सएप, फेसबुक और ट्विटर जैसे प्लेटफार्मों के लिए किसी "गैरकानूनी" सूचना के "प्रवर्तक" (originator) का पता लगाना अनिवार्य बनाना है।

IT मसौदे [मध्यवर्ती संस्थानों के लिए दिशा-निर्देश (संशोधन) नियम] 2018 के महत्वपूर्ण सुझाव

- **मध्यवर्ती संस्थाओं की परिभाषा: 50 लाख से अधिक उपयोगकर्ताओं** या सरकार द्वारा अधिसूचित सूची वाले किसी भी सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म को **"मध्यवर्ती संस्था"** के रूप में परिभाषित किया गया है। व्हाट्सएप, फेसबुक, इंस्टाग्राम, ट्विटर जैसे सोशल मीडिया प्लेटफॉर्म और गूगल जैसे सर्च इंजन मध्यवर्ती संस्था की परिभाषा में आते हैं।
- **गोपनीयता नीति:** मध्यस्थों (intermediary) को अपनी गोपनीयता नीति को प्रकाशित करना चाहिए। इसमें विभिन्न विवरणों के संबंध में उपयोगकर्ता को सूचित करना चाहिए, जैसे कि वे कोई ऐसी सूचना साझा न करें जो हानिकारक हो।
- **गैर-अनुपालन को सूचित करना:** नए नियम 3 (4) के अनुसार मध्यवर्ती संस्था के लिए यह आवश्यक है कि वह नियमों तथा विनियमों एवं यूज़र एग्रीमेंट व गोपनीयता नीति के गैर-अनुपालन की स्थिति में कम से कम महीने में एक बार अपने उपयोगकर्ताओं को सूचित करे।
- **संपर्क हेतु नोडल व्यक्ति:**मध्यवर्ती संस्थाओं से यह अपेक्षित है कि वे अनुपालन सुनिश्चित करने हेतु विधि प्रवर्तन एजेंसियों और अधिकारियों के साथ 24X7 समन्वय के लिए **'संपर्क हेतु एक नोडल व्यक्ति'** नियुक्त करेंगी।
- **गैर-कानूनी सामग्री को हटाना:** उपयुक्त प्राधिकारी द्वारा अधिसूचित किए जाने के बाद मध्यवर्ती संस्था को **गैरकानूनी सामग्री को 24 घंटे के भीतर हटाना** होगा या उस तक पहुंच को डिसेबल करना होगा।
- **सूचना के प्रवर्तक (originator) का पता लगाने की क्षमता:** संशोधित नियम 3 (5) एक **"ट्रेसेबिलिटी रिक्वायरमेंट"** को आरम्भ करेगा ताकि प्लेटफॉर्म पर सूचना के प्रवर्तक का पता लगाया जा सके।
- **गैरकानूनी सामग्री की पहचान करने के लिए युक्तियाँ:** ये नियम ऑनलाइन प्लेटफ़ॉर्मों के लिए **साइबर सुरक्षा सम्बन्धी घटनाओं की सूचना** इंडियन कंप्यूटर इमरजेंसी रिस्पांस टीम को देना भी आवश्यक बनाते हैं।

सूचना प्रौद्योगिकी अधिनियम 2000

- यह भारत में साइबरअपराध और इलेक्ट्रॉनिक कॉमर्स हेतु प्राथमिक कानून है, जो **यूनाइटेड नेशंस मॉडल लॉ ऑन इलेक्ट्रॉनिक कॉमर्स 1996** पर आधारित है।
- इसने इलेक्ट्रॉनिक रिकॉर्ड और डिजिटल हस्ताक्षर को मान्यता प्रदान करके एक प्रकार से भारत में ई-गवर्नेंस के आधार का निर्माण किया है।
- यह कंप्यूटर **स्रोत दस्तावेजों** के साथ छेड़छाड़, हैकिंग, कंप्यूटर स्रोतों का उपयोग कर धोखा देना, अश्लील सूचना को इलेक्ट्रॉनिक रूप में प्रकाशित करना, साइबर आतंकवाद इत्यादि अनेक साइबर अपराधों को परिभाषित करता है और उनके लिए दंड निर्धारित करता है।
- **IT अधिनियम की धारा 79** उन मामलों में मध्यवर्ती संस्थाओं को उत्तरदायित्व से उन्मुक्ति प्रदान करने का वर्णन करती है जहां वे केवल अंतिम-उपयोगकर्ताओं द्वारा प्रेषित और प्रकाशित सूचनाओं के वाहक'के रूप में कार्य कर रहे हैं। **धारा 79 (2) (C)** में उल्लेख है कि **मध्यस्थों को अपने कर्तव्यों का निर्वहन करते समय यथोचित कर्मठता का निर्वहन** करना चाहिए तथा केंद्र द्वारा निर्धारित दिशानिर्देशों का भी पालन करना चाहिए।

VISION IAS

इस प्रकार के विनियमों की आवश्यकता

- सोशल मीडिया ने कानून प्रवर्तन एजेंसियों के लिए नई चुनौतियां उत्पन्न की हैं, **क्योंकि इसका उपयोग आतंकवादियों की भर्ती,अश्लील सामग्री के प्रसार, दुर्भावना के प्रसार, हिंसा भड़काने, लोक व्यवस्था बिगाड़ने, फेक न्यूज़ आदि के लिए किया जा रहा है।**
- कानून के प्रभावी प्रवर्तन के लिए सरकार और प्रौद्योगिकी कंपनियों के मध्य सक्रिय सहयोग और समन्वय की आवश्यकता है।
- 2018 में मॉब लिंचिंग (भीड़ द्वारा हत्या) की अनेक घटनाएं प्रकाश में आयी थीं। इनमें से अधिकांश घटनाएं कथित रूप से व्हाट्सएप और अन्य सोशल मीडिया साइटों के माध्यम से भ्रामक समाचारों/अफवाहों के **प्रसार के कारण** हुई थीं। अतः सरकार द्वारा कानूनी ढांचे को सुदृढ़ किये जाने और सोशल मीडिया प्लेटफार्मों को कानून के तहत जवाबदेह बनाये जाने की आवश्यकता है।
- उच्चतम न्यायालय ने भी इस बात को मान्यता दी है कि ऑनलाइन प्लेटफॉर्मों द्वारा उचित कर्मठता का पालन और संविधान के अनुच्छेद 19 (2) के अनुरूप **'अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता पर युक्तियुक्त प्रतिबंधों'** का आरोपण किया जाना चाहिए, ताकि उनके प्लेटफॉर्मों का इस्तेमाल आतंकवाद, उग्रवाद, हिंसा और अपराध को करने और भड़काने के लिए न हो सके। न्यायालय द्वारा सरकार को ऐसी सामग्री के प्रकाशन से निपटने के लिए **मानक संचालन प्रक्रिया** (Standard Operating Procedure: SOP) की रूपरेखा तैयार करने की अनुमति प्रदान की गयी।

उत्पन्न चुनौतियां (Challenges posed)

- **"गैर-कानूनी सामग्री" की परिभाषा**: इस तरह की परिभाषा का दायरा अत्यंत व्यापक है और इससे सरकार को उसके विरुद्ध जाने वाली किसी भी सूचना पर प्रतिबंध लगाने की छूट प्राप्त हो सकती है। इस सन्दर्भ में कार्यकर्ताओं को भय है कि यह **"सेंसरशिप के चीनी मॉडल"** को बढ़ावा दे सकता है।
  - यह श्रेया सिंघल वाद में उच्चतम न्यायालय के निर्णय की भावना के विरुद्ध है। इस निर्णय के आधार पर IT एक्ट 2000 की धारा 66 A को समाप्त कर दिया गया था।
  - इस निर्णय में यह कहा गया था कि कानून में प्रयुक्त 'परेशान करने' 'असुविधा उत्पन्न करने' 'खतरा उत्पन्न करने' जैसे अस्पष्ट और व्यक्तिपरक पद आपराधिक कार्यवाही के दायरे में नहीं आते हैं।
  - **यदि कोई दंड कानून निश्चितता के साथ आपराधिक कृत्य को परिभाषित करने में विफल रहता है, तो उसे अस्पष्टता के आधार पर शून्य घोषित किया जा सकता है।**
- **सरकार का हस्तक्षेप**: प्रारूप संशोधन व्हाट्सएप जैसे मैसेजिंग प्लेटफॉर्म पर एन्क्रिप्शन को तोड़ने की अनुमति देता है, लेकिन इसमें सरकारी दुरुपयोग या हस्तक्षेप के विरुद्ध किसी भी न्यायिक सुरक्षा उपाय का अभाव है। यह सूचनात्मक निजता के संवैधानिक अधिकार का उल्लंघन करता है और **पुट्टस्वामी निर्णय (2017)** की भावना के विरुद्ध है।
- **प्रो-एक्टिव सेंसरशिप**: मध्यस्थों को इंटरनेट पर किसी भी "गैरकानूनी" सामग्री को ब्लॉक करने या इसी कार्य के लिए स्वचालित युक्तियों का प्रयोग करने की छूट देना (बिना किसी निगरानी के), उन्हें बिना किसी अधिकार के ही न्यायकर्ता बना देता है तथा अभिव्यक्ति की स्वतंत्रता के अधिकार का उल्लंघन करता है। नियम इस तरह की किसी कार्यवाही के लिए किसी **प्रक्रिया या अभिप्राय का प्रावधान नहीं** करते हैं।
- **दीर्घावधि तक डेटा बनाए रखना:** वाक्यांश, "सरकारी एजेंसियों" को परिभाषित नहीं किया गया है और दीर्घावधि तक डेटा बनाए रखने के लिए विशिष्ट परिस्थितियों को भी परिभाषित नहीं किया गया है। इस प्रकार उपयोगकर्ता की जानकारी के बिना भी डेटा को बनाये रखा जा सकता है और यहां तक कि उपयोगकर्ता द्वारा मध्यस्थ के सर्वर से डेटा को हटाने के बावजूद भी डेटा को बनाए रखा जा सकता है।
- **प्रेरित सेल्फ-सेंसरशिप:** प्रारूप नियम 3(4) सेल्फ-सेंसरशिप को प्रेरित कर सकता है क्योंकि इसके अनुसार उपयोगकर्ताओं को वैधानिक आवश्यकताओं के बारे में मासिक रूप से सूचित करना बाध्यकारी है। इस प्रकार के मानदंडों के फलस्वरूप छोटे स्टार्ट-अप्स और उद्यमियों के लिए उत्पाद में परिवर्तन करने की आवश्यकता हो सकती है जो उनकी लागत को बढ़ा सकता है।

वस्तुतः निजता व सुरक्षा के बीच के संतुलन को अक्षुण्ण बनाए रखने और अत्यधिक कार्यकारी हस्तक्षेप की सम्भावना को सीमित करने की आवश्यकता है। लेकिन डिजिटल सूचना संरचना में इस तरह के बदलावों को सभी हितधारकों के साथ परामर्श की प्रक्रिया के बाद ही लाया जाना चाहिए।

8.5. भारत में ट्रेड यूनियन

(Trade Unions in India

सुर्खियों में क्यों?

हाल ही में, सरकार ने केंद्र और राज्य स्तर पर ट्रेड यूनियनों को मान्यता प्रदान करने के संबंध में कुछ प्रावधानों को शामिल करने हेतु **ट्रेड यूनियन एक्ट, 1926** में संशोधन की स्वीकृति प्रदान की है।

ट्रेड यूनियन अधिनियम, 1926

- इसमें 'ट्रेड यूनियन' को एक संगठन के रूप में परिभाषित किया गया है जिसका प्राथमिक उद्देश्य कर्मकार एवं नियोक्ता या कर्मकार एवं कर्मकार अथवा नियोक्ता एवं नियोक्ता के मध्य संबंधों को विनियमित करना है।
    - यह अस्थायी या स्थायी हो सकता है।
    - यह किसी भी व्यापार या व्यवसाय के संचालन पर प्रतिबंधात्मक शर्तें आरोपित कर सकता है।
    - इसमें दो या दो से अधिक ट्रेड यूनियनों का कोई भी परिसंघ शामिल होता है।
- यह भारत में ट्रेड यूनियनों के **गठन और पंजीकरण** का उपबंध करता है।
- यह सात श्रमिकों के किसी भी संघ को एक संघ के रूप में पंजीकृत होने की अनुमति प्रदान करता है।
- यह अधिनियम **जम्मू और कश्मीर राज्य** को **छोड़कर** समस्त भारत पर लागू है।
- ट्रेड यूनियन एक्ट 1926 के तहत **सरकारी कर्मचारियों द्वारा** ट्रेड यूनियनों **का गठन नहीं किया जा सकता है।**

पृष्ठभूमि

- विद्यमान अधिनियम में केवल ट्रेड यूनियनों के **पंजीकरण** संबंधी उपबंध किए गए हैं। वर्तमान में इस अधिनियम में यूनियनों को मान्यता प्रदान करने संबंधी कोई प्रावधान नहीं है।
- वर्तमान में, एक त्रिपक्षीय राष्ट्रीय निकाय द्वारा सेंट्रल ट्रेड यूनियन संगठनों (CTUOs) के रूप में ट्रेड यूनियन संगठनों को नामित करने के लिए सदस्यता संबंधी मानदंडों को निर्धारित किया जाता है।
- इस प्रक्रिया के अनुसार, **मुख्य श्रम आयुक्त** द्वारा सत्यापन प्रक्रिया के पश्चात **13 CTUOs** को मान्यता प्रदान की गई है।

भारत में ट्रेड यूनियनिज्म

- **भारत में पहला संगठित श्रमिक आंदोलन 1884 में एन. एम. लोखंडे** द्वारा किया गया था, कारखानों में मजदूर वर्ग की कार्य स्थितियों का अध्ययन करने के लिए तत्कालीन ब्रिटिश सरकार द्वारा नियुक्त फैक्ट्री कमीशन को अभिवेदन प्रस्तुत करने हेतु श्रमिकों के एक सम्मेलन का आयोजन किया था।
- 1920 में, भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के नेताओं ने ट्रेड यूनियनिज्म के विकास की आवश्यकता के कारण **अखिल भारतीय ट्रेड यूनियन कांग्रेस (AITUC)** की स्थापना की।
- **एन. एम. जोशी को भारत में आधुनिक ट्रेड** यूनियनिज्म **का जनक माना जाता है** और उन्होंने 1921 में विधानसभा में ट्रेड यूनियन बिल प्रस्तुत किया था।

राष्ट्र के लिए ट्रेड यूनियन का महत्व

- **सामूहिक सौदेबाजी और श्रमिक कल्याण:** सामूहिक सौदेबाजी करने हेतु ट्रेड यूनियन श्रमिकों के लिए एक उपकरण है। ट्रेड यूनियनों वाले उद्योगों में सदैव श्रमिकों को उच्च वेतन प्राप्त होता है। ट्रेड यूनियन रोजगार के बेहतर नियमों और शर्तों तथा अनुकूल कार्यस्थल मानकों के लिए नियोक्ताओं के साथ वार्ता करती है।
- **सामंजस्यपूर्ण कर्मचारी-नियोक्ता संबंध:** प्रबंधन के समक्ष श्रमिकों के मुद्दों को प्रस्तुत कर ट्रेड यूनियन औद्योगिक असंतोष, हिंसा, हड़ताल आदि को रोकते हैं जो देश की समग्र उत्पादकता और अर्थव्यवस्था के लिए बेहतर होता है।
- **सामाजिक उत्तरदायित्व:** ट्रेड यूनियन प्रायः कौशल उन्नयन के लिए शैक्षिक सहायता और प्रशिक्षण प्रदान करते हैं।
- **बेहतर विधि-निर्माण:** ट्रेड यूनियन बेहतर श्रम और औद्योगिक विधियों के लिए श्रमिकों की मांग को सुदृढ़ करते हैं। श्रमिकों और उनके परिवारों का प्रतिनिधित्व करने के लिए यूनियनों की क्षमता एक गुण के रूप में होती है, जिसके लिए राजनीतिक दल अनुकूल श्रम कानूनों को प्रस्तावित कर लाभ प्राप्त करने का प्रयास करते हैं।

निम्नलिखित प्रमुख संशोधन प्रस्तावित किए गए हैं-

- मूल अधिनियम में धारा 10(A) को जोड़ा जाएगा, जो केंद्र सरकार के स्तर पर **ट्रेड यूनियनों और ट्रेड यूनियन संघों को मान्यता प्रदान करने हेतु केंद्र और राज्य सरकारों को सशक्त बनाएगा।** वैधानिक मान्यता प्राप्त करना इसलिए भी आवश्यक है, क्योंकि किसी उद्योग या प्रतिष्ठान के मान्यता प्राप्त व्यापार संघ को नियोक्ता के साथ **सौदेबाजी या वार्ता करने के अधिकार** प्राप्त होते हैं।
- केंद्र या राज्य सरकार प्राधिकरण को इस प्रकार की मान्यता से उत्पन्न विवादों और इस प्रकार के विवादों का निर्णायक तरीके से निर्णय लेने हेतु **आगे नियम बना सकती है।**

विधेयक की आलोचना

- यूनियनों के मध्य इस संबंध में चिंताएं व्याप्त हैं कि यह त्रिपक्षीय सहमति आधारित विद्यमान व्यवस्था से इतर यूनियनों को मान्यता प्रदान करने संबंधी **सरकार को विवेकाधीन शक्तियां** प्रदान करता है।
    - यह भारत के ट्राई-पार्टीज कंसल्टेशन (इंटरनेशनल लेबर स्टैण्डर्ड) कन्वेंशन, 1976 के तहत सामाजिक संवाद की प्रतिबद्धता के विरुद्ध है।

VISION IAS

- उद्यम/स्थापना स्तर पर ट्रेड यूनियनों की अनिवार्य मान्यता का मुद्दा अभी भी विद्यमान है, जो श्रमिकों की सामूहिक सौदेबाजी की शक्ति को कम करने वाले प्रमुख मुद्दों में से एक है।
- वर्तमान ट्रेड यूनियन एक्ट, 1926 के अनुसार **संविदा कर्मचारी** ट्रेड यूनियनों का हिस्सा नहीं हो सकते हैं। वर्तमान युग में बढ़ती गिग इकॉनमी के कारण अधिकांश नौकरियां संविदात्मक हैं, इस अधिनियम में संशोधन के माध्यम से संविदा कर्मियों के **अधिकारों के मुद्दों** का समाधान करने की आवश्यकता है।

भारत में ट्रेड यूनियनों के समक्ष आने वाली समस्याएं

- **असमान विकास:** ट्रेड यूनियन गतिविधियां वृहत उद्योगों तक ही सीमित हैं।
- **निम्न सदस्यता**: हालांकि, भारत में ट्रेड यूनियनों की संख्या में अत्यधिक वृद्धि हुई है, इसके बावजूद प्रति संघ सदस्यता में गिरावट दर्ज की गई है।
- **यूनियनों की बहुलता:** एक ही प्रतिष्ठान में कई ट्रेड यूनियन विद्यमान हो सकते हैं, क्योंकि ट्रेड यूनियन एक्ट, 1926 के अनुसार सात श्रमिकों का कोई भी संघ यूनियन के रूप में पंजीकृत हो सकता है।
- **इंटर यूनियन प्रतिद्वंद्विता:** यूनियनों ने श्रमिकों के मध्य अधिक प्रभाव स्थापित करने हेतु एक-दूसरें को दबाने की कोशिश की है, इस प्रकार समग्र रूप से इसने संघवाद को हानि पहुंचाई है।
- **सार्वजनिक समर्थन का अभाव** क्योंकि ट्रेड यूनियन अपनी मांगों को पूरा करने हेतु प्रायः हड़ताल और विरोध जैसे माध्यमों का उपयोग करते हैं, जिसके परिणामस्वरूप लोगों को असुविधा का सामना करना पड़ता है।

8.6. भारत में सहकारी समितियां

(Cooperatives in India)

सुर्ख़ियों में क्यों?

केंद्रीय कृषि मंत्री द्वारा **राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (NCDC) की नई योजना 'युवा सहकार उद्यम सहयोग एवं नवाचार योजना' प्रारंभ की गई है।**

पृष्ठभूमि

- एक ही प्रकार की समितियों को शासित करने वाले कानूनों की भिन्नता एवं बहुलता की समस्या के समाधान हेतु संसद द्वारा **"मल्टी स्टेट कोऑपरेटिव सोसाइटी एक्ट, 1984"** अधिनियमित किया गया था।
- इसके परिणामस्वरूप, भारत में सहकारी समितियों की सफलता के अनेक दृष्टांत दृष्टिगोचर हुए हैं जैसे **हरित क्रांति और श्वेत क्रांति।**
- भारत सरकार द्वारा **"राष्ट्रीय सहकारिता नीति 2002"** की घोषणा की गई थी।

सहकारी समितियां क्या है?

- सहकारी समिति, संयुक्त स्वामित्व और लोकतांत्रिक नियंत्रण से युक्त उद्यम के माध्यम से अपने साझे आर्थिक, सामाजिक और सांस्कृतिक हितों एवं आकांक्षाओं की पूर्ति हेतु ऐच्छिक रूप से संगठित व्यक्तियों का एक **स्वायत्त संघ** होता है।
- व्यवसायिक उद्यम के रूप में सहकारी समिति स्वामित्व और नियंत्रण जैसे कुछ बुनियादी हितों को निर्धारित करती हैं परन्तु ये हित प्रत्यक्षतः उपयोगकर्ता में निहित होते हैं।
- इसलिए, लाभप्रदता की आवश्यकता सदस्यों की आवश्यकताओं और समुदाय के व्यापक हित से संतुलित होती है।

संवैधानिक प्रावधान

- **राज्य की नीति के निदेशक तत्व:** भाग IV, अनुच्छेद 43, राज्य को ग्रामीण क्षेत्रों में कुटीर उद्योगों को वैयक्तिक या सहकारी आधार पर बढ़ाने का प्रयास करने हेतु निर्देशित करता है।
- यह भारतीय संविधान की **राज्य सूची (7वीं अनुसूची) की प्रविष्टि 32** के तहत उपबंधित **राज्य सूची का विषय** है।
- **अनुच्छेद 14** (समानता का अधिकार) और **अनुच्छेद 19(1)(C)** 'सहकारी समितियों के गठन के अधिकार के रूप में सहकारी समितियों के गठन को मूल अधिकार के रूप में शामिल किया गया है।

राष्ट्रीय नीति का अंतिम उद्देश्य-

- सहकारी समितियों के प्रोत्साहन और विकास हेतु सहायता प्रदान करना।
- क्षेत्रीय असंतुलन को कम करना।
- सहकारी शिक्षा, प्रशिक्षण और मानव संसाधन विकास को सुदृढ़ता प्रदान करना।
- **वी. एस. व्यास समिति** (2001 और 2004) जैसी विभिन्न समितियों ने मौजूदा सरकार के प्रभुत्व वाले सहकारी कानूनों को नए जन केंद्रित कानून द्वारा प्रतिस्थापित करने की आवश्यकता का समर्थन किया है।

VISION IAS

राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम (NCDC) से संबंधित तथ्य

- यह **विशेष रूप से सहकारी क्षेत्र के लिए कार्य करने वाला** शीर्ष वित्तीय एवं विकासात्मक संगठन है। इसका गठन **कृषि और किसान कल्याण मंत्रालय** के अधीन एक **सांविधिक संगठन** के रूप में किया गया है।
- यह कृषि और संबद्ध क्षेत्रों जैसे डेयरी, कुक्कुट पालन, पशुधन, मत्स्य पालन, कपास की ओटाई एवं कताई, चीनी और अधिसूचित सेवाओं जैसे आतिथ्य, परिवहन, ग्रामीण आवासन, अस्पताल/स्वास्थ्य देखभाल आदि से संबंधित क्षेत्रों को सुदृढ़ता एवं प्रोत्साहन प्रदान करता है।

'युवा सहकार' से संबंधित तथ्य

- इसे NCDC द्वारा सहकारी व्यावसायिक उद्यमों में युवाओं को आकर्षित करने के लिए प्रारंभ किया गया है। यह सहकारी समितियों को नए और नवाचारी क्षेत्रों में उद्यम स्थापित करने के लिए प्रोत्साहित करेगा।
- इस योजना को NCDC द्वारा निर्मित "कोआपरेटिव स्टार्ट-अप एंड इनोवेशन फंड (CSIF)" से संबद्ध किया जाएगा।
- परियोजना को विशेष श्रेणियों में परियोजना लागत के 80% तक जबकि अन्य श्रेणी में 70% तक वित्तपोषित किया जाएगा।

भारत के लिए सहकारी क्षेत्र का महत्व

भारत जैसे विशाल देश में सहकारिता का बहुत अधिक महत्व है क्योंकि यह निर्धन, अशिक्षित और अकुशल लोगों के लिए एक संगठन की सुविधा प्रदान करता है।

- **महत्वपूर्ण क्षेत्रों तक पहुँच:** यह कृषि ऋण एवं धन की आपूर्ति करता है तथा ऐसे महत्वपूर्ण क्षेत्रों में जहाँ राज्य और निजी क्षेत्र पर्याप्त सहायता प्रदान करने में सक्षम नहीं हैं वहां वस्तुओं एवं सेवाओं के वितरण की क्षमता रखता है।
- **महत्वपूर्ण आगत:** ये कृषि-क्षेत्र के लिए रणनीतिक आगत प्रदान करते हैं तथा उपभोक्ता समितियां रियायती दरों पर उपभोग आवश्यकताओं को पूर्ण करती हैं। यह कृषि विकास की बाधाओं का निवारण करती है।
- **किसानों के लिए लाभ:** विपणन समितियां किसानों को लाभकारी मूल्य प्राप्त करने में सहायता प्रदान करती हैं और सहकारी प्रसंस्करण इकाइयां कच्चे उत्पादों के मूल्यवर्धन में सहायक हैं।
- **अवसंरचना निर्माण:** इसके अतिरिक्त, सहकारी समितियां शीत भंडार गृहों सहित भंडारण गोदामों, ग्रामीण सड़कों के निर्माण में सहायता कर रही हैं तथा सिंचाई, विद्युत, परिवहन एवं स्वास्थ्य जैसी सुविधाएं प्रदान कर रही हैं।
- **नौकरशाही के हस्तक्षेप से परे:** यह नौकरशाही संबंधी बुराइयों और राजनीतिक गुटबंदी को कम करती है। यह कृषि और संबद्ध गतिविधियों के उत्थान के लिए अनुकूल परिवेश का निर्माण करती है।
- **सदस्यों में एकता:** सहकारी आंदोलन ग्रामीण क्षेत्रों के सर्वांगीण विकास में सहायता करते हैं, जो सदस्यों के मध्य एकता, विश्वास और सामंजस्य के माध्यम से ही संभव है। यह परस्पर सहायता और साझाकरण पर आधारित संगठन है।
- **वर्ग संघर्ष से परे:** यह सामाजिक आधार पर विभाजित देश में वर्ग संघर्ष और सामाजिक विभेदन को कम करने में सहायक है।
- **लोकतांत्रिक मूल्यों को प्रोत्साहन:** स्व-सहायता, लोकतंत्र, समानता और एकजुटता के मूल्यों को प्रोत्साहित करते हैं। सहकारी सदस्य ईमानदारी, खुलेपन एवं सामाजिक उत्तरदायित्व और दूसरों की सहायता करने जैसे नैतिक मूल्यों में विश्वास रखते हैं।

भारत में सहकारी समितियों द्वारा सामना की जाने वाली चुनौतियाँ

- **सक्रिय सदस्यता सुनिश्चित करने में असमर्थता**, समितियों का उपयोग न करने वाले सदस्यों द्वारा सदस्यता का त्वरित त्याग करना, सदस्यों के मध्य संचार और जागरूकता निर्माण के उपायों की कमी।
- बोर्ड की भूमिकाओं और उत्तरदायित्वों से संबंधित विषयों सहित **शासन से संबंधित गंभीर अयोग्यताएं**।
- विशेष रूप से सदस्य इक्विटी और सदस्य हिस्सेदारी के वर्धन के संबंध में **पूंजी निर्माण के लिए विशेष प्रयासों का अभाव** है।
- कार्मिकों की अधिकता के कारण **लागत प्रतिस्पर्धा क्षमता** और भारतीय बाजार में बहुराष्ट्रीय कंपनियों के प्रवेश के कारण समग्र **प्रतिस्पर्धा क्षमता का अभाव**।
- मुख्यतः सहकारी अधिनियमों की त्रुटियों और प्रतिबंधात्मक प्रावधानों के कारण सहकारी समितियों की कार्यप्रणाली में **सरकार का अत्यधिक हस्तक्षेप और इनका राजनीतिकरण**।
- **सहकारी वित्त प्रणाली का महत्वपूर्ण अंग सहकारी बैंक है, जो स्वयं वित्तीय संकट का सामना कर रहे हैं।** इनका आकार इतना लघु होता है कि इनका उचित रूप से संचालन करना अत्यधिक कठिन है साथ ही इनमें से कुछ तो केवल कागजों पर ही मौजूद हैं।
- सहकारी बैंकों की गैर-निष्पादित परिसंपत्तियां (NPAs) वाणिज्यिक बैंकों की NPAs (अर्थात NPA टू एसेट रेश्यो) की तुलना में उच्च हैं।
- **कार्यसंचालन में अपेक्षा से कम शेयरधारकों की भागीदारी** के साथ-साथ, ये बैंक अवसंरचनात्मक कमियों का भी सामना कर रहे हैं, जिससे सहकारी समितियों की संपूर्ण कार्यप्रणाली बाधित होती है।

VISION IAS

- **सहकारी आंदोलन से संबंधित क्षेत्रीय विविधताएं** - सहकारी समितियों द्वारा उन क्षेत्रों में बेहतर भूमिका का निर्वहन किया गया है जहां भूमि सुधार पर्याप्त सफल रहा था। हालांकि, कुछ सबसे उपजाऊ और आबादी वाले क्षेत्रों में सहकारी समितियों की सीमित सफलता जनसांख्यिकीय एवं सांस्कृतिक कारकों के साथ संबद्धता को प्रदर्शित करती है।

आगे की राह

- सहकारी समितियों में, ऐसे क्षेत्रों में वस्तुओं और सेवाओं के वितरण की अपार संभावनाएं विद्यमान हैं जहाँ राज्य एवं निजी क्षेत्र दोनों विफल रहे हैं। कृषि और इससे संबद्ध क्षेत्र सहकारी आंदोलनों की वृहद् भूमिका से व्यापक रूप से लाभान्वित हुए हैं।
- हालांकि, सदस्यों को यह अनुभव करना चाहिए कि उनकी निरंतर सतर्कता ही सहकारी समितियों की स्वायत्तता, स्वतंत्रता और प्रगति को सुनिश्चित कर सकती है। इस आंदोलन को जन आंदोलन के रूप में विकसित करना आवश्यक है तथा इसे सुनिश्चित करने के लिए निम्नलिखित कदम उठाए जा सकते हैं यथा-
    - प्रतिवर्ष सहकारी समितियों के सदस्यों द्वारा आवश्यक भागीदारी के न्यूनतम स्तर को परिमाणित करने वाले प्रावधानों को संबंधित विधियों में उपबंधित करना।
    - सदस्यों की लोकतांत्रिक भागीदारी की रूपरेखा को कानूनी रूप से निर्दिष्ट करना।
    - प्रभावी नेतृत्व विकसित करना जो सहकारी समितियों के अनुकूल सरकार के नीति निर्माण को उचित रूप से प्रभावित कर सके।
    - व्यावसायिकता को प्रोत्साहित किया जाना चाहिए क्योंकि यह विचारों/नीतियों को वास्तविक परिणामों में परिवर्तित करने हेतु आवश्यक है।
    - सहकारी समितियों में सुदृढ़ मानव संसाधन प्रबंधन प्रथाओं जैसे भर्ती, प्रशिक्षण, सामाजिक सुरक्षा आदि को सुनिश्चित करने के लिए प्रभावी व्यवस्था की जानी चाहिए।

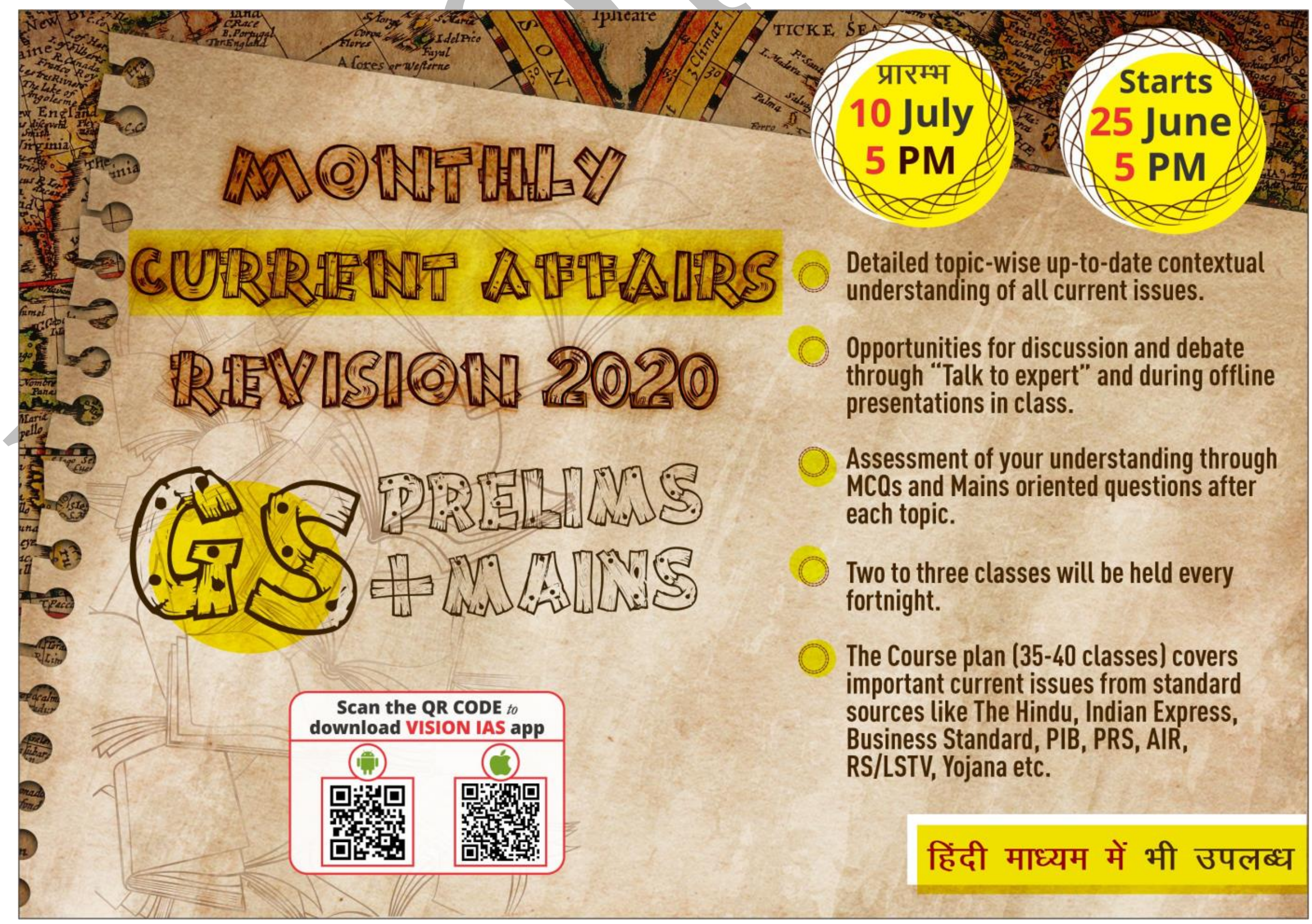

VISION IAS

9. स्थानीय शासन (Local Governance)

9.1. ग्राम पंचायत विकास योजना

(Gram Panchayat Development Plan: GPDP)

सुर्ख़ियों में क्यों?

हाल ही में, केंद्र सरकार द्वारा संरचित (structured) **ग्राम पंचायत विकास योजनाओं** को तैयार करते समय जमीनी स्तर पर लोगों को शामिल करने हेतु **'सबकी योजना, सबका विकास'** नामक एक अभियान आरम्भ किया गया है।

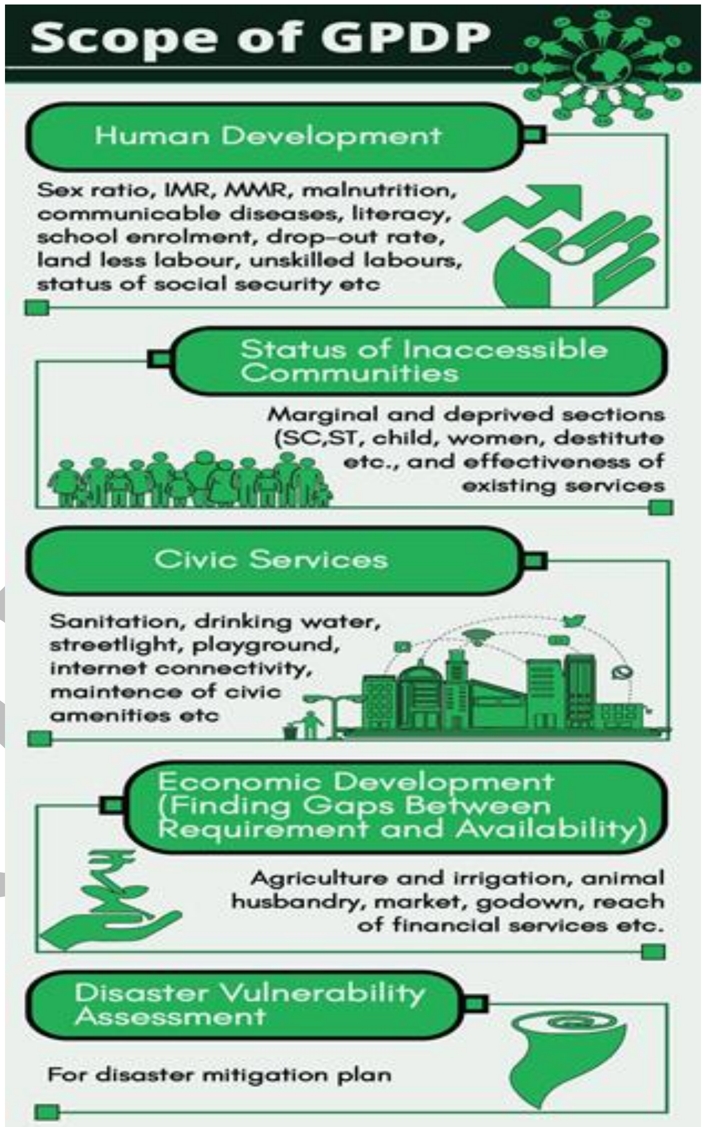

ग्राम पंचायत विकास योजना (Gram Panchayat Development Plan: GPDP) के बारे में:

- यह प्रत्येक पंचायत की एक वार्षिक योजना होती है, जिसके माध्यम से ग्रामीण लोगों द्वारा यह निर्णय लिया जाता है कि धन को कहाँ व्यय किया जाना चाहिए।
- GPDP का उद्देश्य एक प्रभावी ग्राम सभा के तत्वाधान में चयनित 31 लाख पंचायत नेताओं और DAY-NRLM के अंतर्गत स्वयं-सहायता समूहों की 2.5 करोड़ महिलाओं की भूमिका को सशक्त बनाना है।

GPDP का महत्व

- **हितधारक भागीदारी:** किसी भी गतिविधि की सफलता के लिए सभी हितधारकों की भागीदारी के साथ उचित योजना निर्माण महत्वपूर्ण होता है। सामुदायिक भागीदारी के माध्यम से गुणवत्तापूर्ण कार्यों और स्थानीय निवासियों द्वारा स्वीकृति को बढ़ावा मिलता है।
- **ग्राम पंचायत स्तर पर सभी वित्तीय संसाधनों का समेकन:** संसाधनों का समेकन इष्टतम परिणामों को प्राप्त करने में सहायता करता है।
- **विकास कार्य:** सामूहिक दृष्टिकोण के माध्यम से इन्हें प्राथमिकता के आधार पर संपन्न किया जाता है। यह हाशिये पर स्थित लोगों तक पहुंचने और विशिष्ट समय-सीमा के भीतर विशिष्ट विकास लक्ष्यों को प्राप्त करने में भी सहायता करता है।
- **उत्तरदायी सरकार:** यह PRI (पंचायती राज संस्थाएं) स्तरीय नौकरशाही को सक्रिय बनाती है। साथ ही यह सरकार, ग्राम पंचायतों और स्थानीय निवासियों के मध्य संबंधों को भी सुदृढ बनाती है, जिसके परिणामस्वरूप एक उत्तरदायी सरकार की स्थापना को बढ़ावा मिलता है।

'सबकी योजना, सबका विकास' अभियान के बारे में

- इस अभियान में संरचित **ग्राम पंचायत विकास योजनाओं** को तैयार करते समय जमीनी स्तर पर लोगों को शामिल किया जाएगा।
- विगत कुछ वर्षों में किए गए कार्यों की **विस्तृत लेखा-परीक्षा** को भी इसके अंतर्गत शामिल किया जाएगा।
- इस वर्ष दिसंबर में समाप्त होने वाले इस अभियान के तहत ग्राम पंचायतों को एकत्रित धन के सभी स्रोतों और उनके वार्षिक व्यय को सार्वजनिक रूप से प्रदर्शित करना होगा। साथ ही उन्हें भविष्य की विकास पहलों के बारे में भी सार्वजनिक रूप से बताना होगा।
- इससे ग्राम पंचायत विकास योजनाओं के निर्माण को अधिक व्यवस्थित बनाने में सहायता मिलेगी। ये योजनाएं अब तक व्यापक रूप से अव्यवस्थित ही बनी रही हैं।

मौजूदा GPDP प्रक्रिया के समक्ष विद्यमान कुछ मुद्दे:

- जागरुकता का अभाव और ग्राम सभाओं में लोगों की अपर्याप्त भागीदारी।
- बुनियादी ढांचे में निवेश पर अधिक बल।
- अपर्याप्त सार्वजनिक सेवा वितरण (पब्लिक सर्विस डिलीवरी) और अधिकांश पंचायतों का ई-सक्षम न होना।
- ब्लॉक/जिला/राज्य स्तर पर GPDP की समीक्षा से संबंधित व्यवस्था का विद्यमान न होना।
- ब्लॉक और जिला स्तर पर योजनाओं के एकीकरण का अभाव।
- GPDP को तैयार करने में ग्राम पंचायतों के पास तकनीकी सहायता की कमी के कारण GPDP को वांछित सूची (wishlist) के रूप में तैयार किया जा रहा है।

9.2. स्थानीय निकायों के चुनावों हेतु शैक्षणिक मानदंड

(Education as A Criteria For Local Elections)

सुर्ख़ियों में क्यों?

राजस्थान सरकार ने पंचायती राज चुनावों हेतु **शैक्षणिक मानदंड को समाप्त** कर दिया है।

पृष्ठभूमि

- राजस्थान **पंचायती राज (द्वितीय संशोधन) नियम, 2015** के तहत जिला परिषद्, पंचायत समिति एवं नगरपालिका चुनाव लड़ने वाले प्रत्याशियों के लिए कक्षा 10 उत्तीर्ण करने संबंधी मापदंड को अनिवार्य बना दिया गया था।
- **सरपंच के चुनाव हेतु प्रत्याशियों** के लिए **कक्षा 8** उत्तीर्ण करना तथा **अनुसूचित क्षेत्रों की पंचायतों में सरपंच के चुनाव हेतु प्रत्याशियों के लिए कक्षा 5 उत्तीर्ण करना** अनिवार्य किया गया था।
- हरियाणा सरकार द्वारा अधिनियमित कानून की संवैधानिक वैधता को उच्चतम न्यायालय में **राजबाला बनाम हरियाणा सरकार वाद** में चुनौती दी गई थी। इस मामले में न्यायालय ने राज्य में पंचायत चुनाव लड़ने से अशिक्षित व्यक्ति को रोकते हुए इस कानून की वैधता को बरकरार रखा था।
- उच्चतम न्यायालय ने निर्णय दिया कि **चुनाव लड़ने का अधिकार** (Right to Contest) न तो मूल अधिकार है, न ही केवल वैधानिक अधिकार, अपितु यह एक संवैधानिक अधिकार है। इसके अतिरिक्त, सक्षम विधान-मंडल द्वारा पारित कानूनों के माध्यम से **चुनाव लड़ने के अधिकार को विनियमित एवं सीमित किया जा सकता है।**
- उच्चतम न्यायालय की यह व्याख्या इस तथ्य पर आधारित है कि स्थानीय निकायों में निर्वाचित अशिक्षित या निरक्षर लोगों को उनकी निरक्षरता के कारण अधिकारियों द्वारा सरलता से गुमराह किया जा सकता हैं।

पंचायती राज चुनाव

- 1992 में 73वें एवं 74वें संविधान संशोधन अधिनियम द्वारा स्थानीय स्तर पर शासन के तृतीय स्तर के रूप में पंचायती राज संस्थाओं के गठन संबंधी प्रावधान को अनिवार्य बनाया गया था।
- भारतीय संविधान के **अनुच्छेद 243(K)(4)** के तहत राज्य सरकारें विधि द्वारा स्थानीय निकायों के चुनावों के लिए योग्यता (अहर्ता) निर्धारित कर सकती हैं।
- **अनुच्छेद 243(O)** निर्वाचन संबंधी मामलों में न्यायालयों के हस्तक्षेप को प्रतिबंधित करता है। यदि पंचायतों के निर्वाचन संबंधी कोई विवाद उत्पन्न होता है, तो न्यायालयों को इन विवादों के संबंध में कोई अधिकार प्राप्त नहीं है।
- किसी पंचायत के लिए किसी निर्वाचन को ऐसी निर्वाचन अर्जी के माध्यम से ही प्रश्नगत किया जा सकता है, जो ऐसे प्राधिकारी को प्रस्तुत की गयी है जिसका किसी राज्य के विधान-मण्डल द्वारा बनाई गयी किसी विधि द्वारा उपबंध किया गया हो।
- हरियाणा सरकार द्वारा पंचायत चुनाव में भाग लेने वाले प्रत्याशियों हेतु न्यूनतम योग्यता को निर्धारित करने के लिए **हरियाणा पंचायती राज (संशोधन) अधिनियम, 2015** पारित किया गया था।
- असम एव उत्तराखंड जैसे राज्यों ने भी स्थानीय निकायों के चुनाव लड़ने के लिए न्यूनतम शैक्षणिक मानदंड को निर्धारित करने वाले कानूनों का निर्माण किया हैं।

शैक्षणिक मानदंड के विरुद्ध तर्क

- **स्थानीय स्तर के लोकतंत्र के विरुद्ध:** जब MLA या MP बनने के लिए कोई न्यूनतम शैक्षणिक मानदंड लागू नहीं किए गए हैं, तब पंचायत चुनावों हेतु इस प्रकार का मानदंड निर्धारित करना अनुचित है।

VISION IAS

- **अनुपयुक्त फोकस:** विशेषज्ञों के अनुसार एक निर्वाचित जन प्रतिनिधि की प्राथमिक भूमिका अपने मतदाताओं के विचारों/मुद्दों को प्रशासन या सरकार के समक्ष प्रस्तुत करना होता है, उनसे प्रशासन की सूक्ष्मताओं में पारंगत होने की अपेक्षा नहीं की जाती है।
- **महिलाओं और कमजोर वर्गों के प्रति भेदभाव:** चूंकि सामाजिक एवं ऐतिहासिक कारणों से दलितों, जनजातीय लोगों एवं महिलाओं में साक्षरता की दर कम है, इसलिए इस कानून द्वारा बृहत् संख्या में दलितों एवं महिलाओं को चुनाव लड़ने से वंचित कर दिया गया था।
- **बहिष्करण संबंधी कदम:** इस मानदंड के परिणामस्वरूप (2011 की जनगणना के अनुसार) राजस्थान में 20 वर्ष से अधिक आयु वाली कुल ग्रामीण जनसंख्या का 70 प्रतिशत से अधिक भाग सरपंच का चुनाव लड़ने से वंचित हो गयी। यह पंचायती राज संस्थाओं के मूल उद्देश्य अर्थात् समाज के सभी वर्गों से नागरिकों को बहु-स्तरीय स्थानीय शासन में शामिल करने, का उल्लंघन करता है।
- **उत्तरदायित्व का त्याग:** यह शैक्षणिक मानदंड कुछ सामाजिक संकेतकों की पूर्ति करने में विफल होने के परिणामस्वरूप लोगों को दंडित करता है। जबकि वास्तविक तौर पर देखें तो स्कूल एवं प्रौढ़ शिक्षा हेतु अवसंरचना एवं प्रोत्साहन प्रदान करना राज्य का उत्तरदायित्व है।

शैक्षणिक मानदंड के पक्ष में तर्क

- **प्रगतिशील विधान:** यह लोगों को शिक्षा पर ध्यान केंद्रित करने के लिए प्रोत्साहित करेगा। साथ ही यह अशिक्षित लोगों को भी अधिक आयु होने के बावजूद अब न्यूनतम शिक्षा प्राप्त करने हेतु प्रेरित करेगा।
- **समय की मांग:** यह कदम सांसदों एवं विधायकों के लिए भी शैक्षणिक मानदंड निर्धारित करने की मांग को प्रोत्साहित करेगा। वर्तमान समय में, शासन एक जटिल मुद्दा बन गया है तथा हमें अपने प्रतिनिधि के रूप में शिक्षित लोगों को चयनित करना चाहिए।
- **सामाजिक संकेतकों में सुधार:** विभिन्न विशेषज्ञों का तर्क है कि शैक्षणिक मानदंड की मौजूदगी से बाल विवाह, कन्या भ्रूण हत्या आदि में कमी होगी तथा स्वास्थ्य एवं कल्याण जैसे अन्य सामाजिक संकेतकों में सुधार होगा। पहले से लागू दो बच्चों वाले मानदंड के कारण कई राज्यों में प्रजनन दर में कमी हुई है।
- **रोल-मॉडल इफ़ेक्ट:** राज्यों का तर्क है कि यह कदम रोल-मॉडल इफ़ेक्ट को बढ़ावा देगा और निर्वाचन क्षेत्रों में नागरिक अपने पंचायत नेताओं का अनुकरण करेंगे, जिससे सामाजिक प्रगति में वृद्धि होगी।

निष्कर्ष

- भारतीय संविधान के जनक डॉ. बी. आर. अंबेडकर ने साइमन कमीशन (1928) को दिए गए अपने ज्ञापन में कहा था कि, *"जो व्यक्ति साक्षरता को एक परीक्षण के रूप में देखते हैं तथा मताधिकार हेतु इसे एक शर्त के रूप में लागू करने पर बल देते हैं, वे मेरी राय में, दो गलतियां करते हैं। उनकी पहली गलती उनके विचार में निहित है और वह यह है कि एक अशिक्षित व्यक्ति आवश्यक रूप से एक नासमझ व्यक्ति होता है ... उनकी दूसरी गलती यह है कि साक्षर व्यक्ति अशिक्षित व्यक्ति की तुलना में बुद्धिमत्ता या ज्ञान को आवश्यक रूप से सुनिश्चित करता है..."।*
- इस निर्णय को उन विधियों एवं साधनों की खोज करने संबंधी वाद-विवाद को एक नई भूमिका प्रदान करने पर बल देना चाहिए जिससे निर्वाचित निकायों को अधिक प्रतिनिधिक बनाया जा सके। यह इसलिए महत्वपूर्ण है क्योंकि यह धारणा कि पितृसत्तात्मकता जो व्यक्ति को एक 'अच्छा' उम्मीदवार बना सकती है, स्थानीय स्तर पर स्व-शासन को सुनिश्चित करके लोकतंत्र को सुदृढ़ बनाने की भावना के विरुद्ध है।

Copyright © by Vision IAS
All rights are reserved. No part of this document may be reproduced, stored in a retrieval system or transmitted in any form or by any means, electronic, mechanical, photocopying, recording or otherwise, without prior permission of Vision IAS.